ISSN 2456-4818

अक्टूबर-दिसंबर 2022

वर्ष: 54 अंक: 4

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद की पत्रिका

वायुमंडल की परतें

बाह्यमंडल
700 से 190,000

तापमंडल
80 से 700 किमी

कारमन रेखा

मध्यमंडल
50 से 80 किमी

समतापमंडल
12 से 50 किमी

ओजोन रेखा

क्षोभमंडल
0 से 12 किमी

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद - कार्यकारिणी समिति 2021-23

अध्यक्ष
श्री दीनानाथ सिंह

सचिव
डॉ. कुलवंत सिंह

उपाध्यक्ष
श्री राकेश कुमार सिंह

कोषाध्यक्ष
श्री शैलेन्द्र कुमार सिंह

सह-सचिव
डॉ. डेझी जोसेफ

सदस्य
श्री नरेंद्र करनानी

वार्ता संयोजक
श्री वैभव घोलप

संयुक्त कोषाध्यक्ष
श्री अखिलेश मिश्र

सदस्य
श्री यतिन ठाकुर

सदस्य
श्री कपिल गुप्ता

सदस्य
श्रीमती प्रगति शुक्ला

सदस्य
श्री धर्मराज मौर्य

सदस्य
श्रीमती सोनल शर्मा

सदस्य
डा. मनप्रीत बसन

सहयोजित सदस्य
श्री शिवदास महतो

सहयोजित सदस्य
सुश्री रानी सिंह

परिचय: वैज्ञानिक परामर्श मंडल

डॉ. आनंद कुमार शर्मा: डॉ. आनंद कुमार शर्मा इसरो के पूर्व विशिष्ट वैज्ञानिक हैं. 1984 में दिल्ली विश्वविद्यालय से डॉक्टरेट प्राप्त की. 1985 में इसरो उपग्रह केंद्र में शामिल हुए और 31 अगस्त, 2019 को सेवानिवृत्त हुए. 2016 से 2019 तक वर्ल्ड एसोसिएशन ऑफ न्यूक्लियर ऑपरेटर्स-WANO, लंदन की वाह्य सलाहकार समिति में सदस्य के रूप में कार्य किया है. कई अकादमिक निकायों के फेलो हैं और अनेक प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित हैं. श्री वीरभद्र नगर, मारातहल्ली, बैंगलोर-560037.

प्रोफेसर रमेश सोमवंशी: पूर्व इमेरिटस प्रोफेसर, भाकृअप-भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, बरेली. एमवीएससी, पीएचडी, एफआरसीवीएस (उप्साला, स्वीडन), डीआईसीवीपी, पशु रोग विशेषज्ञ, मानद सचिव, डॉ. सी.एम. सिंह एंडोमेंट ट्रस्ट, पूर्व कार्यवाहक संयुक्त निदेशक, CADRAD, पूर्व प्रमुख, पैथोलॉजी विभाग, भूतपूर्व आईसीएआर-नेशनल फेलो, भूतपूर्व आईसीएआर-एमेरिटस प्रोफेसर, भूतपूर्व आईसीएआर-एमेरिटस वैज्ञानिक और भूतपूर्व अध्यक्ष, आईएवीपी, भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर, बरेली- 243122.

डॉ. ललित मोहन पंत: अध्यक्ष, तकनीकी भौतिकी प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई. विशेषज्ञ: भारी आयन प्रेरित संलयन-विखंडन प्रक्रियाएं, विखंडित खंडो के लिए आयनीकरण कक्षों और MWPC और न्यूट्रॉन-गामा पृथक्करण के लिए तरल सिंटिलेटर का विकास, Pion बीम प्रोफाइल और तीव्रता मापन के लिए सिंटिलेटिंग फाइबर डिटेक्टर का निर्माण, प्रतिरोधक प्लेट कक्षों और गैस इलेक्ट्रॉन गुणकों का विकास और निर्माण, रिएक्टर एंटी-न्यूट्रिनो डिटेक्शन.

डॉ. सत्यजीत चौधरी: अध्यक्ष, ईंधन रसायन प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई. विशेषज्ञ: एनालिटिकल ठोस अपशिष्ट स्लैग से अमरिशियम, प्लूटोनियम, यूरेनियम और थोरियम प्राप्ति, HF के बिना PuO_2 और ThO_2 विलय की अभिनव विधि, सल्फेट अपशिष्ट का प्रबंधन, एक्टिनाइड्स प्रसंस्करण.

डॉ. हरीश जगत पंत: अध्यक्ष, आइसोटोप और विकिरण अनुप्रयोग प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई. विशेषज्ञ: निम्नलिखित अनुप्रयोगों के लिए रेडियोट्रैसर तकनीकों का विकास एवं अनुप्रयोग- बंदरगाहों में तलछट परिवहन, उच्च दाब ताप-विनिमायकों में ऑनलाइन रिसाव का पता लगाना, रासायनिक रिएक्टरों में अवस्थान काल वितरण मापन और विश्लेषण, प्रवाह दर माप, पोतीय पेंट की घर्षण दर, प्रवाह-दृश्य के लिए रेडियोधर्मी कण ट्रैकिंग तकनीक, औद्योगिक प्रक्रिया स्तंभों में समस्या निवारण के लिए गामा स्कैनिंग तकनीक, मल्टीफेज फ्लो सिस्टम में होल्डअप मापन के लिए रेडियो तकनीक

डॉ. सूर्यकांत गुप्ता: औद्योगिक प्लाज्मा प्रौद्योगिकी- सुविधा केंद्र, प्लाज्मा अनुसंधान संस्थान, गांधीनगर, गुजरात. विशेषज्ञ: जल उपचार के लिए पर्यावरण अनुकूल प्रौद्योगिकी, प्लाज्मा प्रौद्योगिकी, इलेक्ट्रिकल और इलेक्ट्रॉनिक्स इंजीनियरिंग, उच्च वोल्टेज इंजीनियरिंग, इंस्ट्रुमेंटेशन और नियंत्रण इंजीनियरिंग, सिस्टम ऑटोमेशन, स्पंदित पावर सप्लाई. एमएस [इलेक्ट्रॉनिक्स और संचार]- डीएवीवी इंदौर; पीएचडी- जल उपचार हेतु प्लाज्मा प्रौद्योगिकी, KIT, जर्मनी; शिक्षा उत्कृष्टता पुरस्कार, हिंदीसेवी पुरस्कार, सर्वश्रेष्ठ पेपर प्रस्तुति पुरस्कार.

वैज्ञानिक : सम्पादन मंडल

वैज्ञानिक

वर्ष - 54 अंक - 4

अक्टूबर - दिसंबर 2022

सदस्यता शुल्क आजीवन
व्यक्तिगत : रु 1000
संस्थागत : रु 2000
भुगतान : स्टेट बैंक आफ इंडिया
खाता संख्या : 34185199589
IFS Code : SBIN0001268
कृते: हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद
Pay to: Hindi Vigyan Sahitya Parishad
कृपया सदस्यता हेतु भुगतान की रसीद ईमेल से/ चेक अपने पते के साथ पत्राचार के पते पर भेजें.

पत्राचार: 2601, विंग-3, लोढ़ा अमारा, कोलशेट रोड, थाने-400607 महाराष्ट्र
hvsp.sachiv@gmail.com

सभी पद अवैतनिक हैं

वैज्ञानिक में छपी रचनाओं का दायित्व लेखकों का है.

मूल्य रु 50/-

अनुक्रमणिका

संपादकीय

बौद्धिक संपदा

देश में बौद्धिक संपदा अधिकार व्यवस्था को मजबूत करने के लिए सरकार द्वारा उठाए गए कदमों के कारण देश में पेटेंट फाइलिंग की संख्या बढ़कर 2021-22 में 66,440 हो गई है. भारत में पेटेंट दाखिल करने में पिछले कुछ वर्षों में क्रमिक वृद्धि हुई है. भारत में दायर पेटेंट की संख्या 2010-11 में 39,400, 2014-15 में 42,763, 2016-17 में 45,444 और 2020-21 में 58,502 थी. लेकिन यह संख्या चीन, अमेरिका, जापान इत्यादि कई देशों से बहुत कम है. इन तीनों देशों में प्रति वर्ष पेटेंट फाइल करने की संख्या क्रमशः लगभग 15 लाख, 6 लाख और 3 लाख है. भारत अभी बहुत पीछे है.

Country	2020 Rank	2020 Patent applications
China	1	1,497,159
U.S.	2	597,172
Japan	3	288,472
South Korea	4	226,759
European Patent Office	5	180,346
Germany	6	62,105
India	7	56,771
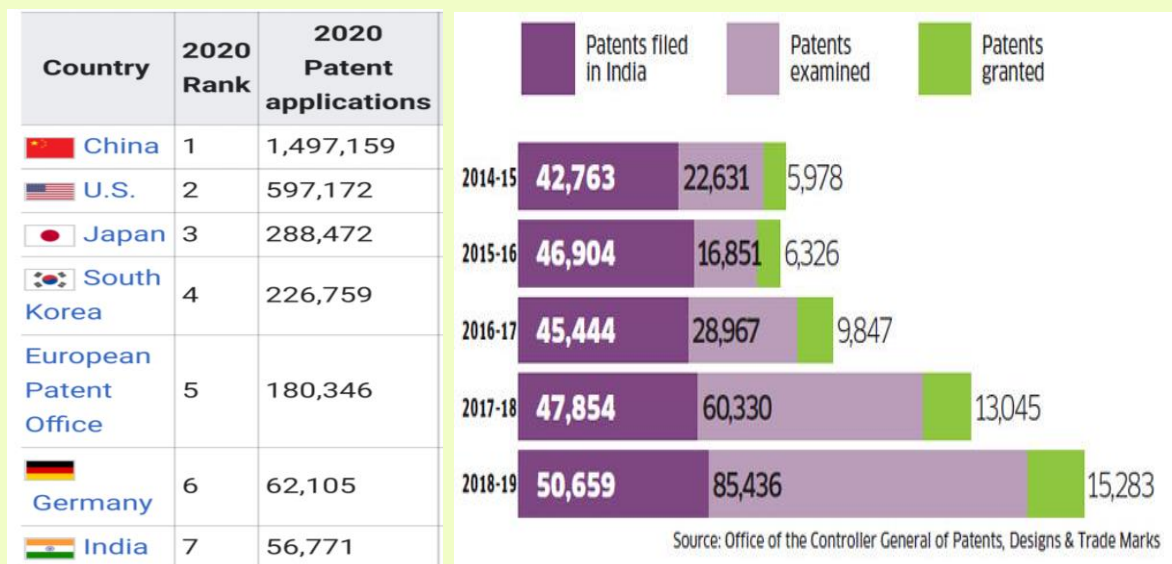
पेटेंट स्वीकृति में, भारत, जो कि बहुत पीछे था, लगातार वृद्धि जारी है. भारत ने 2014-15 में 5,978 की तुलना में 2021-22 में 30,074 पेटेंट स्वीकृति किये. यह उल्लेखनीय प्रगति है, लेकिन यहां भी हम वैश्विक रैंक में बहुत पीछे हैं. चीन, अमेरिका, जापान और कोरिया में दिए गए पेटेंट की तुलना में भारत में दिए गए पेटेंट की संख्या अभी भी एक अंश है. 2021 में चीन ने 6.96 लाख, अमेरिका ने 3.3 लाख और जापान ने 2.9 लाख पेटेंट प्रदान किये. विश्व बौद्धिक संपदा संगठन (WIPO) के अनुसार, चीन, अमेरिका, जापान, कोरिया में दिए गए पेटेंट की संख्या 2020 के लिए क्रमशः 5.30 लाख, 3.52 लाख, 1.79 लाख, 1.35 लाख थी. प्रक्रियात्मक देरी और प्रक्रिया की जटिलता भारत में कम पेटेंट का एक और कारण है.

भारत में पेटेंट के कुल आवेदनों में भारतीय निवासियों की हिस्सेदारी 2010-11 में 20 प्रतिशत से बढ़कर, 2016-17 में लगभग 30 प्रतिशत और 2020-21 में 40 प्रतिशत हो गई है, और इसके परिणाम स्वरूप, **ग्लोबल इनोवेशन इंडेक्स** में भारत की रैंकिंग 40 चढ़ गई है - 2015 में 81वें स्थान से बढ़कर 2022 में 40वें स्थान पर. इतना ही नहीं, 11 वर्षों में पहली बार, घरेलू पेटेंट फाइलिंग की संख्या जनवरी-मार्च 2022 के दौरान भारत में अंतरराष्ट्रीय पेटेंट फाइलिंग की संख्या को पार कर गई है (>50 प्रतिशत). यह एक उल्लेखनीय प्रगति है और इस दिशा में हमें और प्रयत्न कर आगे बढ़ते रहना है.
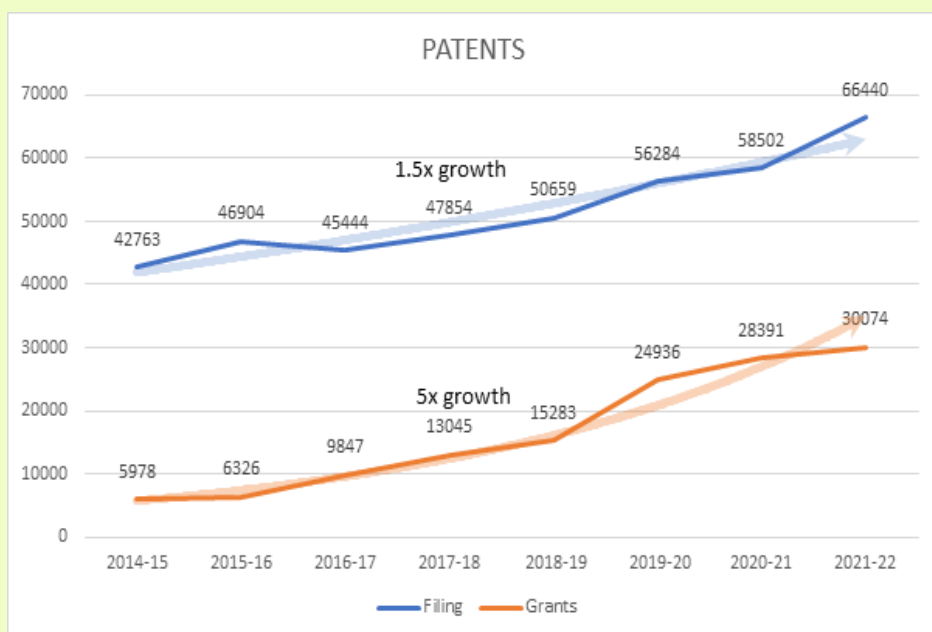
भारत में पिछले कुछ वर्षों में पेटेंट आवेदन और स्वीकृति पेटेंट की संख्या

भारत में पेटेंट प्रदत्त करने (अंतिम निर्णय) तक लगने वाला समय 2020 तक 42 महीने था. यह समय बहुत अधिक है. संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, कोरिया और जापान के लिए यह समय क्रमशः 20.8, 20, 15.8 और 15 महीने है. हालांकि भारत में पेटेंट प्राप्त करने में अंतिम निर्णय के लिए लगाने वाला औसत समय जोकि 2017 में 64 महीने था, घटकर 2019 में 52 महीने और 2020 में 42 महीने हो गया है. विभिन्न तकनीकी क्षेत्रों के लिए पेटेंट परीक्षण का समय वर्तमान में 5-23 महीने कर दिया गया है, ऐसा वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय ने प्रेस रिलीज में कहा.
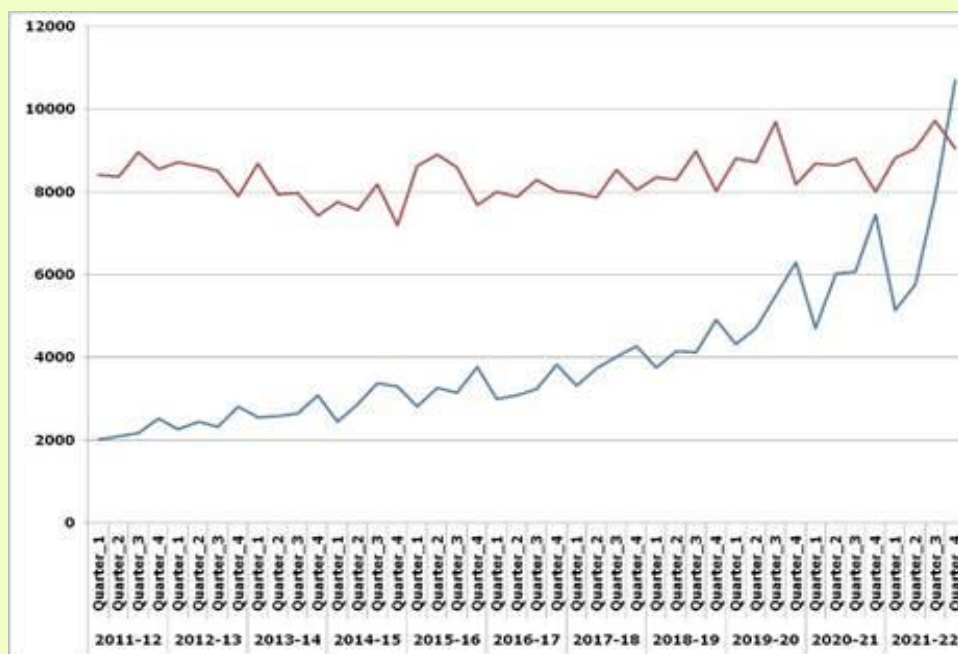
11 वर्षों में पहली बार, घरेलू पेटेंट फाइलिंग की संख्या (नीली रेखा) जनवरी-मार्च 2022 के दौरान भारत में अंतरराष्ट्रीय पेटेंट फाइलिंग (भूरी रेखा) की संख्या को पार कर गई है.

कुलवंत सिंह

कणाद के कण

प्रो. अनिल कुमार

जन्म: 6 जुलाई 1951; छपरा (बिहार), शिक्षा: एम. एससी. (भौतिकी), पीएच.डी. (परमाणु-भौतिकी), जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा से जुलाई 2016 में प्रोफेसर एवं पूर्व अध्यक्ष के रूप में अवकाश ग्रहण, 40 से ज्यादा अंतर्राष्ट्रीय शोध प्रकाशन, कई संस्थाओं से जुड़े एवं विभिन्न पुरस्कारों से सम्मानित, सम्प्रति पटना में निवास, उच्चतर शोध, अध्ययन एवं अध्यापन: फ्रांस सरकार की पोस्ट-डॉक अध्येतावृति, राईस विश्वविद्यालय, ह्यूस्टन (स० रा० अमेरिका), एवं फामु, टलाहास्सी, फ्लोरिडा (स० रा० अमेरिका) पोस्ट-डॉक अध्येतावृति-सह-व्याख्याता के रूप में कार्यरत रहे.

शायद आप जानते हों कि ब्रह्मांड की उत्पत्ति लगभग पौने चौदह अरब वर्ष पूर्व हुई; पृथ्वी तो मात्र साढ़े चार अरब साल पुरानी है. उसकी उत्पत्ति के एक अरब वर्ष पश्चात जीवन की शुरुआत हुई, फिर जीवों में होते उत्तरोत्तर विकाश-शृंखला के अंत में आया मनुष्य जो केवल 2 लाख वर्ष पूर्व इस धरती पर अवतरित हुआ. मगर तब के आदि मानव को अपनी 'पशुता' त्यागने में बहुत समय लगा, तकरीबन छः हजार वर्ष पूर्व ही 'सभ्य' हो पाया वह. उस समय से आज तक मानव प्रजाति ने कितनी सभ्यताओं को बनते और बिगड़ते देखा है; उसके पूर्व भी पृथ्वी पर विनाश और पुनर्निर्माण की प्रक्रिया चलती रही है. इस संदर्भ में एक उल्लेखनीय समय-अवधि कुछ करोड़ वर्ष पुरानी है जब पृथ्वी पर दानवाकार छिपकली प्रजाति के डायनासोरों (Dinosaurs) का साम्राज्य था. पृथ्वी से एक छुद्र गृह (Asteroid) की टक्कर ने इस विशालकाय प्रजाति का समूल नाश कर दिया. अब आप सोचिए कि यदि कोई ऐसी ही घटना या कोई अन्य प्राकृतिक आपदा सम्पूर्ण मानव जाति का विनाश कर दे तो उसके संग हमारी सभ्यता, हमारे अर्जित ज्ञान-विज्ञान, सब नष्ट हो जाएंगे. मगर पृथ्वी बची रही तो एक बार फिर उपर्युक्त जीवन-चक्र प्रारंभ तो होगा ही. आने वाली संतति को फिर से शून्य से प्रारंभ न करना पड़े, इसके लिए आवश्यक है कि आज के विज्ञान की सबसे महत्वपूर्ण सूचना उनके लिए सुरक्षित रख ली जाए. अब यहाँ एक असहज बनाने वाला प्रश्न उत्पन्न होता है, "आज उपलब्ध बेशुमार वैज्ञानिक तथ्यों में से यदि किसी एक जानकारी को बचाकर उन्हें भावी संतति को सौंपने का अवसर मिले तो आप किसे चुनेंगे?" चिंतित न हों; यह प्रश्न प्रसिद्ध भौतिकीविद एवं नोबेल पुरस्कार विजेता ***रिचर्ड फाइनमैन (Richard Feynman)*** ने एक बार अपने व्याख्यान में उपस्थित श्रोताओं से पूछा था, और फिर उसका उत्तर भी स्वयं दिया - मेरे अनुसार वह है पदार्थ की परमाणु-परिकल्पना जो बतलाता है कि सारी वस्तुएं परमाणुओं से बनी हैं; सूक्ष्म आकार के परमाणु जो सतत गतिमान रहते हैं, एक-दूसरे को आकर्षित करते हैं जब उनके बीच थोड़ी दूरी बनी रहती है और परस्पर विकर्षण लगाते हैं जब हम उन्हें अत्यंत निकट लाने की कोशिश करते हैं." यह एक जानकारी काफी है विनाश के बाद पुनर्निर्माण के लिए; साथ ही यह कथन परमाणु के महत्व को भी रेखांकित करता है. आज उसी सूक्ष्म कण पर हम विचार करेंगे, यद्यपि आप के मन में एक कौतूहल भी उत्पन्न हो सकता है – परमाणु क्यों? तो थोड़ा इंतजार करें.

यह सच है कि इन कणों से विज्ञान जगत ही नहीं सामान्य जन भी अच्छी तरह परिचित हैं, मगर फिर भी आप से यदि मैं पूछूँ कि परमाणु की परिकल्पना सबसे पहले किस ने दी तो शायद आप सही उत्तर न दे सकें. कारण है यूरोप-केन्द्रीय (Euro-centric) लेखकों द्वारा लिखा गया विज्ञान का इतिहास, जो पूरी तरह निष्पक्ष नहीं है. उन लेखकों ने पश्चिमी सभ्यता से प्रतिपादित वैज्ञानिक तथ्यों को तो महत्व दिया पर भारत एवं यूनान (आज का ग्रीस) जैसे प्राचीन सभ्यता के चिंतकों की गूढ़ बातों को अनदेखा कर

दिया. चलिए वापस लौटते हैं परमाणु पर जिसके बारे में यही बतलाया जाता है कि इसकी प्रथम परिकल्पना एक अंग्रेज वैज्ञानिक **जॉन डाल्टन (1766 – 1844)** ने की. लेकिन क्या इसके पहले दुनिया को इस विषय में कोई जानकारी नहीं थी? बात कुछ जँचती नहीं; जब विश्व यूनान एवं भारत को ज्ञान-विज्ञान की जननी मानता है; स्वीकार करता है कि ये ही उन क्षेत्रों में से एक थे जहां आधुनिक सभ्यता और संस्कृति जन्मी और पनपी, तब क्या वहाँ के दार्शनिकों ने अपने परिवेश की वस्तुओं के मौलिक तत्वों को खोजने की कोशिश नहीं की होगी?

आइये यहाँ एक डिटूर (detour) लेते हैं और विचार करते हैं दो शब्दों पर, वे शब्द हैं - दर्शन और विज्ञान. प्राचीन काल में ये दोनों अलग अलग विषय नहीं थे; पूरी प्रकृति ही विज्ञान की प्रयोगशाला थी, वहाँ घटित घटनाओं का अवलोकन, विश्लेषण, तत्पश्चात उन्हें नियमबद्ध करने का प्रयास वैज्ञानिकों और दार्शनिकों का मुख्य कार्य हुआ करता था. प्राचीन इतिहास को देखा जाये तो उपर्युक्त दोनों सभ्यताओं में इस विषय पर गहन चिंतन-मनन का प्रमाण मिलता है, जैसे **ईसा पूर्व 460-370** (460-370 BC) अवधि में यूनान (Greece) के दो प्रमुख चिंतकों, **लियूकीप्पस (Leucippus) एवं डेमोक्रिटस (Democritus)** ने परमाणु विषय पर महत्वपूर्ण शोध किये, लोक-सुलभ वैज्ञानिक आलेखों में इनके द्वारा प्रतिपादित परमाणु विश्लेषण की चर्चा मिलती है. यहाँ इस बात को भी जानने की आवश्यकता है कि यह समय-अंतराल गौतम बुद्ध काल (जन्म 563 ईसा पूर्व – निर्वाण 483 ईसा पूर्व) के बाद का है. गौतम बुद्ध ने अपने धर्मोपदेश में भी इस शब्द की चर्चा कई बार की है जो बतलाता है कि उनके जीवन काल में परमाणु के विषय में लोगों को जानकारी थी. वास्तव में लियूकीप्पस (Leucippus) एवं डेमोक्रिटस (Democritus) द्वारा प्रदत्त परमाणु विश्लेषण के पूर्व प्रसिद्ध भारतीय दार्शनिक आचार्य कश्यप, जिन्हें बाद में महर्षि कणाद के नाम से जाना गया, ने इस विषय पर विस्तार से बातें की थी, मगर यूरोप-केन्द्रीय लेखकों ने उसे भी अनदेखा कर दिया. इसका कारण शायद यह भी हो सकता है कि पश्चिमी सभ्यता ने प्राचीन भारतीय संस्कृति को केवल अध्यात्मवाद से जुड़ा माना. वे भूल गये कि अध्यात्मवाद, जिसे हम आत्म-तत्वज्ञान (Metaphysics) भी कहते हैं, की पहली सीढ़ी विज्ञान ही है; अंग्रेजी के दो शब्दों का प्रयोग करते हुए मैं कहूँ तो बगैर Physics की यात्रा तय किये आप Metaphysics का लक्ष्य कैसे प्राप्त करेंगे? मगर उन लोगों ने अपनी सोच के अनुसार हमारे संतों द्वारा किए गये मौलिक शोध कार्यों को दो हिस्सों में विभक्त किया, उससे मात्र अध्यात्म को भारतीय दर्शन के रूप में स्वीकार कर लिया और मूल तथ्य, जो शुद्ध विज्ञान था, को किनारे कर दिया. इसी कारण उन्होंने परमाणु के अस्तित्व और उसकी परिकल्पना के लिए डाल्टन को ही पूरा-पूरा श्रेय दे दिया, जबकि इसका असली श्रेय भारतीय दार्शनिक **महर्षि कणाद (600 वर्ष ईसा पूर्व)** और तत्पश्चात दो यूनानी शोधकर्ताओं लियूकीप्पस एवं डेमोक्रिटस को जाता है; हाँ इन बातों के साथ यह तो स्वीकार करना होगा कि आधुनिक वैज्ञानिक जानकारियों का उपयोग करते हुए परमाणु की परिकल्पना को सफलता पूर्वक एक मूर्त रूप प्रदान करने का कार्य डाल्टन ने ही किया.

अब हम बात करेंगे भारतीय दार्शनिक महर्षि कणाद की (मूल नाम आचार्य कश्यप) जिन्होंने प्रकृति की प्रयोगशाला में सामान्य सी घटना का विश्लेषण कर परमाणु के अस्तित्व का अनुमान लगाया. भारतीय संत और दार्शनिक ऋषि कश्यप का जन्म गुजरात राज्य के प्रभास क्षेत्र में हुआ था; यह आज के द्वारका के निकट है. इससे जुड़ी एक रोचक कहानी है कि एक बार कश्यप ऋषि प्रयागराज की तीर्थ यात्रा पर निकले; उनके संग तीर्थ यात्रियों का एक जत्था भी चल रहा था जो रास्ते में फूल-अक्षत (चावल के छोटे-छोटे टुकड़े) अर्पित करता हुआ आगे बढ़ रहा था. जैसा सर्व विदित है हमारी पूजा पद्धति में देवताओं का अभिषेक इन वस्तुओं का अर्पण कर किया जाता है. मगर रास्ते में बिखरते चावल के इन छोटे टुकड़ों ने उनके जिज्ञासु मन को कुछ इस तरह आंदोलित किया कि वे उन टुकड़ों को एकत्र करने लगे. उन्होंने सोचा ये टुकड़े अकेले तो किसी काम के नहीं पर इन्हें यदि पर्याप्त मात्रा में एकत्र किया जाए तो वे एक

व्यक्ति का भोजन बन सकते हैं, और यदि एकत्र किए गये चावल का परिमाण बहुत ज्यादा हो तो एक बहुत बड़े समूह को भोजन दिया जा सकता है. दूसरे शब्दों में चावल के एक कण का भी उतना ही महत्व है जितना उसके विशाल समूह का. कहते हैं उनकी इस हरकत के कारण ही लोगों ने उन्हें कणाद कहना शुरू कर दिया क्योंकि संस्कृत भाषा में किसी वस्तु के सबसे छोटे टुकड़े को कण कहते हैं; और ऐसे बन गये वे आचार्य कश्यप से आचार्य कणाद. मगर आचार्य की जिज्ञासा ने उन्हें इससे परे कुछ और भी सोचने पर मजबूर किया, और इसमें योगदान था एक अन्य घटना का. एक बार शायद भिक्षा में मिले अपने भोजन को हाथों में लिए आचार्य अपनी कुटिया की तरफ बढ़ रहे थे, तभी उन्हें प्रयागराज जाते हुए चावल के बिखरते दानों की याद या गयी. अनायास उन्होंने भोजन को कुतर-कुतर कर फेंकना शुरू कर दिया. स्वाभाविक था कि इस क्रिया में अन्न कण छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजित होते गये और एक ऐसा क्षण भी आया जब उसका विभाजन संभव नहीं था, अन्न का वह टुकड़ा इतना छोटा हो चुका था कि उसे आँखों से देख पाना भी असंभव था. इसी प्रक्रिया ने उनके मन में यह विचार उत्पन्न किया कि किसी भी वस्तु का विभाजन अंत में एक अत्यंत सूक्ष्म कण को जन्म देगा जिससे उसका निर्माण हुआ है; उस कण का और विभाजन संभव नहीं. उसे ही उन्होंने कण या अणु के नाम से पुकारा; और यही था डाल्टन का परमाणु. कणाद के अणु और डाल्टन के परमाणु में अंतर केवल नाम का है.

यहाँ महर्षि कणाद के दर्शन पर थोड़ी चर्चा अपेक्षित है; उन्होंने भारतीय दर्शन में एक विशेष स्कूल की स्थापना की जिसे Vaisheshika School of Indian Philosophy (वैशेषिक दर्शन) के नाम से जाना जाता है; परमाणु पर संस्कृत में लिखे गये उनके मूल पाठ (Text), जिसे वैशेषिक सूत्र या कणाद सूत्र भी कहते हैं, इसी पुस्तक में प्रस्तुत किए गये हैं. यह सही कि इस ग्रंथ को लिखने का प्रत्यक्ष प्रयोजन धर्म का ज्ञान देना था, जो मानव और समाज को उसके अभ्युदय तथा मोक्ष/विनाश की जानकारी देता है. मगर उसी क्रम में महर्षि ने अणु की विशेषताओं से समाज को परिचित कराया और मानवता को परमाणु-सिद्धांत की सर्वप्रथम जानकारी भी दी - यह एक ऐसा तथ्य है जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती. इंडोलॉजी (भारत-सम्बद्ध अध्ययन) के विद्वानों का भी यह मानना है कि इस कारण ही उनके दर्शन को वैशेषिक दर्शन के नाम से पुकारा गया. यहाँ शायद यह बतलाना अपेक्षित है कि आखिर दर्शन-शास्त्र है क्या? इसकी व्याख्या एक ही वाक्य कर देता है – "दृश्यते यथार्थतत्वम अनेन इति" अर्थात वह ग्रंथ जो यथार्थ तत्व (ईश्वर/परम ब्रह्म) के ज्ञान को प्राप्त करने का पथ सुझाये दर्शन है." शायद इसी कारण पश्चिमी विद्वानों को भारतीय दर्शन का आध्यात्मिक पक्ष (उत्पत्ति एवं मोक्ष/विनाश) तो दिखा पर उसमें अंतर्निहित विज्ञान वे नहीं देख पाए या शायद उसकी अनदेखी कर दी. भारतीय दर्शन के प्रति उनके इसी दृष्टिकोण ने उन्हें हमारे आचार्यों और मनिषियों, जो प्रभावशाली आविष्कारक भी थे, के कार्यों का सही मूल्यांकन नहीं करने दिया. इस संदर्भ में ऑस्ट्रेलिया के एक प्रख्यात भारतविद (Indologist) की उक्ति - "भारतीय दर्शन संसार की भौतिक संरचना का प्रभावी कल्पनात्मक (Imaginative) व्याख्या प्रस्तुत करता है जो बहुत हद तक आधुनिक भौतिकी की अद्यतन जानकारियों से मेल खाता है" – ध्यान देने योग्य है.

महर्षि कणाद के अनुसार सृष्टि के सारे पदार्थ इन अत्यंत सूक्ष्म कणों से बने हैं जिनका और अधिक विभाजन नहीं हो सकता. ये परमाणु सूक्ष्मतम, अदृश्य, रासायनिक रूप से अविभाज्य और शाश्वत अर्थात अनश्वर हैं; इनके संयोग से ही अन्य पदार्थों (तत्वों) का निर्माण होता है. यदि कारण और परिणाम (cause and effect) के पदों में बात करें तो ये सूक्ष्म कण कारण हैं और तत्व परिणाम; इन असंख्य सूक्ष्म कणों से मिलकर पदार्थ के निर्माण के कारण को अज्ञात माना गया, स्पष्ट है उसकी जानकारी उन्हें नहीं थी. इस तरह दर्शन के दृष्टिकोण से यह व्याख्या अनास्तिक वृत्ति (atheistic) है; बाद के कुछ दार्शनिकों ने इसका एक आस्तिक स्वरूप भी पेश किया और 'अज्ञात कारण' को ईश्वर माना. खैर, यह विज्ञान और दर्शन का सूक्ष्म अंतर है जो स्वाभाविक भी है. इस तरह कहें तो एक स्थूल प्रयोग

से आचार्य कणाद ने एक सूक्ष्म कण के अस्तित्व का अनुमान लगाया, और कमाल की बात तो यह थी कि अवलोकनों और तर्कों के आधार पर इस चिंतक ने परमाणु के जो गुण बताए वे अद्यतन जानकारियों के काफी निकट हैं. मैं एक बार पुनः दुहराना चाहूँगा कि आचार्य कणाद एक चिंतक (Philosopher) थे, एक वैज्ञानिक (Scientist) थे और प्राचीन काल में इन दोनों विधाओं में कोई अंतर था ही नहीं.

कणाद के अनुसार परमाणुओं के जुड़ने से नए पदार्थों का जन्म होता है, ऐसे बने किसी पदार्थ के सारे गुण यथा रंग, गंध, स्वाद इत्यादि उनके संयोजन के तरीके से निर्धारित होते हैं. जब ऐसे पदार्थ टूटते हैं तो वे जिन परमाणुओं से बने होते हैं उन्हीं में परिवर्तित हो जाते हैं. उन्होंने यह भी बतलाया कि एक ही प्रकार के दो परमाणु आपस में जब एक विशेष तरह से युग्मित होते हैं तो द्विनुक (Diatomic molecule) का निर्माण करते हैं, फिर यदि एक और परमाणु जुड़ जाये तो बनता है त्रिनुक (Triatomic molecule).

यहाँ अभीष्ट है कि भारतीय और यूनानी दार्शनिकों के परमाणु-अवधारणा के बीच का अंतर भी समझा जाये. भारतीय अवधारणा में चार तरह के परमाणुओं की परिकल्पना की गयी थी:

"मिट्टी (क्षिति), पानी, अग्नि (पावक) अर्थात ऊर्जा एवं वायु (समीर)."

स्पष्ट है आधुनिक परमाणु-परिकल्पना के अनुसार यह सही नहीं है, इनमें कोई परमाणु नहीं है, एक मात्र नाम जो परमाणु के निकट पहुंचता है वह है जल जो एक अणु है. इसमें भी कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए क्योंकि आचार्य कणाद की परमाणु-परिकल्पना का जन्म मात्र प्रकृति की प्रयोगशाला में अवलोकनों एवं उनके विश्लेषणों से हुआ है किसी आधुनिक प्रयोगशाला में किए गये प्रयोगों से नहीं. फिर भी इस सूची को देखकर आपको गोस्वामी तुलसी दास की याद तो आ ही गयी होगी, जिन्होंने रामचरित मानस के किष्किंधा कांड में लिखा था:

"क्षिति जल पावक गगन समीरा, पंच रचित अति अधम शरीरा"

आप यह भी समझ सकते हैं कि यह प्रेरणा गोस्वामी जी को कहाँ से मिली होगी. आगे आचार्य कणाद ने यह भी बताया कि इनमें दो (मिट्टी और जल) द्रव्यमान युक्त हैं शेष दो द्रव्यमान रहित, और यही चारो परमाणु आपस में मिलकर अन्य सभी वस्तुओं को बनाते हैं, अर्थात वे अन्य पदार्थों के निर्माण-खंड हैं. इसी आधार पर आचार्य कणाद ने निष्कर्ष निकाला कि परमाणु गोलीय (spherical) आकार के होते हैं, क्योंकि ऐसा न होने पर उनके गुण विभिन्न दिशाओं में अलग-अलग हो सकते हैं और तब उनसे बनी वस्तुओं के गुणों में भी दैशिक-निर्भरता (directional dependence) मिलेगी. दूसरी तरफ यूनानी विचार के अनुसार विभिन्न वस्तुओं को बनाने वाला निर्माण-खंड (Building Block) एक ही होता है, अर्थात परमाणु भिन्न-भिन्न प्रकार के नहीं होते; यह केवल उनकी व्यवस्था (arrangement) में अंतर है जो विभिन्न वस्तुओं को जन्म देती है. इससे यह स्पष्ट होता है कि दोनों परिकल्पनाएं स्वतंत्र रूप से की गयी थी और शायद उन्हें एक दूसरे के कार्य की जानकारी भी नहीं थी. उपर्युक्त तुलना से स्पष्ट है, और विद्वानों ने यह स्वीकार भी किया है कि कणाद के सूत्रों में वर्णित परमाणु सिद्धांत यूनानी दार्शनिकों लियूकीप्पस और डेमोक्रिटस द्वारा प्रतिपादित ज्ञान की अपेक्षा ज्यादा उन्नत है. एक अन्य महत्वपूर्ण अंतर भी है दोनों में – भारत में परमाणु की परिकल्पना को समाज ने स्वीकार किया, गौतम बुद्ध के उपदेशों में इनकी चर्चा इस बात का सबूत है; पर दूसरी तरफ यूनान में ही ऐसे दार्शनिक हुए, जैसे अरस्तू (Aristotle), जिन्हें यह सिद्धांत स्वीकार्य नहीं था. संक्षेप में, परमाणु की परिकल्पना महर्षि कणाद की मौलिक देन है, डाल्टन के द्वारा उसका अभिवर्धन और आधुनिकरण किया गया.
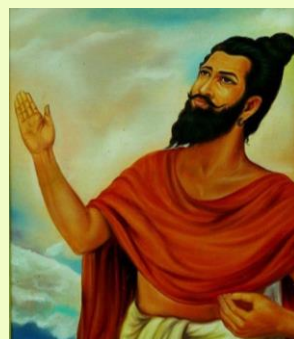
महर्षि कणाद
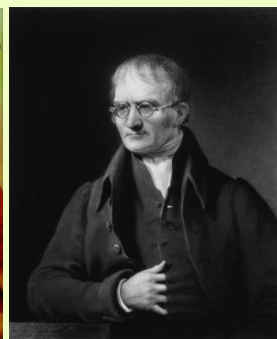
जॉन डाल्टन

मशरूम: पौष्टिकता से भरपूर कवक

डॉ. अनामिका अनु

तिरुवनंतपुरम, केरल

जन्म: 1 जनवरी 1982, मुजफ्फरपुर, एम. एससी. (विश्वविद्यालय स्वर्ण पदक), पीएच. डी. (इंस्पायर अवार्ड, DST), 2020 भारत भूषण अग्रवाल पुरस्कार, 2021 राजस्थान पत्रिका सृजनात्मक पुरस्कार (प्रथम), 2022 रज़ा फेलोशिप, काव्यसंग्रह : इंजीकरी (वाणी प्रकाशन, रज़ा फाउंडेशन), राष्ट्रीय पत्र पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन.

एस्कोमाइसीट्स और बेसिडियोमाइसीट्स कवकों के फ्रूटिंग बाडी को मशरूम कहते हैं. वास्तव में मशरूम मांसल, बीजाणुयुक्त कवक होते हैं. इसे छत्रक, खुम्ब, खुम्भी, भूछत्र, भूछत्री, क्षत्रक, भुइँ-फोड़, फुटु, भमोडी, गुच्छी और पिहिरी भी कहते हैं. अलग-अलग इलाकों में अलग-अलग तरह के मशरूम पाए जाते हैं, इसे अलग-अलग नाम से संबोधित भी किया जाता है.

मशरूम विभिन्न आकार, प्रकार और रंगों के होते हैं. यह कभी-कभी खाने लायक होता है तो कभी-कभी जहरीला होता है. इसकी कुछ प्रजातियाँ अपनी पौष्टिकता के कारण आज हमारे खाना-पान का महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुकी हैं. मशरूम की लगभग सात हज़ार प्रजातियों में लगभग सौ प्रजातियाँ ऐसी हैं जो हमारे खान-पान का हिस्सा हैं.

अगेरिकस, लेंटिनस, फ्लेमुलीना, वाल्वरियाला, प्लोरौटस, फोलियोटा, ट्राईमेला, आरीकूलेरिया, स्ट्रोफेरिया, ट्यूबर आदि जीन्स के बहुत से स्पीसीज़ खाने लायक होते हैं और प्राय: भोजन में इस्तेमाल किए जाते हैं.

लगभग 3000 ईसा पूर्व में इसे स्वाद और सुगंध के लिए प्राचीन भारत, मिश्र और रोमन सभ्यताओं में खाया-पकाया जाता था. मिश्र में लोग इसे 'प्रभु का भोजन' मानते थे और त्योहारों में ही इसे पकाते थे. अठारहवीं शताब्दी में फ्रांस में मशरूम की खेती की तकनीक और विधि का विकास हुआ.

वर्ग विभाजन:

मशरूम का उत्पादन और प्रचलन इन दिनों काफ़ी बढ़ गया है. उपजाए और खाए जाने वाले मशरूम को हम पांच वर्गों में बाँट सकते हैं:

1. ताजे पादप अवशेषों पर उगने और निर्भर रहने वाले मशरूम. इस वर्ग में निम्नलिखित मशरूम आते हैं: लेंटिनस, आरिकुलेरिया, फ्लेमुलीना, कापरीनस, ट्राईमेला आदि.

2. आंशिक रूप से कम्पोस्ट हो चुके पादप अवशेषों पर उगने वाले मशरूम. इस वर्ग में निम्नलिखित मशरूम आते हैं: वाल्वरियाला, स्ट्रोफेरिया, कापरनस आदि. ये आंशिक रूप से गले पादप अवशेषों पर उगाये जाते हैं.

3. अच्छी तरह से कम्पोस्ट बन चुके पादप अवशेषों पर उगने वाले मशरूम. इस वर्ग में निम्नलिखित मशरूम आते हैं: अगेरिकस आदि. खाद बन चुके पादप अवशेषों पर अगेरिकस जैसे मशरूम उगते हैं.

4. मिट्टी और ह्यूमस पर उगने वाले मशरूम. इस वर्ग में निम्नलिखित मशरूम आते हैं: लैपिओला, लैपिस्टा, मौरकेला, जाइरोमीटरा आदि. ये मशरूम मिट्टी और ह्यूमस पर उग आते हैं.

5. माइकोराइज़ल मशरूम. इस वर्ग में निम्नलिखित मशरूम आते हैं: बोलिटस, एमनीटा, मौरकेला (मौरचेला), लैक्टीरियस, ट्यूबर आदि, इन्हें हम कोमाइकोराइज़ल मशरूम भी कहते हैं.

भारतीय वातावरण में मुख्य रूप से पाँच प्रकार के खाद्य मशरूमों की व्यावसायिक स्तर पर खेती की जाती है.

1. सफेद बटन मशरूम

बटन मशरूम का बाटैनिकल नाम अगारिकस बिस्पोरस (Agaricus Bisporus) है. बटन मशरूम मांसल होता है. इसका आकार टोपीनुमा होता है. दुनिया भर में इस मशरूम की खेती सबसे अधिक होती है. भारत में इसकी खेती रबी फसल की तरह प्रायः अक्तूबर से मार्च के बीच में होती है. इस दौरान मशरूम की दो फसलें तैयार कर ली जाती हैं.

पहले भारत में सफेद बटन मशरूम की खेती निम्न तापमान वाले स्थानों पर ही की जाती थी या जाड़े के मौसम में इसका उत्पादन होता था, लेकिन आजकल नई तकनीकों को अपनाकर इसकी खेती सभी जगहों पर, सभी मौसमों में की जा रही है.

बटन मशरूम के कवक जाल के फैलाव के लिए 22-26 डिग्री सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है. इस तापमान पर कवक जाल का बहुत तेजी से प्रसार और विकास होता है. बाद में इसके लिए 14-18 डिग्री सेल्सियस तापमान ही उपयुक्त रहता है. बटन मशरूम हवादार कमरे, सेड या झोपड़ी में आसानी से उगाया जा सकता है. भारत में बटन मशरूम की अच्छी पैदावार के लिए 22-25 सेंटीग्रेड तापमान और 80-85 प्रतिशत नमी की जरूरत होती है.

2. ढींगरी (ऑयस्टर) मशरूम

ढींगरी मशरूम का बाटैनिकल नाम फ्ल्यूरोटस ऑस्ट्रिएटस (Pleurotus Ostreatus) है.

वैसे आजकल ढींगरी की 12 से अधिक प्रजातियाँ भारत के विभिन्न भागों में उगायी जाती हैं. इनमें से फ्ल्यूरोटस सजोरकाजू, फ्ल्यूरोटस फ्लोरिडा, फ्ल्यूरोटस ऑस्ट्रिएटस, फ्ल्यूरोटस फ्लेबेलेटस तथा फ्ल्यूरोटस सिट्रोनोपिलेटस आदि प्रमुख प्रजातियाँ है.

ढींगरी (ऑयस्टर) मशरूम की फसल पैंसठ से नब्बे दिनों में तैयार हो जाती है. इसकी खेती के लिए सर्दी का मौसम ठीक रहता है. समुद्र तटीय भागों में भी इसकी खेती बड़े पैमाने पर की जाती है. इसके लिए बीस से तीस डिग्री सेल्सियस तापमान और सत्तर से नब्बे प्रतिशत आर्द्रता की जरूरत होती है. ढींगरी के बेड को तैयार करने के लिए गेहूँ या धान के भूसे का इस्तेमाल किया जाता है. भारत में ढींगरी (ऑयस्टर) मशरूम की खेती साल भर होती है.

3. दुधिया मशरूम

दुधिया मशरूम का बाटैनिकल नाम कैलोसाइब इंडिका (Calocybe indica) है. दुधिया को उष्णकटिबंधीय मशरूम कहा जाता है. यह मशरूम गर्मियों में उगाया जाता है. इसका आकार बड़ा और आकर्षक होता है.

दुधिया मशरूम देखने में बटन मशरूम की तरह ही होता है मगर बटन मशरूम की तुलना में इसका तना अधिक लंबा, मांसल और मोटा होता है. इस मशरूम के बीजों के अंकुरण के लिए पच्चीस से तीस डिग्री सेल्सियस तापमान की जरूरत होती है. मशरूम के फलन के समय अधिक तापमान की जरूरत होती है, इस समय तीस से पैंतीस डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त माना जाता है. दुधिया मशरूम की फसल को तैयार होने के लिए वायु में अस्सी प्रतिशत तक नमी की आवश्यकता होती है.

दुधिया मशरूम को भी विभिन्न प्रकार की कृषि फसलों के अवशेषों पर आसानी से उगाया जा सकता है. पुलाव, ज्वार, गन्ना की खोई, बाजरा व मक्का की कड़वी और भूसा आदि फसल अवशेषों पर दुधिया मशरूम की खेती की जा सकती है. ये सामग्री बारिश में भीगी हुई न हो बल्कि नई और सूखी होनी चाहिए.

सबसे पहले दुधिया मशरूम की कृत्रिम वातावरण में खेती पश्चिम बंगाल में 1976 में हुई थी. आज कर्नाटक, तमिलनाडु, उड़ीसा केरल और आंध्र प्रदेश आदि राज्यों में भी इसकी खूब खेती होती है.

दूधिया मशरूम पर डिप्टेरियन और फोरोइड मक्खी का प्रकोप अधिक देखने को मिलता है. इसलिए मशरूम की फसल की बीजाई से लेकर तुड़ाई करने तक साफ-सफाई पर विशेष ध्यान देना होता है.

4. पैडीस्ट्रा मशरूम

पैडीस्ट्रा मशरूम का बाटैनिकल नाम वोल्वेरियला वोल्वेसिया (Volvariella volvacea) है. पैडीस्ट्रा मशरूम

को विकास के लिए उच्च तापमान की जरूरत होती है. प्रायः गर्म मौसम में इसकी खेती होती है. इसे गर्म मशरूम के नाम से भी जाना जाता है. इसकी वृद्धि के लिए अनुकूल तापमान 28-35 डिग्री सेल्सियस तथा सापेक्षित आर्द्रता 60-70 प्रतिशत की आवश्यकता होती है. अनुकूल परिस्थितियाँ प्रदान करने पर इसकी फसल तीन से चार हफ्तों में तैयार हो जाती है. पैडीस्ट्रा मशरूम बहुत स्वादिष्ट होता है. इसकी सुगंध बहुत अच्छी होती है. यह काफ़ी मुलायम होता है. अन्य मशरूमों की तरह इसमें भी भरपूर मात्रा में विटामिन और खनिज लवण पाए जाते हैं.

पैडीस्ट्रा खुम्बी बहुत नाज़ुक होती है. इसे तोड़ने के बाद साफ पानी में अच्छी तरह से धोया जाता है और फ्रिज में इनका भंडारण 2-3 दिनों के लिए ही किया जा सकता है. यह भारत के उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, झारखंड, छत्तीसगढ़ आदि राज्यों में ख़ूब उगाया जाता है.

5. शिटाके मशरूम

शिटाके मशरूम का बाटेनिकल नाम लेंटिनुला एडोड्स (Lentinula Edodes) है.

शिटाके मशरूम का स्वाद बहुत अच्छा होता है. यह मशरूम जापान में काफी लोकप्रिय है, जापान में इसकी खूब खेती की जाती है. शिटाके मशरूम के उत्पादन के लिए इसके बीजों को आरम्भ में 22 से 27 डिग्री तापमान की आवश्यकता होती है, तथा क्यूब के विकास के दौरान इन्हें 15 से 20 डिग्री तापमान की जरूरत होती है. शिटाके मशरूम के क्यूब आकार में अर्धगोलाकार होते हैं. इन क्यूबों में हल्की लालिमा दिखाई देती है.

शिटाके मशरूम में उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन पाए जाते हैं, साथ ही साथ भरपूर मात्रा में विटामिन बी पाई जाती है. इसमें न तो वसा होती है न ही शर्करा इसलिए मधुमेह और हृदय रोग से ग्रसित रोगी इसका ख़ूब इस्तेमाल कर सकते हैं. इसे सागवान, साल और भारतीय किन्नु वृक्ष की ठोस भूसी पर आसानी से उगाया जा सकता है.

इस मशरूम के औषधीय गुण बहुत महत्वपूर्ण हैं. यह पेट के कैंसर, कोलोरेक्टल कैंसर और एड्स आदि बीमारियों में प्रयोग में लाया जाता है. कैंसर की दवाई लेटाइनन में इस मशरूम के सत्वों का इस्तेमाल किया जाता है. इस मशरूम में सेलेनियम और जिंक की भी भरपूर मात्रा पाई जाती है. शिटाके मशरूम में बीटा ग्लाइसीन और लिनॉलिक एसिड पाया जाता है, जो प्रोस्टेट कैंसर और स्तन कैंसर के खतरे को कम करता है.

इन पाँच प्रकार के मशरूम के अलावा क्रेमिनि मशरूम (Cremini Mushrooms), एनोकी मशरूम (Enoki mushroom), पोर्सिनी मशरूम (Porcini Mushrooms) आदि का भी काफ़ी उत्पादन होता है.

दुनिया भर में लाखों टन मशरूम का उत्पादन प्रतिवर्ष होता है. देश में बेहतरीन पौष्टिक खाद्य पदार्थ के रूप में मशरूम ख़ूब उपयोग किया जाता है. इसके अलावा मशरूम के पापड़, जिम का सप्लीमेन्ट्री पाउडर, अचार, बिस्किट, टोस्ट, कूकीज, नूडल्स, जैम (अंजीर मशरूम), सॉस, सूप, खीर, ब्रेड, चिप्स, सेव, चकली आदि भी बनाए जाते हैं

मशरूम बहुत ही पौष्टिक होता है.

प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, खनिज लवण और विटामिन जैसे उच्च स्तरीय खाद्य ज़रूरतों को पूरा करने के कारण मशरूम को अति पोष्टिक खाद्य पदार्थों में से एक माना जाता है.

1. दाल, फल और सब्जियों से ज्यादा प्रोटीन मशरूम में पाया जाता है. मशरूम में इक्कीस से तीस प्रतिशत तक प्रोटीन पाया जाता है.
2. इसमें अंडे से ज़्यादा अमीनो एसिड पाया जाता है.
3. इसमें कैल्शियम, पोटैशियम, फास्फोरस, सोडियम, आयरन आदि तत्व भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं.
4. इसमें फालिक एसिड भी पाया जाता है.
5. फालिक एसिड के अलावा इसमें विटामिन B, विटामिन C, विटामिन D, विटामिन K भी पाया जाता है.
6. इसमें स्टार्च की मात्रा बेहद कम होती है, लगभग 0.02 %. यह मधुमेह और हृदयरोग से ग्रसित लोगों के लिए उत्तम आहार है.

7. मशरूम में सेलेनियम भरपूर मात्रा में पाया जाता है जो हमारे इम्यून सिस्टम को बेहतर बनाता है. सेलेनियम शरीर में एंटीऑक्सीडेंट की तरह काम करता है. यह शरीर को फ्री रेडिकल्स से होने वाले नुकसान से बचाता है.

8. मशरूम खाने से ब्लड शुगर का लेवल सही रहता है.

9. मशरूम में काफ़ी मात्रा में विटामिन-D पाया जाता है. इसके पर्याप्त सेवन से हड्डियाँ मजबूती होती हैं.

10. बढ़ती उम्र के लक्षणों को कम करने और वजन घटाने में भी मशरूम मदद करता है.

मशरूम की खेती

उत्तरप्रदेश, त्रिपुरा और केरल आदि राज्यों में मशरूम की खेती ख़ूब होती है. इसके अलावा हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, कर्नाटक और तेलंगाना आदि राज्यों में भी व्यापारिक स्तर पर मशरूम की खेती की जाती है. मशरूम की व्यवसायिक खेती में टन मशरूम, आयस्टर मशरूम, धान स्ट्रा मशरूम ज्यादा लोकप्रिय हैं.

अच्छी तरह से तैयार किए गए कम्पोस्ट बेड पर टन मशरूम की खेती साल भर की जा सकती है. आयस्टर मशरूम की खेती उत्तर भारत में मिट्टी पर की जाती है. धान स्ट्रा मशरूम के लिए तापमान का ख़्याल रखना होता है, इसके लिए पैंतीस से पैंतालीस डिग्री सेल्सियस तापमान सर्वोत्तम माना जाता है.

आमतौर पर सर्दियों में मशरूम की खेती होती है. तकनीकी सुविधा से उपयुक्त तापमान मुहैया करा कर हम इसकी खेती किसी भी मौसम में कर सकते हैं.

कृषि विज्ञान केंद्रों पर मशरूम के बीज आसानी से प्राप्त किए जा सकते हैं. मशरूम का बीज वास्तव में उसके स्पोर होते है. व्यावसायिक मशरूम के लिए स्पॉन काम में लाया जाता है जो गेहूं, ज्वार या बाजरा के दाने पर उगाई गई मशरूम की फफूंदी होती है.

पुआल, गेहूं की भूसी और एयर कंडीशनर का उपयोग करके 'इन हाउस' मशरूम उत्पादन की तकनीक के द्वारा हम मशरूम की खेती अच्छी तरह से कर सकते हैं. पुआल, गेंहू की भूसी आदि से हम मशरूम बेड ट्रे तैयार कर सकते हैं. आजकल वातानुकूलित कमरे में बड़े पैमाने में घर के भीतर मशरूम की खेती हो रही है.

मशरूम की खेती में कहीं कहीं सरसों के भूसे के साथ मुर्गी खाद (बीट) का प्रयोग भी किया जाता है. मशरूम की फसल पैंसठ से नब्बे दिन में तैयार हो जाती है.

बटन मशरूम को उपजाने के लिए बाइस से छब्बीस डिग्री सेल्सियस तापमान और पर्याप्त नमी की आवश्यकता होती है. बटन मशरूम उगाने के लिए कम्पोस्ट खाद बनाने के लिए धान या गेहूं के भूसे, गेहूं का चौकोर, अमोनियम सल्फेट या कैल्सियम अमोनियम नाइट्रेट, यूरिया, जिप्सम, मैलाथियान, सुपर फास्फेट, म्यूरेट आफ पोटाश आदि की ज़रूरत होती है.

मशरूम की खाद को मिट्टी में मिलाने की जरूरत होती है और अकेले खाद के उपयोग से मशरूम नहीं उगाया जा सकता है. प्रायः कुछ मशरूम की खेती के लिए एक भाग खाद और दो भाग मिट्टी को मिलाया जाता है.

मशरूम की खेती में प्रयोग होने वाले बीज को स्पॉन कहते हैं. स्पान को ऊँचे तापमान में लंबे समय तक रखने पर यह खराब हो जाता है. स्पान को कंपोस्ट में डाला जाता है. कंपोस्ट और केसिंग के मिश्रण की गुणवत्ता मशरूम के उत्पादन को प्रभावित करती है. कंपोस्ट बढ़िया होने पर माइसीलियम का विकास अच्छा होता है. केसिंग मिश्रण भुरभुरा होना चाहिए साथ ही साथ वह जल को शीघ्र अवशोषित करे और

फिर उसे धीरे-धीरे छोड़ सके. केसिंग मिश्रण के निर्जीविकरण के लिए प्रायः फॉर्मलीन का इस्तेमाल किया जाता है. सौ किलोग्राम कम्पोस्ट खाद में सफेद बटन मशरूम के 500-750 ग्राम बीज या स्पान की बोआई की जाती है. मशरूम के विकास को तापमान, नमी, कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा प्रभावित करती है. कुछ मशरूम में पिनहेड निकलते समय कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा .08 से 0.1 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए.

जब फसल काटाने योग्य हो जाए तो मशरूम को बहुत सावधानीपूर्वक तोड़ा जाता है. फसल की कटाई के लिए किसी औजार का प्रयोग नहीं किया जाता है, इससे मशरूम में इंफेक्शन होने का खतरा बना रहता है. इसकी तुड़ाई करते वक़्त मशरूम के डंठल को भूमि के पास से हल्का सा घुमाकर तोड़ा जाता है.

फसल की कटाई के बाद इसे बाजार पहुँचाने तक ठंडे डिब्बों में पैक किया जाता है. यदि बाजार उत्पादन स्थल से से दूर है तो मशरूम को 5-8 सेंटीग्रेड पर भंडारित करके रखा जा सकता है. अधिक समय तक भंडारण करने के लिए मशरूम को 15 प्रतिशत नमक के घोल में रखा जाता है.

मशरूम की फसल को भी जीवाणु, कवक और विषाणु जनित रोग हो सकते हैं. काब बैव रोग, यलो ब्लाच, पिनहेड संक्रमण आदि.

खेती के वक़्त बरती जाने वाली सावधानियाँ:

1. फसल उगाए जा रहे कमरे में वायु का प्रवाह ठीक हो. साथ ही पानी के प्रबंधन की उचित व्यवस्था हो और समुचित साफ-सफाई का प्रबंध हो.
2. कमरे का तापमान नियंत्रित हो सके ताकि मशरूम के विकास के विभिन्न चरणों में निर्धारित उचित तापमान की व्यवस्था हो सके.
3. फसल-कक्ष में सूर्य का सीधा प्रकाश न आता हो.
4. तुड़ाई के समय मशरूम के बचे हुए तने और मृत मशरूम के टुकड़ों को भली भांति केस से निकाल देना चाहिए अन्यथा वह सड़ कर केस के तल का संक्रमित कर देगा.

मशरूम के नुकसान:

कुछ लोगों में मशरूम त्वचा की एलर्जी पैदा करता है तो कुछ की पाचन शक्ति को खराब करता है. कुछ लोगों को मशरूम के सेवन से कमजोरी होती है. ऐसे लोगों को मशरूम के सेवन से बचना चाहिए. मशरूम में पर्याप्त मात्रा में पोटैशियम पाया जाता है इसलिए किडनी की बीमारी से ग्रस्त बहुत से लोग इसका सेवन नहीं करते.

कुछ जंगली मशरूम दिखने में खाद्य मशरूमों की तरह ही होते हैं इसलिए विश्वसनीय स्थान से ही मशरूम खरीदना चाहिए. खरीदते वक़्त देखना चाहिए कि वह गला या फंगस से संक्रमित न हो.

जहरीले मशरूम का भूल से सेवन कर लेने पर पेट, यकृत और आंतों में संक्रमण हो सकता है.

जहरीले मशरूम:

कुछ मशरूम बेहद जहरीले होते हैं. उन मशरूमों में एक मशरूम है पोडोस्ट्रोमा कॉर्नू-डामा. इसे पॉइजन फायर कोरल भी कहते हैं. यह बेहद जहरीला होता है. यह पापुला न्यू गिनी, इंडोनेशिया आदि जगहों पर उग आता है. यह इतना अधिक जहरीला है कि इसके सैशन से ऑर्गन फेल हो सकता है. मस्तिष्क कुप्रभावित हो सकता है. इसे छूने भर से शरीर में सूजन हो जाती है.

इथेनॉल मिश्रित पेट्रोल की उपादेयता

डॉ. दीपक कोहली

संयुक्त सचिव, उत्तर प्रदेश शासन, 5/104, विपुल खंड, गोमती नगर, लखनऊ

अर्थव्यवस्था के विस्तार, जनसंख्या वृद्धि, बढ़ते शहरीकरण, बदलती जीवन शैली और व्यय शक्ति में वृद्धि के साथ देश की ऊर्जा मांग बढ़ती जा रही है. वर्तमान में सड़क परिवहन क्षेत्र में ईंधन की आवश्यकता का लगभग 98 प्रतिशत जीवाश्म ईंधन से और शेष 2 प्रतिशत जैव ईंधन द्वारा पूरा किया जाता है. राष्ट्रीय जैव ईंधन नीति, 2018 इथेनॉल मिश्रित पेट्रोल (Ethanol Blended Petrol- EBP) कार्यक्रम के तहत वर्ष 2025 तक 20 प्रतिशत इथेनॉल सम्मिश्रण (Ethanol blending) का एक सांकेतिक लक्ष्य प्रदान करती है.

भारत जैसे तेज़ी से विकास करते देश के लिये ऊर्जा सुरक्षा प्राप्त करना और एक उन्नतिशील निम्न कार्बन अर्थव्यवस्था की ओर आगे बढ़ना अत्यंत महत्त्वपूर्ण है. पेट्रोल के साथ स्थानीय रूप से उत्पादित इथेनॉल के सम्मिश्रण से भारत को अपनी ऊर्जा सुरक्षा को मज़बूत करने, स्थानीय उद्यमों एवं किसानों को ऊर्जा अर्थव्यवस्था में भागीदार बनाने और वाहनों से होने वाले उत्सर्जन को कम करने में मदद मिलेगी. जबकि इथेनॉल सम्मिश्रण कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन को कम कर सकता है, इथेनॉल उत्पादन के लिये अकुशल भूमि एवं जल उपयोग के साथ ही खाद्य सुरक्षा चिंताएँ अभी भी बनी हुई हैं.

इथेनॉल एक कृषि सह-उत्पाद है जो मुख्य रूप से गन्ने से चीनी के प्रसंस्करण के दौरान प्राप्त होता है. यह चावल की भूसी या मक्का जैसे अन्य स्रोतों से भी प्राप्त होता है. वाहनों के परिचालन में जीवाश्म ईंधन की खपत कम करने के लिये पेट्रोल के साथ इथेनॉल को मिलाना इथेनॉल सम्मिश्रण या 'इथेनॉल ब्लेंडिंग' कहलाता है. वर्तमान में हमारे वाहनों में उपयोग किये जा रहे पेट्रोल में 10 प्रतिशत इथेनॉल मिश्रित होता है. भारत वर्ष 2030 तक इस अनुपात को 20 प्रतिशत तक बढ़ाने का मूल लक्ष्य रखता था, लेकिन वर्ष 2021 में नीति आयोग द्वारा इथेनॉल रोडमैप जारी किये जाने के साथ अब इस लक्ष्य को 2025 तक पूरा कर लेने की प्रतिबद्धता जताई गई है.

भारत ने वाहन निकास उत्सर्जन को कम करने के लिये पेट्रोल में इथेनॉल सम्मिश्रण को अपनाया है. वर्ष 2020-21 में भारत द्वारा पेट्रोलियम का शुद्ध आयात 185 मिलियन टन रहा था. अधिकांश पेट्रोलियम का उपयोग वाहनों द्वारा किया जाता है और इसलिये एक सफल 20% इथेनॉल सम्मिश्रण कार्यक्रम देश के लिये प्रति वर्ष 4 बिलियन डॉलर की बचत कर सकता है. नवीकरणीय इथेनॉल कंटेंट से कार्बन डाइऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड और हाइड्रोकार्बन के उत्सर्जन में शुद्ध कमी आने की उम्मीद है. इथेनॉल पेट्रोल की तुलना में स्वयं स्वच्छ रूप से और अधिक पूर्ण रूप से जलता है जिससे उत्सर्जन में कमी आती है. इथेनॉल ब्लेंडिंग से देश के तेल आयात में कमी आएगी जिस पर उल्लेखनीय मात्रा में मूल्यवान विदेशी मुद्रा का व्यय करना पड़ता है. आकलन है कि इथेनॉल का 5 प्रतिशत सम्मिश्रण (105 करोड़ लीटर) लगभग 1.8 मिलियन बैरल कच्चे तेल का प्रतिस्थापन कर सकता है. कृषि अवशेषों से अधिकाधिक इथेनॉल का उत्पादन किसानों की आय में वृद्धि करेगा और पराली जलाने की घटना में कमी लाकर वायु प्रदूषण को न्यूनतम करेगा.

चुनौतियाँ :

गन्ना उत्पादन की ओर बढ़ना: 20 प्रतिशत मिश्रण दर प्राप्त करने के लिये देश के मौजूदा शुद्ध बुवाई क्षेत्र के लगभग दसवें भाग को गन्ना उत्पादन की ओर मोड़ना होगा. किसी एक फसल के लिये भूमि की ऐसी आवश्यकता से अन्य फसलों पर दबाव पड़ने की संभावना है और इससे खाद्य कीमतों में वृद्धि आ सकती है.

पहले से ही संकेत मिलते हैं कि गन्ना की खेती अधिक होती जा रही है और भारत सरकार ने मई

2022 में भारत मक्का शिखर सम्मेलन में मक्का का उत्पादन बढ़ाने पर बल दिया था.

भंडारण की कमी: आवश्यक जैव-रिफाइनरियों की वार्षिक क्षमता 300-400 मिलियन लीटर निर्धारित की गई है, जो अभी भी 5 प्रतिशत पेट्रोल-इथेनॉल मिश्रण की आवश्यकता को पूरा करने के लिये पर्याप्त नहीं है. भंडारण मुख्य चिंता का विषय होने जा रहा है, क्योंकि अगर ई10 आपूर्ति को ई20 आपूर्ति के साथ जारी रखना है तो भंडारण को अलग करना होगा जो फिर लागत बढ़ाएगा. ई10 ईंधन 90% पेट्रोल के साथ 10% इथेनॉल का मिश्रण है. ई20 ईंधन 80% पेट्रोल के साथ 20% इथेनॉल का मिश्रण है.

खाद्य असुरक्षा: पेट्रोल टैंक तक पहुँचता चीनी और गन्ना उत्पादन फिर साथ-साथ हमारे खाद्य, पशुओं के चारे, गोदामों में बफ़र स्टॉक या निर्यात हेतु पर्याप्त नहीं होगा. भारत के लिये एक साथ घरेलू खाद्य आपूर्ति प्रणाली को सुदृढ़ करना, अनाज के लिये एक निर्यात बाज़ार बनाए रखना और आने वाले वर्षों में अपेक्षित दर पर अनाज को इथेनॉल में बदलना आसान नहीं होगा. यह ऐसा विषय है जिस पर लगातार निगरानी रखने की आवश्यकता होगी.

राज्यों के बीच इथेनॉल परिवहन की अस्थिरता: इथेनॉल के अंतर-राज्य परिवहन में अवरोध है क्योंकि सभी राज्यों द्वारा उद्योग (विकास और विनियमन) अधिनियम, 1951 के संशोधित प्रावधानों को एक समान रूप से लागू नहीं किया गया है.

फीडस्टॉक या उद्योगों की अनुपलब्धता के कारण पूर्वोत्तर राज्यों में इथेनॉल सम्मिश्रण को नहीं अपनाया गया है. अखिल भारतीय स्तर पर इथेनॉल मिश्रित ईंधन और वाहनों के विकास के लिये इस चिंता को दूर किया जाना चाहिये.

नाइट्रस ऑक्साइड के उत्सर्जन में कोई कमी नहीं: चूँकि इथेनॉल का पेट्रोल की तुलना में पूरी तरह से दहन होता है, यह कार्बन मोनोऑक्साइड जैसे उत्सर्जन नहीं करता है. लेकिन नाइट्रस ऑक्साइड के उत्सर्जन में कोई कमी नहीं आती जो एक प्रमुख पर्यावरण प्रदूषक है.

आगे की राह:

इथेनॉल ब्लेंड की एकसमान उपलब्धता सुनिश्चित करना: अखिल भारतीय उपयोग को सक्षम करने के लिये इथेनॉल ब्लेंड को अधिशेष वाले राज्यों से कमी वाले राज्यों में आपूर्ति करने की आवश्यकता होगी ताकि देश में इथेनॉल ब्लेंड की एक समान उपलब्धता सुनिश्चित हो सके.

उन्नत जैव ईंधन को बढ़ावा देना: गैर-खाद्य फीडस्टॉक से इथेनॉल के उत्पादन (जिसे 'उन्नत जैव ईंधन'/ Advanced Biofuels के रूप में जाना जाता है और जिसमें दूसरी पीढ़ी के जैव ईंधन शामिल हैं) की प्रौद्योगिकी को बढ़ावा दिया जाना चाहिये ताकि खाद्य उत्पादन प्रणाली में कोई अवरोध उत्पन्न किये बिना इस प्रचुर मात्रा में उपलब्ध संसाधन का दोहन किया जा सके.

चावल की भूसी, गेहूँ की पराली, मकई के गोले और ऐसी अन्य सामग्री से उत्पादित इथेनॉल दूसरी पीढ़ी (2G) के इथेनॉल की श्रेणी में आता है.

आपूर्ति संवृद्धि: विभिन्न फीडस्टॉक्स से इथेनॉल उत्पादन के लिये योजनाएँ और जैव-रिफाइनरियों एवं उनकी क्षमताओं को बढ़ाने के लिये प्रोत्साहन. बेहतर कार्यान्वयन के लिये उच्च इथेनॉल मिश्रणों हेतु इंजनों को अनुकूलित करना और स्थायित्व परीक्षण तंत्र सुनिश्चित करना आवश्यक है.

मंज़ूरी के लिये एकल खिड़की: इथेनॉल उत्पादन हेतु नई और विस्तारित परियोजनाओं को त्वरित मंज़ूरी देने के एकल खिड़की मंजूरी प्रणाली तैयार की जानी चाहिये.

इथेनॉल के लिये न्यूनतम मूल्य निर्धारित करना: विस्तारित/नई इथेनॉल क्षमताओं में अनुमेयता लाने और उद्यमियों द्वारा निवेश को प्रोत्साहित करने के लिये सरकार तेल विपणन कंपनियों द्वारा खरीद हेतु वृद्धि उपबंध के साथ कुछ वर्षों के लिये इथेनॉल का न्यूनतम मूल्य निर्धारित कर सकती है. पूर्वोत्तर भारत में निवेशकों को आकर्षित करने के लिये विशेष प्रयास करने की की आवश्यकता है.

खाद्य सुरक्षा और इथेनॉल सम्मिश्रण के बीच संतुलन रखना: भारत की जैव ईंधन नीति यह निर्धारित करती है कि ईंधन की आवश्यकताओं को खाद्य आवश्यकताओं के साथ प्रतिस्पर्द्धा से बचना चाहिये और केवल अतिरिक्त खाद्य फसलों का उपयोग ही ईंधन उत्पादन के लिये किया जाना चाहिये. फसल अवशेषों से इथेनॉल का उत्पादन तभी एक अच्छा विकल्प साबित होगा.

भारी धातुओं से लैस सब्जियां स्वास्थ्य के लिए हानिकारक

डॉ. कृष्णा नन्द पाण्डेय

बी 289/बी, सेक्टर 19, नोएडा – 201301

सब्जियां विश्व भर में पौष्टिक गुणों का भंडार होती हैं, उनमें महत्वपूर्ण पोषक तत्वों, एंटीऑक्सीडैंट्स यानी रोगों से लड़ने के गुण, और पाचन के दौरान निर्मित अम्लीय गुणों को दूर करने वाले चयापचयज तत्वों की भरपूर उपस्थिति शरीर को स्वस्थ बनाए रखने में मददगार होती है. वहीं दूसरी ओर सब्जियां मिट्टी के माध्यम से जरूरी और विषाक्त दोनों तरह के पदार्थों का अवशोषण करती हैं. इन्हीं के साथ सब्जियों में क्रोमियम, मैंगनीज़, फेरस यानी लोहा, निकिल, कॉपर, ज़िंक, कैडमियम, लेड यानी सीसा और मरकरी यानी पारा जैसी भारी धातुओं की अधिक मात्रा में उपस्थिति हो जाती है. हमारे परिवेश में बढ़ते प्रदूषण ने मानव जीवन को गंभीर रूप से प्रभावित किया है. प्रदूषण फैलाने में सन्दूषित भारी धातुओं का बहुत बड़ा हाथ होता है. आज दुनिया भर में भारी धातुओं से मिट्टी और जल से जुड़ी पारिस्थितिकीय प्रणाली गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त हुई है. परिवेश में भारी धातुओं का जमाव कई तरीकों से होता है, जैसे कि प्रदूषित जल से खेतों की सिंचाई, रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग, औद्योगिक प्रतिष्ठानों से निकले प्रदूषित बहि:स्राव का जल स्रोतों में मिलना, ज्वालामुखी का फटना, जंगलों में आग लगना, आदि, आदि. जहां एक ओर उपज अधिक बढ़ाने की चाह में रासायनिक उर्वरकों के अंधाधुंध प्रयोग ने मानव शरीर को तरह-तरह की बीमारियों से ग्रस्त किया है वहीं बड़े-बड़े महानगरों से अपशिष्ट जल के रूप में बहने वाले बड़े-बड़े नालों के समीपस्थ एक बहुत बड़े क्षेत्र में उगाई गई सब्जियों में बहुत अधिक मात्रा में मौजूद भारी धातुओं के चलते मानव स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव देखे गए हैं. सर्दियां शुरू होते ही बाजार में पालक, चौलाई, हरी धनिया, टमाटर, बैंगन, आदि जैसी सब्जियां स्वाद, पौष्टिकता और उपलब्धता तीनों ही दृष्टिकोण से गृहणियों को आकर्षित करती हैं, और भारतीय परिवारों में उनका सेवन भी बढ़ जाता है.

मानव स्वास्थ्य पर भारी धातुओं के प्रभाव

भारी धातुओं से सन्दूषित सब्जियों और फलों के खाने से तरह-तरह की बीमारियां पैदा हो सकती हैं. हानिकारक भारी धातुओं के मानव के गुर्दों और यकृत में जमा होने से विभिन्न जीव रासायनिक प्रक्रियाएं बाधित हो जाती हैं, जिनके फलस्वरूप हृदय वाहिकीय यानी कार्डियोवैस्कुलर, तंत्रिका, गुर्दा और अस्थि यानी हड्डी से संबंधित बीमारियां पैदा हो सकती हैं.

खेतों में अनाज, शाक-सब्जियों के पौधों का समुचित विकास तभी होता है, जब खेतों की मिट्टी में कॉपर, आयरन, मैंगनीज़, निकिल और ज़िंक जैसी धातुओं की उपस्थिति अत्यंत सूक्ष्म मात्रा में ही सही, परन्तु आवश्यक मात्रा में निरन्तर बनी रहे. वहीं ज़रूरत से अधिक मात्रा में सूक्ष्म मात्रिक भारी धातुएं मानव स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरे पैदा करती हैं. सब्जियां खेतों की मिट्टी से जरूरी और विषाक्त दोनों तरह के रसायनों का अवशोषण करती हैं. यहां तक कि मानव शरीर के नियमित कार्यों के लिए एल्युमीनियम, आर्सेनिक, कैडमियम, लेड और मरकरी जैसी धातुओं की जरूरत नहीं होती परन्तु भोजन श्रृंखला के माध्यम से शरीर में इनकी उपस्थिति बड़ी तेजी से विषाक्तता पैदा करती हैं.

पौष्टिक तत्वों से भरपूर सब्जियां हमारे सामान्य आहार का एक महत्वपूर्ण हिस्सा होती हैं. ये शरीर को रोगों से बचाने में भी सहायक होती हैं. शुद्ध जल से सिंचित और सामान्य खेतों में उगाई गई सब्जियों की तुलना में उन सब्जियों में भारी धातुओं की मात्रा बहुत ही अधिक होती है जो

महानगरों के जल-मल और औद्योगिक अपशिष्ट युक्त नालों के अत्यंत सन्दूषित जल की सिंचाई से उगाई जाती हैं. पर्यावरण और मिट्टी में मिश्रित ये भारी धातुएं जड़ के माध्यम से सब्जियों के पौधों के भोज्य ऊतकों में जमा हो जाती हैं. लंबी अवधि तक ऐसे संदूषित जल-मल से सिंचित सब्जियों में हानिकारक भारी धातुएं संस्तुत सीमा से कहीं अधिक जमा हो जाती हैं.

'सस्टेनेबल क्रॉप प्रोडक्शन' शीर्षक से मार्च, 2022 में प्रकाशित पुस्तक में "सब्जियों में भारी धातुओं का संदूषण और मानव स्वास्थ्य पर उनके विषाक्त प्रभाव" पर संपन्न अनुसंधान पर आधारित एक अध्याय के अनुसार अपशिष्ट जल से सिंचित सामान्य रूप से दैनिक उपयोग में लाई जाने वाली कई सब्जियों में भारी धातुओं की उपस्थिति सह्य सीमा यानी टॉलरैंट लिमिट से बहुत अधिक पाई गई है. मुख्य रूप से चौलाई, बथुआ, पालक, हरी धनिया, टमाटर और बैंगन जैसी सामान्य रूप से प्रयुक्त सब्जियों में भारी धातुओं की मात्रा ज्ञात करने पर किए गए शोध कार्य से चौंकाने वाले परिणाम मिले हैं.

कैसे जमा हो जाती हैं भारी धातुएं इन सब्जियों में?

मेकैनिकल यानी यांत्रिकीय, जीवरासायनिक, और जैविक प्रक्रियाओं के साथ-साथ मानव की तमाम गतिविधियों से हमारा परिवेश भारी धातुओं से सन्दूषित हो रहा है, और वे भारी धातुएं खाद्य श्रृंखला के माध्यम से मानव सहित अन्य जीवित प्राणियों के शरीर में जमा हो जाती हैं. सन्दूषित मिट्टी, जल और परिवेश में उगाई गई इन सब्जियों और अन्य खाद्यों के सेवन से हानिकारक भारी धातुएं मानव शरीर में प्रवेश कर जाती है. एक बार खाद्य श्रृंखला में इन भारी धातुओं का प्रवेश हो जाने से उन्हें दूर करना आसान नहीं होता, और इस प्रकार संपूर्ण खाद्य श्रृंखला में उनकी उपस्थिति हो जाती है. भारी धातुओं की अधिकता वाली सब्जियां मानव और जंतुओं दोनों को पौष्टिक तत्व तो प्रदान करती हैं, परन्तु उनमें भारी धातुओं की मात्रा बढ़ने से तरह-तरह की स्वास्थ्य समस्याएं भी पैदा करती हैं. अब पारिस्थितिकी तंत्र प्रणाली के अंतर्गत भारी धातुएं मिट्टी से पादप, पादप से मानव और मानव से मिट्टी के दोबारा सन्दूषित होने तथा आहार श्रृंखला का चक्र सतत चलता रहता है.

भारी धातुओं का सब्जियों की गुणवत्ता पर प्रभाव

शाक-सब्जियों की गुणवत्ता उसमें मौजूद पोषक तत्वों और भारी धातुओं की मात्रा के अनुसार घटती-बढ़ती रहती है. धातुओं की विषाक्तता से पौधों की वृद्धि, प्रकाश संश्लेषण, श्वसन क्षमता जैसी प्रक्रियाओं में बहुत अधिक गिरावट होती है, मैंगनीज़, पोटैशियम, मैग्नीशियम जैसे पोषक तत्वों में असंतुलन के चलते पादप की जड़ों और तनों के अनुपात में गिरावट आती है. अध्ययनों में पाया गया है कि पादपों द्वारा कैडमियम, सीसा, पारा, कॉपर, ज़िंक, और निकिल जैसी भारी धातुओं का अवशोषण अधिक होने की स्थिति में पादप का विकास, वृद्धि और उत्पादन बाधित हो जाता है.

मिट्टी में किसी पादप की जड़ द्वारा उत्पन्न कार्बनिक अम्लों और जीव-भू-रासायनिक यानी बायो-जिओ-केमिकल के बीच पारस्परिक क्रिया के दौरान पादपों और उनकी जड़ों का विकास भारी धातुओं और पोषक तत्वों की उपस्थिति में प्रभावित हो सकता है. इसे एक उदाहरण से समझा जा सकता है कि अन्य फसलों की तुलना में टमाटर और मिर्च के पौधों द्वारा कॉपर और ज़िंक धातुओं का अवशोषण अधिक होता है. सब्जियों की फसलों में ज़िंक की मात्रा अधिक होने पर उनकी वृद्धि पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है.

कैबेज (पत्तागोभी) सब्जी पर कॉपर के प्रभाव पर किए गए अध्ययनों में देखा गया है कि मिट्टी में कॉपर की अधिकता से उत्पन्न धातु विषाक्तता के कारण कैबेज की जड़ें कमजोर होने के साथ-साथ कैबेज का विकास मंद पड़ जाता है.

गाजर और सनफ्लावर यानी सूरजमुखी की फसलों की मिट्टी में कैडमियम की मात्रा अधिक होने की स्थिति में उनमें प्रोटीन की उपस्थिति घटी पाई गई. एक अन्य अध्ययन में रेपसीड (*ब्रैसिका नैपस*) की फसल की मिट्टी में ज़िंक की अधिकता होने पर उनमें प्रोटीन के स्तर में गिरावट देखी गई. प्रोटीन की मात्रा घटने की स्थिति में प्रोटिएज़ क्रियाशीलता बढ़ जाने से प्रोटीन तेजी से टूटता है अर्थात भारी धातुओं के बढ़ने से नाइट्रोजन का चयापचय बाधित होकर सब्जियों में प्रोटीन का संश्लेषण बाधित होता है. कैडमियम की उपस्थिति में ऑयरन, पोटैशियम,

मैंगनीज़ और कैल्शियम का अवशोषण भी बाधित होना देखा गया है.

सब्जियों के माध्यम से शरीर में भारी धातुओं का अंतर्ग्रहण

भारी धातुएं मिट्टी, जल और वायु में उपलब्ध होती हैं. आहार श्रृंखला में भारी धातुओं का प्रवेश कई स्रोतों से होता है. उदाहरण के तौर पर मिट्टी में मौजूद का कैडमियम जड़ के माध्यम से पादप में पहुंचता है. वहीं पौधे लेड (सीसा) नामक भारी धातु को वायु प्रदूषण के माध्यम से प्राप्त करते हैं. आर्सेनिक और मरकरी धातुएं धूल और पानी के माध्यम से पहुंचती हैं. कुछ धातुओं में यकृत यानी लीवर, मांसपेशी, गुर्दा और अन्य अंगों के ऊतकों में जमा होने की क्षमता होती है. कुछ भारी धातुएं औसत और कुछ पूरी तरह से घुलनशील होने के कारण जड़ों के माध्यम से बड़ी तेजी से पादप के सभी हिस्सों में फैल जाती हैं. मानव अंगों की कोशिकाओं की चयापचय संबंधी प्रक्रियाएं बाधित होने से धातुओं की विषाक्तता पैदा हो जाती है. सन्दूषित आहार के आमाशय में पहुंचने पर अम्लीय माध्यम में खतरनाक धातुओं का निरंतर ऑक्सीकरण होकर विशिष्ट प्रोटीनों और एंज़ाइमों से मिल जाते हैं. स्थिर अवस्था में धातुओं के यौगिक सिस्टीन के सल्फाइड्रिल समूह के साथ-साथ मेथिओनाइन के सल्फर अणुओं के साथ पारस्परिक क्रिया करके प्रोटीन अणुओं को तोड़ देते हैं.

शरीर पर भारी धातुओं से सन्दूषित सब्जियों का प्रभाव

मानव शरीर के लिए सूक्ष्म मात्रिक तत्व (ट्रेस एलिमेंट्स) अथवा सूक्ष्म मात्रिक खनिज (ट्रेस मिनरल्स) आवश्यक होते हैं. परंतु एक वयस्क व्यक्ति में इसकी मात्रा 1 से 100 मिलीग्राम प्रतिदिन के बीच होनी चाहिए. हमारे देश में औद्योगिक प्रतिष्ठान दिन-ब-दिन बढ़ते जा रहे हैं. इन उद्योगों से निकले गैरशोधित और संदूषित जल ज्यादातर सीधे नदियों अथवा समुद्र में बहा दिए जाते हैं. इसके अलावा शहरों से निकले अपशिष्टों और कचरों को भी जल स्रोतों में फेंकने का चलन आम है. अब ऐसे सन्दूषित जल पीने और कृषि कार्यों में उपयोग किए जाते हैं. ऐसे संदूषित जल से सिंचित सब्जियां हानिकारक भारी धातुओं को अवशोषित कर स्वयं सन्दूषित हो जाती हैं. औद्योगिक प्रतिष्ठानों के समीप उगाई गई ऐसी सब्जियां वायु, मिट्टी, जल, आदि के माध्यम से भारी धातुओं से सन्दूषित हो जाती हैं, जिन्हें खाने पर हानिकारक भारी धातुएं पाचन प्रणाली के माध्यम से रक्त और ऊतकों में स्थानांतरित हो विषाक्तता पैदा कर देती हैं.

सीसा यानी लेड

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वयस्कों के रक्त में लेड की मात्रा 25 माइक्रोग्राम/डेसी लीटर और बच्चों के रक्त में 5 माइक्रोग्राम/डेसीलीटर से अधिक होने पर सीसे की विषाक्तता हो जाती है. लाल रक्त कोशिकाओं के माध्यम से लेड न केवल यकृत बल्कि गुर्दों (किडनी) में पहुंच कर फॉस्फेट लवण के रूप में दांतों, हड्डियों और बालों तक पहुंच जाता है. आज फास्ट फूड के बढ़ते चलन के दौर में बच्चों में प्रायः लेड का अवशोषण 4 से 5 गुना अधिक होता है, जिससे उनमें तंत्रिका का विकास प्रभावित होता है और इसकी मात्रा बहुत अधिक बढ़ने की स्थिति में मानसिक मंदता, कोमा और यहां तक की मृत्यु तक की स्थितियां पैदा हो सकती हैं. रक्त में लेड का स्तर बढ़ने से हीमोग्लोबिन के संश्लेषण से जुड़े महत्वपूर्ण एंज़ाइमों के साथ क्रिया होने के पश्चात रक्त में हीमोग्लोबिन की मात्रा घट जाती है. लेड की अधिकता में हाइपरटेंशन, जठरांत्रीय विकार, अल्जाइमर रोग, किडनी को क्षति, विटामिन बी के चयापचय में बाधा, थायराइड ग्लैंड में विषाक्तता जैसी स्थितियों का खतरा बढ़ जाता है. रक्त में लेड का स्तर बढ़ने से यौन इच्छा में कमी, शुक्राणुओं (स्पर्म) की संख्या और

उसकी गतिशीलता में गिरावट, तथा डीएनए में क्षति होने का भी खतरा पैदा हो सकता है.

कैडमियम

रक्त में कैडमियम का स्तर बढ़ने के पीछे धूम्रपान करना तो जिम्मेदार होता ही है साथ ही कैडमियम की अधिकता युक्त हरी पत्तेदार सब्जियों, सूरजमुखी के बीज, चावल, अनाज, सोयाबीन, मशरूम, आलू जैसे खाद्य पदार्थों के सेवन से भी इसका स्तर बढ़ जाता है. हालांकि, शरीर में कैडमियम के पहुंचने से उसकी केवल 5 से 10% मात्रा का अवशोषण होता है, परंतु आहार में ऑयरन, कैल्शियम और प्रोटीन की मात्रा कम होने की स्थिति में कैडमियम का अवशोषण स्तर काफी अधिक बढ़ जाता है. उद्योगों में काम करने वाले मजदूरों में सांस के माध्यम से प्रवेश किए कैडमियम की 5 से 35% मात्रा रक्त में अवशोषित हो जाती है. लंबी अवधि तक निरंतर काम करने वाले मजदूरों के रक्त में कैडमियम का स्तर बढ़ने से फेफड़े के कार्य में क्षति और आंख की रोशनी में कमी जैसी स्थितियां पैदा हो सकती हैं. अध्ययनों में देखा गया है कि पुरुषों की तुलना में महिलाओं में कैडमियम का स्तर अधिक पाया जाता है, परंतु गर्भावस्था में कैडमियम प्लासेंटा (भ्रूण नाल) के माध्यम से भ्रूण तक नहीं पहुंच पाता. हालांकि, रक्त में कैडमियम का स्तर बढ़ने से यकृत, अस्थियों, वाहिकीय प्रणाली, तंत्रिका प्रणाली और विशेषतया किडनी के क्षतिग्रस्त होने का खतरा बहुत अधिक बढ़ जाता है. कैडमियम की अधिकता में 15 से 30 मिनट के भीतर वमन, पेट में दर्द, जलन, पेशी में ऐंठन, शॉक, बेहोशी, मतली जैसे लक्षण उधर सकते हैं. इसी तरह कैडमियम लाल रक्त कोशिकाओं और एल्ब्यूमिन के माध्यम से गुर्दों और यकृत तक पहुंच जाता है. बाद में रक्त के माध्यम से फेफड़ों तक पहुंचकर मैंगनीज़ की वाष्प फेफड़े की कलाओं यानी मेंब्रेन के ऊपर फैल कर केंद्रीय तंत्रिका प्रणाली तक पहुंच जाती हैं. पानी में घुलनशील अकार्बनिक मैंगनीज़ ऑयन प्लाज्मा और गुर्दों के माध्यम से बाहर निकल जाते हैं, जबकि वसा में घुलनशील मैंगनीज लवण कोलोन में फैल कर मल के माध्यम से निकलते हैं.

आर्सेनिक

सब्जियों की फसल को सुरक्षित रखने के लिए प्रयुक्त फंगसनाशी (फंगीसाइड्स), खर-पतवारनाशी (हर्बीसाइड्स) और कीटनाशी (इंसेक्टीसाइड्स) दवाइयों में आर्सेनिक की मात्रा मौजूद रहती है. यह हानिकारक आर्सेनिक रक्त के माध्यम से हृदय, फेफड़ों, यकृत, गुर्दों, मांस पेशियों और तंत्रिका ऊतकों के साथ-साथ त्वचा, नाखून और बालों में जमा होकर विषाक्तता पैदा करता है. कुछ भारी धातुओं से उत्पन्न मुक्त मूलक यानी फ्री रैडिकल्स कोशिकाओं को क्षतिग्रस्त कर सकते हैं. आर्सेनिक की विषाक्तता में प्रोटीन का समूहन होने से चयापचय, प्रोटीन संश्लेषण और प्रोटीन के स्थायित्व जैसी प्रक्रियाएं प्रभावित होती हैं. सब्जियों के अलावा सन्दूषित आहार और जल के सेवन, तंबाकू के धूम्रपान, आर्सेनिक की पॉलिश युक्त लकड़ियों के जलाने से उत्पन्न धुएं से प्रभावित होने जैसी स्थितियों से आर्सेनिक विषाक्तता पैदा हो सकती है. आहार अथवा पानी के माध्यम से 12 से 50 माइक्रोग्राम/दिन की दर से आर्सेनिक का अंतर्ग्रहण सुरक्षित माना जाता है. शोध अध्ययनों से मिले परिणामों के अनुसार लंबी अवधि तक उच्च मात्रा में आर्सेनिक से प्रभावित होने की स्थिति में विकास से जुड़ी असामान्यताएं, मधुमेह, कार्डियोवैस्कुलर रोग, फेफड़े का रोग, सुनने की क्षमता में कमी, लीवर सिरोसिस एवं लीवर फाइब्रोसिस, एनीमिया (खून में हीमोग्लोबिन की कमी), युओसिनोफीलिया, तंत्रिका संबंधी विकार और विभिन्न प्रकार के कैंसर जैसी स्वास्थ्य समस्याएं पैदा हो सकती हैं. गर्भवती महिला के आर्सेनिक से प्रभावित होने पर प्लासेंटा के माध्यम से भ्रूण के प्रभावित होने का खतरा रहता है. जिसके परिणामस्वरूप स्वत: गर्भपात, मृत जन्म यानी स्टिल बर्थ, निर्धारित अवधि से पूर्व शिशु जन्म और जन्म के समय नवजात का भार कम होने जैसी स्थितियां देखी जाती हैं. *इंटरनेशनल एजेंसी फॉर रिसर्च ऑन कैंसर* के मुताबिक आर्सेनिक और आर्सेनिक के योगिकों से

प्रभावित होने पर त्वचा के रंग में बदलाव और उनमें विक्षतियां पैदा होती हैं, जो त्वचा के कैंसर की संभावना व्यक्त करती है. आर्सेनिक विषाक्तता से क्रोमोसोम में गड़बड़ी होने और डीएनए में क्षतिग्रस्त होने का खतरा पैदा हो सकता है.

मरकरी यानी पारा

सब्जियों को फंगल रोगों से बचाने के लिए प्रयुक्त फंगीसाइड में पारा मिला होता है. हालांकि, बिजली के उपकरणों जैसे स्विच, थर्मोस्टैट, बैटरी, फ्लोरेसेंट बल्ब, थर्मामीटर, बैरोमीटर, मरकरी स्विच, न्यूक्लियर रिएक्टर्स के साथ-साथ पेंट उद्योग, कुछ साबुनों और त्वचा की क्रीमों को तैयार करने में पारा का प्रयोग किया जाता है. शरीर में मरकरी का प्रवेश सांस के माध्यम से अथवा इससे सन्दूषित आहार के सेवन के माध्यम से होता है. मरकरी की विषाक्तता के कारण तंत्रिका विषाक्तता के साथ-साथ जठरांत्रीय पथ में यह अवशोषित होकर पूरे शरीर में संचरित हो जाता है. इसके अलावा मरकरी गुर्दों, बालों, तंत्रिका के ऊतकों और यकृत में जमा हो जाता है. जिसके प्रभाव में खांसी, ज्वर, लड़खड़ा कर चलने, तंत्रिका में विकृति, शरीर भार में गिरावट, सेलाइवा यानी लार अधिक बनने तथा पसीना अधिक बहने जैसी स्वास्थ्य समस्याएं पैदा होती हैं. अध्ययनों में देखा गया है कि मरकरी की विषाक्तता में पुरुषों एवं महिलाओं दोनों की प्रजनन क्षमता में गिरावट आती है. गर्भावस्था में मरकरी की विषाक्तता के परिणामस्वरूप नवजात का शारीरिक एवं मानसिक विकास बाधित हो सकता है.

कॉपर

सब्जियों की फसलों को फंगस रोगों से बचाने लिए फंजीसाइड्स (फंगसनाशी दवाइयों) के निर्माण में कॉपर का प्रयोग किया जाता है. कॉपर विषाक्तता की स्थिति में इसकी एक बड़ी मात्रा यकृत में भंडारित होकर तंत्रिका प्रणाली के गैंगलिया, न्यूरॉन्स, सेरीब्रम और हिप्पोकैंपस जैसे महत्वपूर्ण अंग प्रभावित हो जाते हैं. गर्भावस्था में कॉपर की अधिकता में विल्सन रोग, यकृत विकार (सिरोसिस, हेपेटाइटिस, गैस्ट्रोएन्टराइटिस), तंत्रिका विकार (अल्जाइमर और पार्किंसन रोग) व्यक्तित्व एवं व्यवहार में बदलाव जैसी समस्याएं पैदा होती हैं.

ज़िंक

सन्दूषित आहार और जल के सेवन, ज़िंक सप्लीमेंट का अधिक सेवन करने से जिंक विषाक्तता पैदा होती है. आहार के माध्यम से 100 मिलीग्राम से अधिक मात्रा में ज़िंक की उपलब्धता पेट में दर्द, वमन, अतिसार और मतली जैसी समस्याएं पैदा करती हैं. मधुमेह की स्थिति में लंबी अवधि तक ज़िंक के अधिक सेवन से कॉपर का अवशोषण बाधित हो जाता है जिससे मधुमेह से संबंधित प्रतिरक्षा प्रणाली प्रभावित हो सकती है.

निकिल

निकिल पादप, जंतु और मानव में एक आवश्यक सूक्ष्म मात्रिक तत्व होता है. मानव शरीर में इसका प्रवेश सन्दूषित जल और आहार के सेवन, सिगरेट के धूम्रपान जैसे माध्यमों से होकर रक्त, मूत्र और शरीर के ऊतकों में इसका स्तर बढ़ जाता है. इन स्थितियों में यकृत, गुर्दा, स्प्लीन (प्लीहा) मस्तिष्क और ऊतकों से संबंधित विकार के साथ-साथ एग्जिमा, नाक और फेफड़े के कैंसर जैसी गंभीर स्वास्थ्य समस्याएं उभर सकती हैं.

हमारे परिवेश में मौजूद प्रदूषक, खाद्य सुरक्षा, और मानव स्वास्थ्य एक दूसरे से जुड़े अत्यंत जटिल पहलू हैं. हाल के दिनों में हमारे परिवेश में भारी धातुओं की मात्रा काफी बढ़ी है. हालांकि, विकासशील और विकसित देशों में सब्जियों में मौजूद भारी धातुओं की मात्रा में काफी विविधता है. अल्प विकसित देशों में सब्जियों के भारी धातुओं से सन्दूषित होने के पीछे उनकी फसलों को गैरशोधित मल जल से सिंचाई करना है. सब्जियां उगाई जाने वाली मिट्टी में मौजूद भारी धातुओं से भी उनका सन्दूषित होना एक अत्यंत जटिल प्रक्रिया है. सब्जियों को भारी धातुओं से सन्दूषित होने से बचाने के लिए औद्योगिक प्रतिष्ठानों से निकले गैर संशोधित जल से उनकी सिंचाई करने से बचना

ही सबसे उत्तम तरीका है. हमारे कृषि वैज्ञानिकों को सन्दूषित सब्जियों में भारी धातुओं की वास्तविक मात्रा के निर्धारण और उनसे बचाव की दिशा में अधिक शोध करने की आवश्यकता है. तभी एक बड़ी आबादी को भारी धातुओं से सन्दूषित सब्जियों के सेवन से उत्पन्न होने वाली गंभीर स्वास्थ्य समस्याओं से बचाया जा सकता है.
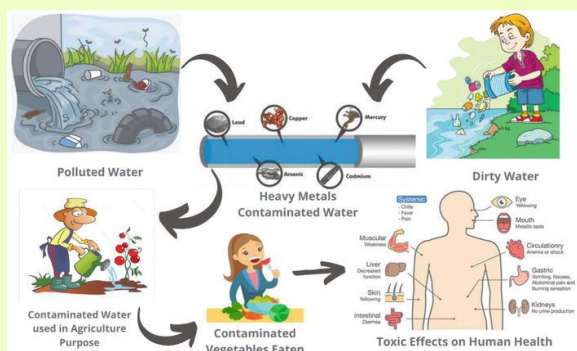
इस तरह कहा जा सकता है कि भारी धातुओं का प्रदूषण विश्व स्तर पर दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा है जिससे मिट्टी, पानी के प्राकृतिक स्रोतों के प्रभावित होने के साथ-साथ वायु की गुणवत्ता निरन्तर गिरती जा रही है. शरीर के विभिन्न अंगों और ऊतकों में इन भारी धातुओं की मात्रा सह्यता सीमा (संस्तुत सीमा) से अधिक होने पर कार्डियोवैस्कुलर (हृदय वाहिकीय), तंत्रिका संबंधी, पाचन प्रणाली, प्रजनन क्षमता संबंधी, एंडोक्राइन संबंधी विकारों के साथ-साथ फेफड़े, किडनी, त्वचा के कैंसर जैसी गंभीर स्वास्थ्य समस्याएं पैदा होती हैं. भारी धातुओं से सन्दूषित सब्जियों के सेवन से बचकर काफी हद तक कई स्वास्थ्य समस्याओं से बचा जा सकता है. सब्जियों की खेती में अपशिष्ट जल से सिंचाई नहीं करने के प्रति किसानों में जागरूकता पैदा करना इसके बचाव में सहायक हो सकता है.

भारी धातु	स्रोत	स्वास्थ्य पर प्रभाव
क्रोमियम	पेंट, फंगीसाइड, पेस्टीसाइड	कैंसर, नेफ्राइटिस और अल्सर
सीसा यानी लेड	प्लास्टिक, बैटरी, वाहन के धुएं, गैसोलीन	कार्डियोवैस्कुलर रोग, तंत्रिका विषाक्त रोग का खतरा
कैडमियम	रासायनिक उर्वरक प्लास्टिक	कैंसर जनक, जैविक प्रणाली में कैल्शियम के नियमन में परिवर्तन, उत्परिवर्तन उत्प्रेरक यानी म्यूटाजेनिक, फेफड़े में क्षति, हड्डियों में भंगुरता
ज़िंक	रासायनिक उर्वरक	चक्कर आना, थकान, वमन, गुर्दे में क्षति, प्रतिरक्षा क्षमता में गिरावट
निकिल	इलेक्ट्रोप्लेटिंग	फेफड़े का कैंसर, प्रतिरक्षा विषाक्तता के कारण एलर्जी, तंत्रिका विषाक्तता, जीन विषाक्तता और इनफर्टिलिटी यानी प्रजनन क्षमता में कमी
कॉपर	इलेक्ट्रॉनिक वस्तुएं, लकड़ियों को संरक्षित रखने में प्रयुक्त रसायन, आर्किटेक्चर	मस्तिष्क में क्षति, क्रॉनिक एनीमिया, किडनी में क्षति, आंत में जलन, लीवर सिरोसिस, स्वत: गर्भपात, और भ्रूण अवस्था में मधुमेह
आर्सेनिक	पेस्टीसाइड्स, हर्बीसाइड्स और लकड़ियों से बने उत्पाद	प्रतिरक्षा क्षमता, प्रजनन क्षमता और विकास से संबंधित परिवर्तन, कैंसर
मरकरी यानी पारा	इलेक्ट्रिक स्विच, रेक्टिफायर, सीएफएल बल्ब, कैटालिस्ट्स	तंत्रिका और प्रतिरक्षा से संबंधित विकार, किडनी और फेफड़ों के लिए जानलेवा

स्रोत : हेवी मेटल कंटेमिनेशन इन वेजिटेबल्स, जनवरी, 2022

गाय आधारित प्राकृतिक खेती

ज्योति स्वरुप

वैज्ञानिक, उद्यान, कृषि विज्ञान केंद्र, संभल

प्रकृति ने हमें दोहन के लिए निःशुल्क उपहार प्रदान किए हैं. हमने स्वार्थ के लिए प्रकृति से खिलवाड़ करना प्रारम्भ किया, जिसके परिणाम हमें भुगतने पड़ रहे हैं. जिसमें प्रमुख है विषाक्त कृषि एवं खाद्य पदार्थ. फसल उत्पादन में कृषि रसायनों का अधिक व अनियंत्रित प्रयोग चिंताजनक है. ये मानव स्वास्थ्य पर तत्काल प्रभाव प्रदर्शित नहीं करते, बल्कि समय के साथ, गंभीर रोगों का कारण बनते हैं. कीटनाशक सामान्यतः कार्सिनोजेनिक (कैंसर) उत्पन्न करने वाले, टैराटोजेनिक (विकृति उत्पन्न करने वाले) तथा ट्यूमरोजेनिक (ट्यूमर तथा सिस्ट उत्पन्न करने वाले) प्रभाव के लिए जाने जाते हैं. कई अध्ययनों में पाया गया है कि कृषि रसायनों से कैंसर होने की आशंकाएं बढ़ जाती हैं. इनमें ल्यूकेमिया, लिम्फोमा, मस्तिष्क, गुर्दे, स्तन, प्रोस्टेट, अग्न्याशय, यकृत, फेफड़े और त्वचा के कैंसर शामिल हैं. पंजाब और हरियाणा में किसानों व कृषि श्रमिकों के बीच कैंसर की बढ़ी हुई दर इस बात का प्रमाण है. किसान, श्रमिक, निवासी और इनसे जुड़े उपभोक्ता विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्र में, दैनिक गतिविधियों द्वारा कीटनाशकों के संपर्क में आते हैं, इसलिए उन्हें इन रसायनों से अधिक जोखिम होता है. यदि हम आने वाली पीढ़ी व समाज को स्वस्थ देखना चाहते हैं तो प्राकृतिक खेती ही एक प्रभावी विकल्प दृष्टिगोचर होता है. ऐसी स्थिति में प्राकृतिक खेती ही एक मात्र विकल्प है जो हमें स्वास्थ्य एवं संवृद्धि के मार्ग पर ला सकता है.

प्राकृतिक खेती में पोषण प्रबंधन : पौधों के सामान्य विकास एवं वृद्धि हेतु कुल 16 पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है. इनमें से किसी एक पोषक तत्व की कमी होने पर पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और भरपूर फसल नहीं मिलती. कार्बन, हाइड्रोजन व आक्सीजन को पौधे हवा एवं जल से प्राप्त करते हैं. नाइट्रोजन, फस्फोरस एवं पोटैशियम को पौधे मिट्टी से प्राप्त करते है. इनकी पौधों को काफी मात्रा में जरूरत रहती है. इन्हें प्रमुख पोषक तत्व कहते है. कैल्शियम, मैग्नीशियम एवं गन्धक को पौधे कम मात्रा में ग्रहण करते है. इन्हें गौण अथवा द्वितीयक पोषक तत्व कहते है. लोहा, जस्ता, मैंगनीज, तांबा, बोरोन, मोलिब्डेनम और क्लोरीन तत्वों की पौधों को काफी मात्रा में आवश्यकता पडती है. इन्हे सूक्ष्म पोषक तत्त्व कहते है.

खेती में हरी खाद, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट आदि का प्रयोग फसल की बुवाई से पहले करने से मृदा में सूक्ष्म जीवों की क्रियाशीलता बढ़ती है, जिससे भूमि में पाए जाने वाले मुक्त जीवाणु जैसे एजोटोबैक्टर, ऐक्टिनोमायसीट्स आदि के द्वारा वातावरण की लगभग 78 फीसदी नाइट्रोजन पौधों को उपलब्ध कराने में सक्षम हैं, जिससे हमारी नाइट्रोजन जनित उर्वरकों की आवश्यकता पूर्ण होती है तथा इसी प्रकार से पी एस बी जीवाणु के माध्यम से फास्फोरस तत्व की आवश्यकता पूर्ण होती है, जिससे फास्फोरस जनित उर्वरकों पर हमारी निर्भरता दूर हो सकती है, तथा मृदा में जीवांश की मात्रा बढ़ने से पोटाश व पोषक तत्व आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं, जिससे पौधे के वृद्धि और विकास हेतु सभी तत्व प्राकृतिक रूप से फसल की प्रारंभिक अवस्था के लिए आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं.

हंप वाली देसी गाय प्राकृतिक खेती का मुख्य आधार

हंप वाली देसी गाय के गोबर में जीवाणुओं की संख्या असंख्य रूप से पायी जाती है, यह जीवाणु पौधों को प्राकृतिक रूप से पोषण देने में सहायक सिद्ध होते हैं. गौ-मूत्र में खनिज लवण पाए जाते हैं, जिसके प्रयोग से पौधों में सूक्ष्म तत्वों की आवश्यकता पूर्ण होती है. यदि गाय के गोबर और गौमूत्र से जैव नियामक तैयार करके बीज शोधन मृदा, शोधन के लिए व खड़ी फसल पर प्रयोग किये जाएँ तो समय समय पर फसल में आवश्यक पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में मिलने से उत्पादन में वृद्धि होगी. **प्राकृतिक खेती** का मुख्य आधार देसी गाय है. प्राकृतिक खेती कृषि की प्राचीन पद्धति है. यह भूमि के प्राकृतिक स्वरूप को बनाए रखती है. प्राकृतिक खेती में रासायनिक कीटनाशक का उपयोग नहीं किया जाता है.

जैव नियामकों का उपयोग : गाय के गोबर और गौमूत्र से पंचगव्य, जीवामृत, बीजामृत, अमृत पानी, वर्मी वाश आदि जैव नियामक तैयार करके एक निश्चित समय अंतराल में फसलों पर प्रयोग करना चाहिए जिससे फसलों के लिये संतुलित पोषक तत्व उपलब्ध होते रहते हैं. इन जैव नियामकों के मृदा में प्रयोग से भूमि में केचुओं की संख्या में भी वृद्धि होती है, जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति में भी वृद्धि होती है, साथ ही साथ जमीन पोली हो जाती है और उसमें जल धारण क्षमता में वृद्धि होती है, जिससे पौधों की जड़ें गहराई तक जाती हैं और तेज हवा चलने पर भी फसल गिरती नहीं है.

रोग /व्याधियों /कीटों से नियंत्रण : जैव नियामकों के प्रयोग से पौधों में रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि होने से साधारण रोग व व्याधियां सामान्य तौर पर प्रकोप नहीं कर पाती हैं, साथ ही साथ इनके प्रयोग से रोग कारक कवक व जीवाणु नष्ट हो जाते हैं. इन जैव नियामकों में अखाद्य पेड़ पौधों जैसे नीम, धतूरा, मदार आदि की पत्तियों को मिलाकर सड़ाने से बायो पेस्टिसाइड बनाकर उपयोग करने से कीटो के प्रकोप में नियंत्रण होता है.

फसल अवशेषों का प्रयोग : यह प्रायः देखा जा रहा है कि भूमि आर्गेनिक कार्बन की मात्रा दिन प्रति दिन काम होती जा रही, भूमि में आर्गेनिक कार्बन की मात्रा 1 प्रतिशत से अधिक होनी चाहिए. जो घटकर. 0.3 से 0.4 प्रतिशत तक जा पहुंची है, जोकि मृदा स्वास्थ व प्राकृतिक खेती के दृष्टिकोण से अत्यंत ही चिंताजनक है. इसको व्यवस्थित करने के लिए हमें उपरोक्त बातों का अनुसरण करते हुए फसलों के अवशेषों को भूमि में ही सड़ाकर उनका उपयोग सुनिश्चित करना होगा. हमें यह ध्यान देना है कि फसल अवशेषों को जलाया न जाये. फसल अवशेषों को जलाने से उनमें उपस्थित पोषक तत्व जो हम आगामी फसल में उपयोग कर सकते हैं, वो नष्ट हो जाते हैं. फसल अवशेषों के जलने से मृदा का तापमान बढ़ जाता है, सूक्ष्म जीव व मित्र जीव नष्ट हो जाते हैं, जिससे फसल, भूमि व वातावरण पर अत्यंत ही बुरा प्रभाव पड़ता है.

कोलेस्ट्रॉल : समस्या और बचाव

प्रो. सुबोध भटनागर

अधिष्ठाता, जैव प्रौद्योगिकी (सेवा-निवृत्त)

आधुनिकता के इस युग में हम सभी की जीवन शैली और खान पान की आदतों में अभूतपूर्व बदलाव आया है. भागती दौड़ती ज़िन्दगी में जहां मिला, जिस समय मिला और जो मिला वही खा लिया जाता है. नौकरी या काम काज के दबाव तले समय के अभाव ने रेस्टोरेंट या बाहर से लाए गए फास्ट फूड पर हमारी निर्भरता और भी बढ़ा दी है.

कई बार हम आधुनिकता की मानसिकता लिए भी बाहर जाकर खाने को प्राथमिकता देने लगे हैं. व्यायाम का अभाव, दिन भर ऑनलाइन कार्य करने के कारण कोलेस्ट्रॉल की समस्या पैदा हो जाती है. अच्छे और खराब दो तरह के कोलेस्ट्रॉल में से खराब कोलेस्ट्रॉल का बढ़ना हमारी रक्त धमनियों में रक्त के प्रवाह को प्रभावित करता है. जिस तरह एक ट्यूब में लगातार जमते कचरे से पानी का बहाव काम हो जाता है ठीक उसी तरह हमारी धमनियां कोलेस्ट्रॉल के जमाव के कारण संकरी हो जाती है जिससे खून के संचार में रुकावट आने लगती है. जल्दी जल्दी सांस फूलना इसका एक प्रमुख लक्षण है. रक्त के संचार हेतु ऐसी परिस्थिति में हमारे हृदय को ज़्यादा काम करना पड़ता है और उसकी मांस पेशियां कमजोर होने लगती हैं. यही प्रायः हृदय आघात या हार्ट अटैक का कारण बन जाता है. दूसरी तरफ अच्छा कोलेस्ट्रॉल हमारे शरीर के लिए फायदेमंद है और विभिन्न प्रकार से हमारी मांस पेशियों का सेहयोग करता है.

गलत डाइट के साथ मोटापा और तनाव खून में खराब कोलेस्ट्रॉल को बढ़ावा देता है.

हमारे पूर्वजों ने अपने सदियों पुराने अनुभवों एवं प्राकृतिक अनुसंधानों के आधार पर कई ऐसी बातों को प्रचलित किया जो हमे अनेकों प्रकार की बीमारियों से बचने में मदद करती है. यह बात अलग है कि हम इन पर कितना भरोसा करते हैं क्योंकि आधुनिक अनुसंधानों ने इन परंपरागत औषधीय पद्धतियों को किसी न किसी रूप में प्रभावित तो किया ही है. ऐसी ही कुछ दीर्घ काल से हमारे ऋषि मुनियों द्वारा सुझाए गए बुरे कोलेस्ट्रॉल के जमाव से बचाव के प्रचलित तरीकों के बारे में बताने का प्रयास कर रहा हूं. इसका अर्थ गंभीर परिस्थितियों में आधुनिक उपचार से परहेज़ करते रहने का नहीं है, परन्तु यदि हम इन विधियों को प्रयोग में लाए तो काफी हद तक गंभीर परिस्थिति से बचा जा सकता है:

1. सोया मिल्क

सोयाबीन लेगुमिनोसी कुल का पौधा है, जिसकी सबसे ज़्यादा खेती मध्य प्रदेश में होती है. यह हमारे भोजन में प्रोटीन की कमी को पूरा करता है. हालांकि लगभग सभी दालों में प्रोटीन होता है फिर भी सोयाबीन को प्रोटीन का प्रमुख स्रोत माना जाता है. सोयाबीन से बड़ियां, नमकीन सरीके कई उत्पाद बनाए जाते हैं लेकिन इससे बना मिल्क कोलेस्ट्रॉल को कम करने

के लिए सबसे ज़्यादा फायदेमंद माना जाता है. सोया में सैचुरेटेड फैट की मात्रा बहुत कम होती है जिसके कारण शरीर में गंदे कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम किया जा सकता है. सोया मिल्क के रोजाना सेवन करने से हृदय रोग के जोखिम को कम किया जा सकता है.

2. टमाटर का रस

टमाटर भारत में प्रयोग होने वाली प्रमुख सब्जियों में से एक है जिसे सब्जी के स्वाद को बढ़ावा देने के लिए इस्तेमाल किया जाता है. टमाटर के और भी कई उपयोग हैं, जैसे प्यूरी, सॉस, पेस्ट आदि. बुरे कोलेस्ट्रॉल के जमाव को रोकने के लिए रोजाना टमाटर का जूस पीना बहुत फायदेमंद है, क्योंकि इसमें लाल रंग का लाइकोपीन नामक तत्व पाया जाता है, जो लिपिड के स्तर में सुधार करता हैं और खराब कोलेस्ट्रॉल अथवा एल डी एल को शरीर में कम करने में मदद करता है.

3. ओट्स

ओट्स ग्रेमिनी कुल का गेहूं जैसा पौधा होता है. यदि हम शारीरिक फिटनेस की बात करें तो ओट्स को सबसे उपयोगी माना जाता है. प्रतिदिन नाश्ते के रूप में ओट्स का प्रयोग कई रूप में फायदेमंद होता है क्योंकि यह बेहद हल्का होने के अलावा प्रोटीन को स्मूदी भी बनाता हैं, जिससे सेहत में आश्चर्यजनक सुधार होता है. फाइबर युक्त होने के कारण यह आंत की सुरक्षा के लिए सबसे अच्छा है जिससे आंत में जमा गंदगी निकल जाती है. ओट्स में बीटा-ग्लूकेन्स होते हैं जिससे आंतों में एक जैल जैसा चिपचिपा पदार्थ बनता हैं जो खराब कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करता है और हमारे हृदय को सुरक्षित रखता है.

4. बेरी

बेरी सोलानेसी कुल का फल है जिसके सेवन से हमारे मस्तिष्क में न्यूरॉन्स अर्थात सूचनाओं का संचार करने वाली तंत्रिकाएं सक्रिय हो जाती हैं जो कोलेस्ट्रॉल को कम करने में मदद करती है. बेरी में एंटीऑक्सिडेंट अर्थात रिएक्टिव ऑक्सीजन आयन को निष्क्रिय करने वाले तत्वों के साथ साथ फाइबर युक्त पदार्थ भी बहुत अधिक मात्रा में पाए जाते हैं जो दोनों कोलेस्ट्रॉल में सामंजस्य बिठाने का काम करते हैं.

हमारे सुधि पाठको के लिए यह बताना आवश्यक है कि हमारे पूर्वजों द्वारा सुझाए गए यह उपाय उनके लंबे अनुभवों का परिणाम हैं और उनके अथक प्रयास से इन सभी को हमारी दिनचर्या में शामिल करके उन्होंने हमें स्वस्थ रखने का मार्ग प्रशस्त किया. इन उपायों को जानकारी के लिए बताया गया है, और इनको किसी प्रकार से औषधीय परामर्श न माना जाए.

केंचुए पर विकिरण का प्रभाव

डॉ. श्यामाश्री घोष

जैविक विज्ञान विद्यालय, राष्ट्रीय विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान संस्थान
भुवनेश्वर, ओडिशा - 752050

डॉ. श्यामश्री घोष (एमएससी, पीएचडी, पीजीडीएचई, पीजीडीबीआई), 2016 से वैज्ञानिक एफ, स्कूल ऑफ बायोलॉजिकल साइंसेज, राष्ट्रीय विज्ञान शिक्षा और अनुसंधान संस्थान, भुवनेश्वर, उड़ीसा में कार्यरत. 1998 में प्रेसीडेंसी कॉलेज कोलकाता, कलकत्ता विश्वविद्यालय से जूलॉजी (होनोर्स) के साथ स्नातक. राष्ट्रीय छात्रवृत्ति. 2000 में कलकत्ता विश्वविद्यालय से एम.एससी. बायोटेक्नोलॉजी. इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ केमिकल बायोलॉजी, CSIR, कोलकाता से 2005 में कैंसर जीव विज्ञान में पीएचडी. मणिपाल हेल्थ सिस्टम्स, बैंगलोर और इंडियन एसोसिएशन ऑफ द कल्टीवेशन ऑफ साइंसेज, कोलकाता में पोस्ट-डॉक्टरल रिसर्च में स्टेम सेल और नैनो टेक्नोलॉजी में काम. 2009 तक स्नातकोत्तर कॉलेज में जैव प्रौद्योगिकी विभाग प्रमुख. केंचुए, कीट, प्रतिरक्षा विज्ञान, कैंसर जीव विज्ञान, ग्लाइको-बायोलॉजी, कम्प्यूटेशनल इम्यूनोलॉजी और नैनो-टेक्नोलॉजी में अकशेरुकी जीव विज्ञान में काम. 68 लेख, 12 पुस्तक अध्याय और 12 पुस्तकें लिखी हैं. IANCAS-ERC, JAZR पत्रिकाओं की संपादक सदस्य. सोसाइटी फॉर बायोलॉजिकल केमिस्ट, इंडियन साइंस कांग्रेस, AZRA, जूलॉजिकल सोसाइटी ऑफ कोलकाता की आजीवन सदस्य.

सार

केंचुए जीवों को भारत के विभिन्न राज्यों में वितरित पाया जाता है जिसमें 14 फॅमिली (family) और 445 वैध प्रजातियां (valid species) शामिल हैं. चूंकि वे मिट्टी में रहते हैं, वे रोगजनक, प्रदूषकों और हानिकारक विकिरण के संपर्क में आते हैं. विकिरण में विद्युत चुम्बकीय विकिरण शामिल हैं, जिसमें प्रकाश और रेडियो तरंगें और रेडियोधर्मी समस्थानिकों के क्षय द्वारा जारी की गई उच्च-ऊर्जा आयनीकरण विकिरण, जिसमें एक्स-किरणें, गामा किरणें, अल्फा और बीटा किरणें शामिल हैं जो परमाणुओं को तोड़ने और रासायनिक बंधनों को तोड़ने से मनुष्य और पशु के स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचा सकती हैं, डीएनए को नुकसान पहुंचा सकती हैं और कैंसर भी हो सकता है. इस संदर्भ में चूहों के पशु मॉडल का बड़े पैमाने पर अध्ययन किया गया है. केंचुए मिट्टी के जीवों का प्रमुख घटक हैं, जो मिट्टी की उर्वरता में योगदान करते हैं और पोषक तत्व को बढ़ाते हैं. कार्बनिक पदार्थों का उत्पादन करते हैं, जिससे मिट्टी के पोषक तत्व बढ़ते हैं. इसलिए केंचुओं पर विकिरण के प्रभावों को समझना और उनका अध्ययन करना महत्वपूर्ण है.

इस लेख में केंचुए पर विकिरणशील रसायनों के प्रभाव पर विश्व भर में हाल के निष्कर्षों पर चर्चा की गई है.

1. परिचय

मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने में केंचुओं का गहरा महत्व है. केंचुओं की अनेकीक (anecic) प्रजातियाँ मिट्टी की गहरी परतों में स्थाई बिल बनाती हैं, एंडोगेइक (endogeic) प्रजाति मृदा की ऊपरी खनिज परत में अस्थायी बिल बनाती है, एपिजिक (epigeic) प्रजातियां मिट्टी की सतह पर जीवित रहती हैं, और सड़ने वाले कार्बनिक पदार्थों पर भोजन करती हैं और कार्बनिक और अकार्बनिक पदार्थों के मिश्रण का कारण बनती हैं. इस प्रकार मिट्टी की सतह को मिश्रित करती हैं. कार्बनिक और अकार्बनिक पदार्थ, पोषक तत्वों और पानी में समृद्ध उनके उत्सर्जन से सूक्ष्मजीवी गतिविधि में वृद्धि हो सकती है. केंचुए की, मूत्र और श्लेष्म में नाइट्रोजन (N), फॉस्फोरस (P), पोटेशियम (K) और कैल्शियम (Ca) तत्व पौधों द्वारा आसानी से लिए जा सकते हैं. बढ़े हुए कार्बन (C) और नाइट्रोजन (N) के साथ केंचुए के कास्टस (casts) पौधों की वृद्धि और मिट्टी के सूक्ष्म जीवों के स्थिरीकरण को बढ़ा सकता है. प्राकृतिक और आकस्मिक स्रोतों से मिट्टी में विकिरणशील प्रदूषण, कृषि और मिट्टी के बायोटा को प्रभावित करता है. लेकिन हानिकारक विकिरण को केंचुओं के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालने के लिए जाना जाता है. केंचुए पर विकिरणशील रसायनों के प्रभाव के निष्कर्षों पर चर्चा करते हैं.

2. भारत में केंचुओं का वितरण

केंचुए फाइलम एनेलिडा (Annelida) से संबंधित हैं, क्लास ओलिगोचेटा (Oligochaeta) वास्तव में सिलोमाटे (Coelomate) जीव हैं. वे जिस मिट्टी में रहते हैं उसमें रोगजनक, प्रदूषकों, हानिकारक विकिरण के संपर्क में आते हैं.

वे पूरे भारत में जैव-विविधता (bio-diversity) के साथ वैश्विक वितरण को प्रकट करते हैं. केंचुए को भारत के विभिन्न राज्यों में वितरित पाया जाता है और विभिन्न मिट्टी की स्थिति में पाया जाता है. भारत के 20 कृषि आर्थिक क्षेत्रों (एईजेड) के तहत शामिल है, जिसमें 14 फॅमिली (family) और 445 वैध प्रजातियां (valid species) शामिल हैं. यह एक दिलचस्प अध्ययन है, जिसे भारत से पहली बार रिपोर्ट किया जा रहा है. मिट्टी में वे प्रदूषकों, रोगजनकों और विकिरणों के संपर्क में आते हैं, जो उनके स्वास्थ्य, संख्या, व्यवहार्यता और प्रजनन को प्रभावित करते हैं.
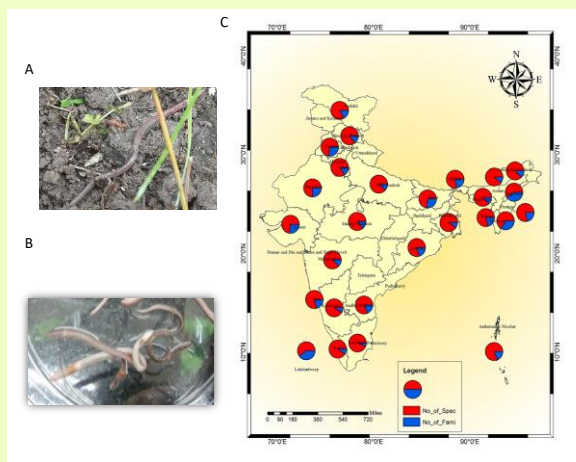
चित्र 1: A. मिट्टी में केंचुए, B. प्रयोगशाला में केंचुए, C. भारत के राज्यों में केंचुओं का वितरण: लाल: प्रजातियों (species) की संख्या, नीला: फॅमिली (family) की संख्या

3. केंचुए पर विकिरणशीलता का प्रभाव

केंचुए लगातार मिट्टी में प्रदूषकों के संपर्क में रहते हैं और प्रदूषक क्षरण पर उनके प्रभावों का अध्ययन रेडियोधर्मी ट्रेसर के अनुप्रयोग द्वारा किया गया है. यूवी-सी पेरीओनीक्स एक्वावेटस में एसएसडीएनए और डीएनए डबल स्ट्रैंड के टूटने का कारण बनता है, जिससे जीनोम अखंडता, एपोप्टोसिस और नेक्रोसिस मार्ग द्वारा कोशिका मृत्यु को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है.

14C-ट्रेसरों ने बिसफेनॉल एफ (बीपीएफ) आइसोमर्स (14C-bisphenol F isomers) के प्रभावों का पता लगाने में सक्षम बनाया है, जो फेनोलिक रेजिन डिमर (phenolic resin dimers) हैं, जो पर्यावरण पर फिनोल (phenol) और फॉर्मलाडेहाइड (formaldehyde) से बने हैं. जब केंचुए मेटाफायर गिलेल्मी (Metaphire guillelmi) की उपस्थिति में एक ऑक्सिक चावल की मिट्टी में अध्ययन किया गया तो इसने खनिजकरण को कम कर दिया जिससे मिट्टी में उत्पन्न 4,4'-BPF के बाध्य अवशेषों (बीआर) की संख्या में वृद्धि हुई, जिससे 4,4'-BPF के पारिस्थितिक जोखिम में वृद्धि हुई. मेटाफायर गिलेल्मी (Metaphire guillelmi) से 14C लेबल वाले रेसमिक साइक्लोक्साप्रिड (सीवाईसी, 14C labelled racemic cycloxaprid (CYC) के जैव संचय और बाध्य, या गैर-निकालने योग्य अवशेषों की विमुक्ति की सूचना मिली और एम गिलेल्मी से 14C रेडिओ-लेबेल्ड नोनिल-फेनॉल (radiolabelled nonylphenol) के बायो-एकुमुलेसन (bioaccumulation) की भी सूचना मिली थी.

फुकुशिमा दाई-इची परमाणु ऊर्जा संयंत्र दुर्घटना (Fukushima Dai-ichi Nuclear Power Plant accident) के बाद, मेगास्कोलेसिडे (Megascolecidae) फॅमिली के जापानी एपिजिक (Japanese epigeic) केंचुओं में रेडियो-सीज़ियम 137Cs एक रेडियोधर्मी आइसोटोप की वृद्धि हुई थी.

चित्र 2: केंचुए पर विकिरण का प्रभाव

मिट्टी से सीज़ियम का संचय, कार्बनिक पदार्थों से 134C और पौधे के अपशिष्ट से 137Cs को केंचुए अपोरेक्टोडिया लोंगा (Aporrectodea longa) से जाना जाता था और यह केंचुए के पेट में उनके बायो-एकुमुलेसन (bioaccumulation) का संकेत देता था.

हालांकि नैनो-कण, मानव जीवन के लिए महत्व पाते हैं, लेकिन उनका अनुप्रयोग और सुरक्षा वैश्विक चिंता का विषय है. उन्हें पर्यावरण प्रदूषक के रूप में जाना जाता है, जो ट्राफिक स्तरों पर जानवरों को प्रभावित करते हैं.

रेडिओ-लेबेल्ड सेरियम डाइ-ऑक्साइड नैनो-पार्टिकल्स (CeO2 NPs) और टिन डाइ-ऑक्साइड नैनो-पार्टिकल्स (SnO2 NPs) जब केंचुए ईसेनिया फेटिडा (Eisenia fetida) के संपर्क में आए तो पता चला कि उन्होंने भोजन के साथ केंचुए में प्रवेश किया और मलमूत्र में छोड़ा. मिट्टी से 14C-पाइरेन (1[4]C-pyrene) और 14C-लिंडेन (14C-lindane) ने ईसेनिया फेटिडा (Eisenia fetida) में बायो-एकुमुलेसन (bioaccumulation) का खुलासा किया. 14C-TNT (trinitrotoluene) के संपर्क में आने से ईसेनिया फेटिडा (Eisenia fetida) लंबे समय तक अर्ध-आयु के साथ गैर-निष्कर्षण योग्य अवशेषों के रूप में संचय को प्रकट करता है, और TNT संदूषण के बायोमार्कर संकेतक के रूप में महत्व पाता है. रेडियोधर्मी लेबल वाले टीएनटी (radiolabelled TNT) के बायो-एकुमुलेसन (bioaccumulation) को चिरोनोमस टेंटन्स (Chironomus tentans) और एल. वेरिगेट्स (L. variegates) से सूचित किया गया है.

डेल्टा-2-14C-डायज़िनॉन (Delta-2-14C-diazinon) केंचुए के संपर्क में आने पर ईसेनिया फेटिडा (Eisenia fetida) सेविग्नी को भोजन के साथ लिया गया और केंचुए ऊतक से पाया गया.

ओंटारियो और सस्केचेवान, कनाडा में लुम्ब्रिकुलस वेरिएगेट्स में तलछट और पानी से रेडियम 226 जैव संचय का पता चला था.

तलछट से रेडिओ-लेबेल्ड सिंथेटिक स्टेरॉयड 17 अल्फा-एथिनिल-एस्ट्राडियोल (radio-labelled synthetic steroid 17 alpha-ethinylestradiol, 14C-EE2) की खाद्य श्रृंखला में एक बायो-एकुमुलेसन (bioaccumulation) और स्थानांतरण लुम्ब्रिकुलस वेरिएगेट्स (Lumbriculus variegates) से सूचित किया गया है.

14C-लेबल वाले टेट्रा- और पेंटाब्रोमो डिपेनिलथर (14C-labeled tetra- and pentabromo diphenylether), लुम्ब्रिकुलस वेरिएगेट्स (Lumbriculus variegates) में बायो-एकुमुलेसन (bioaccumulation) का पता चला और इसे ट्रॉफिक स्तर के माध्यम से स्थानांतरित किया जा सकता है.

L. variegatus में, 14C रेडिओ-लेबेल्ड का बायो-एकुमुलेसन (bioaccumulation) 2,4-डाइक्लोरोफेनोल, 2,4,5-ट्राइक्लोरोफेनोल, पेंटाक्लोरोफेनोल, पाइरेन, फेनप्रोपिडिन, और ट्राइफ्लुरलिन की सूचना मिली है. 60Co विकिरण द्वारा जीर्ण विकिरण ई. भ्रूण की प्रजनन क्षमता को कम करता है.

4. विचार-विमर्श

केंचुए को प्रकृति का हल भी कहा जाता है. हालांकि, प्राकृतिक और मानव-जनित दोनों स्रोतों से मिट्टी में पर्यावरण प्रदूषकों से केंचुए के स्वास्थ्य को अत्यधिक खतरा है. नैनो-पार्टिकल्स, हानिकारक रसायन और रेडियोधर्मी अपशिष्ट जैव संचय और विभिन्न पोषी स्तरों में स्थानांतरण, पौधों द्वारा ग्रहण करने और केंचुए के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालने की प्रमुख चुनौतियों का सामना करते हैं.

केंचुए प्रतिरक्षा प्रणाली पर किए गए अध्ययनों से रोगजनकों और प्रदूषकों का मुकाबला करने के लिए एक मजबूत प्रतिरक्षा प्रणाली का पता चला है. हालांकि विभिन्न पर्यावरण प्रदूषकों के केंचुए की प्रतिरक्षा प्रणाली और स्वास्थ्य को प्रभावित करने की सूचना मिली है, लेकिन केंचुओं की प्रतिरक्षा प्रणाली पर रेडियोधर्मी रसायनों के प्रभाव पर बहुत कम अध्ययन किए गए हैं. इस लेख में विभिन्न रेडियोधर्मी रसायनों के प्रभाव की समीक्षा और सारांश दिया है.

अध्ययन से यह देखा गया कि केंचुए की प्रतिरक्षा प्रणाली प्रकृति में मजबूत होती है, जिसमें कोइलोम साइटोलिटिक फैक्टर (CCF), रोगाणुरोधी पेप्टाइड्स (AMPs), लाइसिन सहित कोइलोमिक द्रव में घटक एक आदिम जीव में होने के बावजूद होते हैं. केंचुए की प्रतिरक्षा प्रणाली पर रेडियो-न्यूक्लिओ-टाइड्स के डाउन स्ट्रीम पाथवे प्रभावों पर, तथा, सिग्नलिंग पाथवे और जैव रासायनिक और हिस्टोलॉजिकल में अब तक कोई अध्ययन नहीं किया गया है.

यह भी देखा गया कि भारत से अब तक रिपोर्ट किए गए अभिलेखों से एक सूचना अंतराल है. भारत से केंचुओं की विभिन्न प्रजातियों पर रेडियो-न्यूक्लिओ-टाइड्स के प्रभाव पर प्रकाशित साहित्य का कोई डेटा नहीं देखा गया. इस तरह के अध्ययनों को इको-टॉक्सिकोलॉजी और केंचुए स्वास्थ्य की निगरानी से महत्व मिलेगा.

सेहत के लिए लाभदायक सोयाबीन

डॉ. विभा खरे

सूर्यपुरम, नन्दनपुरा, झाँसी – 284003

बेहतरीन पोषक तत्वों से भरपूर सोयाबीन स्वस्थ आहार का एक मुख्य हिस्सा है। सोयाबीन को उच्च प्रोटीन का एक सर्वोत्तम और संतुलित स्रोत माना जाता हैं। सोयाबीन से बना खाद्य पदार्थ न सिर्फ पौष्टिक और सस्ता है, बल्कि यह स्वास्थ्य के लिए बहुत ही फायदेमंद है। आज पूर्व और पश्चिम दोनों में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष तौर पर सैकड़ों प्रकार के व्यंजनों के साथ सोयाबीन खान–पान का एक मुख्य हिस्सा बन गया है।

बीमारियों से लड़ने की क्षमता

हम में से ऐसा कौन होगा जो स्वस्थ, प्रसन्न और तनाव मुक्त नहीं दिखना चाहेगा? खराब खान–पान और गलत रहन–सहन, अनेक प्रकार की बीमारियां पैदा कर रहे हैं। कई बीमारियां हैं, जिनसे हम खान–पान में बदलाव लाकर बचाव कर सकते हैं। वसा की कम मात्रा और उच्च प्रोटीन से भरपूर सोयाबीन युक्त आहार बीमारियों से बचाव में हमारे शरीर की काफी मदद कर सकता है। 40 प्रतिशत प्रोटीन, 20 प्रतिशत कॉलेस्टेरॉल युक्त ऑयल, 24 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेड तथा खनिज एंव विटामिन सहित कई अन्य पोषक तत्वों से भरपूर सोयाबीन में बीमारियों से लड़ने की अद्भुत क्षमता है।

हृदय की धमनियों को स्वस्थ बनाने में कारगर

आज हृदय रोगों से ज्यादा लोगों की मौत हो रही है। यह हमारे खान–पान और रहन–सहन से जुड़ी हुई हैं। जब हम पैदा होते हैं, तो उस वक्त हमारे शरीर के अन्दर की रक्त धमनियां पूरी तरह से साफ, स्वस्थ और लचीली होती है। हृदय पंप करके इन्हीं रक्त धमनियों के जरिये पूरे शरीर में रक्त का संचार करता है। अगर धमनियां साफ और स्वस्थ रहती हैं तो हृदय का काम सुचारू रूप से चलता रहता है, अन्यथा हम हृदय रोग की चपेट में आ जाते हैं। अनुसंधानों से यह पता चला है कि हृदय रोग से होने वाली 75 प्रतिशत मौतें 'एथरोक्लेरोसिस' के कारण होती हैं। धमनियों में रूकावट उत्पन्न होने के कारण एथरोक्लेरोसिस का खतरा पैदा होता हैं। रक्त में कॉलेस्टेरॉल की मात्रा बढ़ जाने से एथरोक्लेरोसिस की आशंका बढ़ जाती हैं। अध्ययनों से यह साबित है कि पौधों के प्राकृतिक घटकों–खासकर सोयाबीन कोलेस्टेरॉल के जमाव को आश्चर्यजनक ढंग से कम कर सकता है और हृदय की धमनियों को स्वस्थ बनाने में मदद कर सकता है।

कैंसर से लड़ सकता सोयाबीन

'गेनिस्टेइन' सोयाबीन का एक मुख्य तत्व है, जो वास्तव में कैंसर से लड़ सकता है। अमेरिका बायोकेमिस्टों के मुताबिक गेनिस्टेइन ट्यूमर सेल्स की ग्रोथ को रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता हैं। सोयाबीन से तैयार खाना खासतौर पर 'स्तन कैंसर' और 'प्रोस्टेट कैंसर' की आशंकाओं को कम करता है।

सोयाबीन के इस्तेमाल ने ऐसी महिलाओं को भी थोड़ी राहत दी है, जो रजोनिवृत्ति के दिनों में अनेक प्रकार की परेशानियों से घिरी रहती हैं। रजोनिवृत्ति के लक्षणों का इलाज एस्ट्रोजन थेरेपी के जरिये होता था। अब खान–पान में सुधार रजोनिवृत्त के कष्ट को कम कर सकती है।

विटामिन 'ई' का प्रमुख स्रोत सोयाबीन का तेल

सोयाबीन का तेल विटामिन 'ई' का एक प्रमुख स्रोत है। विटामिन ई प्राकृतिक रूप में आमतौर पर सब्जियों, गिरीदार फल, कुछ मछलियां और सोयाबीन में पाया जाता है। सोयाबीन को हम विभिन्न रूपों में इस्तेमाल करते हैं, मसलन सोया आटा, सोया मिल्क, सोया बड़ी, सोया पनीर और सोया सॉस आदि। इनमें सोया बड़ी हमारे यहां पहले से ही काफी प्रचलित रही है। सब्जियों में सोया बड़ी का इस्तेमाल हमारे यहां काफी लोकप्रिय है, इससे व्यंजन में प्रोटीन की मात्रा बढ़ जाती है और यह खाने में मीट जैसा लगता है।

शाकाहारी मीट सोयाबीन

सोयाबीन को अकसर 'शाकाहारी मीट' कहा जाता है। अरहर, उरद, मूंग और चना जैसी अन्य दालों की तुलना में यह एक समग्र वेजिटेबिल फूड है। सोयाबीन में प्रोटीन किसी भी दाल, मूंगफली, मीट या मछली से दो गुणा, और दूध की तुलना में दस गुणा ज्यादा है। यह प्रोटीन एमिनो का संतुलित मिश्रण है, जो प्रोटीन के किसी भी दूसरे अन्य वेजिटेबल स्रोत से बेहतर है।

सोयाबीन ऑयल

सोयाबीन में तकरीबन 20 प्रतिशत ऑयल है, जबकि गाय के दूध में इसकी मात्रा 3.5 प्रतिशत और दूसरे आम बीन में इसकी मात्रा 1.5 प्रतिशत है। इसलिए ऑयल के मामले में सोयाबीन सर्वोत्तम है। ऑयल हमें कार्बोहाइड्रेड और प्रोटीन्स की दुगुनी कैलोरी प्रदान करता है। सोयाबीन में पाए जाने वाले ऑयल का 85 प्रतिशत हिस्सा असंतृप्त है और कोलेस्टेरॉल से मुक्त है। यह ऐसे लोगों के लिए जरूरी है जिन्हें ज्यादा प्रोटीन की जरूरत है। कुपोषण को दूर करने की इसमें अद्भुत क्षमता है और खासकर भारत जैसे देश में जहां कुपोषण एक गंभीर समस्या है। सोयाबीन आसानी से उपलब्ध होने वाला एक ऐसा कम खर्चीला प्राकृतिक खाद्य पदार्थ है, जो न सिर्फ शरीर को चुस्त–दुरूस्त बनाता है, बल्कि यह हमारे शरीर को बीमारियों से मुक्त रखने में मदद करता है।

पर्यावरण प्रदूषण: एक सार्वभौमिक समस्या

प्रकृति और मानव एक दूसरे से जुड़े हैं। प्रकृति के विनाश से मानव जाति के अस्तित्व को खतरा है। इसलिए हर व्यक्ति के लिए यह ख्याल रखना जरूरी है कि प्रकृति को नुकसान पहुंचाना, दरअसल खुद को नुकसान पहुंचाना है।

प्राकृतिक संपदा की रक्षा करने में हम भी हाथ बंटा सकते हैं। एक कार्यकर्ता, वैज्ञानिक या शिक्षाविद की ही यह जिम्मेवारी नहीं है, हमारी भी है। अपनी रोजमर्रा की जिंदगी में कुछ बातों का ख्याल रखते हुए काम करने के तरीके में थोड़ा बदलाव लाकर इस जिम्मेदारी को बखूबी निभा सकते हैं।

हमारे देश में उपलब्ध ऊर्जा का पचास प्रतिशत सिर्फ ईंधन के रूप में इस्तेमाल होता है। अगर हर व्यक्ति थोड़ी–थोड़ी ईंधन की बचत करे तो इसका फायदा उन पेड़ों को होगा, जो ईंधन के फेर में निरंतर कटते रहते हैं। खाना हमेशा बर्तन ढक कर बनाना चाहिए और कम **लौ** पर। गैस के चूल्हे में छोटे स्टोव ज्यादा प्रयोग में लायें। खाना बनाने के लिए प्रेशर कुकर का इस्तेमाल ईंधन और आपका समय बचाने का अच्छा तरीका हे। खाना तैयार होने के बाद पूरा परिवार एक साथ खाना खाए, तो परिश्रम और वक्त के साथ ईंधन की भी बचत होगी।

चाहे शहरों में बसे लोग हों या गांवों में, पहाड़ पर रहने वाले हों या सहरा में पानी की समस्या सबके सामने है। पानी हमें प्रकृति देती हैं। यह अनमोल है इसका ध्यान हमें रखना होगा। बार–बार नल को खोलने–बंद करने की मेहनत से बचने के लिए हम छोटे–छोटे कामों के बीच नल को खुला छोड़ देते हैं। नहाने, हाथ–मुंह धोते या रसोई में काम करते वक्त अगर हम याद रखें कि जरूरत से ज्यादा एक बूंद पानी भी ***व्यर्थ*** नहीं करना है, तो इस अनमोल संपदा को बचाने में यह हमारा सहयोग होगा। वारिश का पानी भी हम प्रयोग में ला सकते हैं। उसे एकत्र कर कपड़े धोने, घर की सफाई या पौधों के लिए।

बिजली की बचत हमारी जिम्मेदारी है। सबसे अच्छा तरीका है जल्दी सोने और जल्दी जागने की आदत। बिजली के इस्तेमाल के हम इस हद तक आदी हो चुके हैं कि 'पावर कट' होते ही हमारा काम रूक जाता है। ख्याल रखना है कि बिना वजह कमरे की लाईट–पंखे या रेडियो टी.वी. नहीं चलायें।

हम गर्म देश में रहते हैं और अपने घरों को गर्मी में ठंडा रखने के नित नये तरीके ढूंढते रहते हैं। ये तरीके बिजली से उपलब्ध होते हैं, लेकिन कुछ पुराने उपाय हैं घरों को ठंडा रखने के जिसे हम भूल चुके हैं। घर की छत फर्श पर 'व्हाइट वाश' की तीन परत की गयी हो, तो इससे तापमान में फर्क हो जाता है। गर्मी के मौसम में नीचे की खिड़कियां बंद रखें, ऊपर के रोशनदान खुले रखने चाहिए। रात भर खिड़की खुली रखने के बाद सुबह उसे बंद करना चाहिए। अगर सूर्य की किरणें सीधी आपकी खिड़की की तरफ आती हों, तो पर्दे बाहरी तरफ से लगाइए। अगर खस का इस्तेमाल करते हैं।

पानी ठंडा करने के लिए फ्रिज है, फिर भी मटका या सुराही जरूरी है। मटके का पानी फ्रिज में रखा जाये, तो बिजली की बचत होती है।

अगर अपनी थोड़ी–सी जमीन है, प्रकृति को नजदीक ला सकते हैं। आपने कभी पेड़ लगाया है। इससे कितनी खुशी मिलती है। ज्यादा पेड़ लगाने की जगह आप खूबसूरत–सा बाड़ा लगाना चाहते हैं तो ठीक है, लेकिन ध्यान रहे कि घास जरूर लगायी जाये। यह आंखों को तो राहत देती ही है। मिट्टी को उपजाऊ बनाने में घास सहायक होती है। मिट्टी और पानी को बचाने में भी घास फायदेमंद है। हस्तशिल्पियों के लिए यह बहुत उपयोगी है। तमाम तरह की चीजें इससे बना ली जाती है। घास को धूप की सबसे ज्यादा जरूरत होती है। लघु उद्योगों से लेकर कागज और अल्कोहल इंडस्ट्री के लिए भी घास का पौधा उपयोगी होता है।

भारत में तकरीबन 14–15 लाख टन कागज का उत्पादन होता है। इसके लिए कच्चा माल है बांस और पेड़। कागज उत्पादन के लिए कितने पेड़ कटते होंगे? कागज का इस्तेमाल कम किया जा सकता है। दोनों तरफ लिखना चाहिए।

जरूरत हमें जागरूक होने और अपनी जिम्मेदारी को समझने की है। छोटी–छोटी बातों का ख्याल रख हम वातावरण को साफ–सुथरा रखने में सहायता कर सकते हैं। अपने दोस्तों रिश्तेदारों से इस मुद्दे पर बातें कीजिए कि अपनी प्राकृतिक संपदा को बचाये रखना कितना आवश्यक है। यह व्यक्तिगत मामला नहीं, बल्कि एक सार्वभौमिक समस्या है।

कैसे होता है आगमन बरखा का

मानसून शब्द अरबी भाषा के मौसिन और मलय भाषा के मोनसिन शब्द से बना है। जिसका मतलब है हवाओं के नियमित मार्ग में अस्थाई परिवर्तन। लेकिन ऐसी व्यवस्था सभी जगह समान नहीं होती। जरूरत के मुताबिक कभी–कभी कहीं–कहीं होती है।

विश्वव्यापी नहीं होता मानसून

मानसून विश्वव्यापी नहीं होता। उसकी रंगत उष्टकटिबंध में पड़ने वाले कुछ देशों में ही दिखाई देती है। ये हैं – उत्तरी गोलार्द्ध में पड़ने वाले भारतीय उपमहाद्वीप, दक्षिण–पूर्व एशिया, दक्षिणी चीन, फिलीपींस और अफ्रीका का विषुवत रेखा पर पड़ने वाला हिस्सा। दक्षिण गोलार्द्ध में पड़ने वाले देश मसलन दक्षिण अमेरिका के कुछ हिस्से, आस्ट्रेलिया, इंडोनेशिया के कुछ भू–भाग और अफ्रीका।

मौसम वैज्ञानिक मानसून को इस तरह परिभाषित करते हैं कि वे ऐसी सामयिक हवाएं हैं, हर साल जिनकी दिशाओं में दो बार उलट–पलट होती है। उत्तर–पूर्व और दक्षिण–पश्चिम में मानसूनी हवाओं की दिशाओं में बदलाव वैज्ञानिक भाषा में कोरिओलिक बल के चलते होता है। यह बल गतिशील पिंडों पर असर डालता है। हमारी पृथ्वी भी गतिशील पिंड है जिसकी दो गतियां हैं – दैनिक गति और वार्षिक गति। नतीजतन, उत्तरी गोलार्द्ध में मानसूनी हवाएं दाईं ओर मुड़ जाती हैं और दक्षिणी गोलार्द्ध में बाईं ओर। वायुगति के इस परिवर्तन की खोज पहले पहल फेरल नामक वैज्ञानिक ने की थी। इसीलिए इस नियम को फेरल का नियम कहते हैं। जमीन और **वातावरण में** तापमान के अंतर के चलते मानसूनी हवाएं चलती हैं ।

मानसून का जन्म जलवायु वैज्ञानिक घटना

वायुमंडलीय ताप और दबाव से गति उत्पन्न होती है। द्रव की तरह वायु का भी व्यवहार होता है। यानी उच्च भार से निम्न भार की ओर बहना प्रकृति के इस नियम को 'वाइस वैल्ट्स लॉ' कहते हैं। धरती पर ग्लोब के 80 डिग्री से 85 डिग्री उत्तरी और दक्षिणी अक्षांसों में अधिक वायु भार होने के कारण विषुवत रेखा की ओर हवा बहने लगती हैं। मानसून का जन्म विशुद्ध जलवायु वैज्ञानिक घटना है।

हिंद महासागर से इसका जन्म होता है। आगे अरब सागर और बंगाल की खाड़ी से भी ये मानसूनी हवाएं नमी ग्रहण करती हैं। मानसून का मतलब वर्षा ऋतु ही होता है। यानी जिन प्रदेशों में ऋतु बदलते ही हवा की प्रकृति और दिशा बदल जाती है, वे सारे प्रदेश मानसूनी जलवायु के प्रदेश कहे जाते हैं।

अपने देश में जाड़े में स्थल से सागर की ओर यानी भारत से हिंद महासागर की ओर हवाएं चलती हैं और गर्मियों में ठीक इसके विपरीत यानी हिंद महासागर से भारत की ओर। इस प्रकार ये हवाएं ऋतु के अनुसार बदल गईं। इसीलिए मानसूनी हवाएं कहलाईं।

मानसून का अध्ययन प्राचीन काल से

मानसून का अध्ययन प्राचीन काल से है। सिकंदर, अरस्तु, वास्कोडिगामा और एडमंड हेली समेत कई अनुसंधानकर्ताओं ने मानसूनी हवाओं के बारे में विस्तार से लिखा है। अब तो अत्याधुनिक कृत्रिम उपग्रह मानसून का अपलक अध्ययन कर रहे हैं। मानसून के बारे में अब तक के अध्ययनों को ऐतिहासिक संदर्भ में रखने पर तीन विचारधाराएं उभरती हैं। ये बताती हैं कि मानसून की उत्पत्ति कहां और कैसे होती है।

मानसून की प्राचीनतम विचारधारा

सबसे पहला मत पुराना है। जिसे जलवायु विज्ञान में 'क्लासिकल स्कूल' कहते हैं। पुराने जमाने में न तो अच्छे किस्म के यंत्रों का अविष्कार हुआ था और न ही विज्ञान इतना विकसित था। अतीत के अध्ययन और अनुभव के नतीजों के बतौर मानसून को ताप रहित हवाएं माना गया। जब सूर्य दक्षिणायण में लंबवत चमकता है। तब अपने यहां जाड़े का मौसम रहता है। उस समय दक्षिण भारत का तापमान अधिक रहता है और हिंद महासागर में स्थूल दबाव का केंद्र बन जाता है। इसके विपरीत उत्तर भारत में कम तापमान की वजह से अधिक दबाव का क्षेत्र बन जाता है। प्रकृति का नियम है कि अधिक दबाव से हवाएं कम दबाव की ओर चलती हैं। ये स्थानीय होती हैं।

लेकिन जून–जुलाई यानी गर्मियों में इसका उल्टा होता है। इन दिनों सूर्य उत्तरायण यानी कर्क रेखा पर लंबवत चमकता है। यही वजह है कि उत्तर–पश्चिमी भारत तपने लगता है और कम दबाव के क्षेत्र में तब्दील हो जाता है। उधर दक्षिण में हिंद महासागर के उपर कम तापमान के कारण उच्च दबाव का क्षेत्र बन जाता है। उच्च से न्यून दबाव यानी हिंद महासागर से भारत की ओर हवाएं चलने लगती हैं। महासागर से होकर आने के कारण ये हवाएं नम हो जाती हैं। नमीयुक्त होने के कारण भारत व दक्षिण पूर्व एशिया में खूब वर्षा करती हैं। यही है मानसून की प्राचीनतम विचारधारा।

विषुवतरेखीय पश्चिमी हवाएं

दूसरी मान्यता के अनुसार मानसून की कोख विषुवतरेखीय पश्चिमी हवाओं के हवाले है। पृथ्वी पर सूर्य की किरणें साल भर एक ही स्थान पर लंबवत नहीं रहती है। कर्क रेखा पर उत्तरायण में सूर्य के लंबवत चमकने पर वायु दबाव पांच अंश या अधिक उत्तर की ओर व मकर रेखा पर दक्षिणायण में सूर्य के चमकने पर दक्षिणी गोलार्द्ध में खिसक जाता है। इसके चलते जून–जुलाई के महीनों में सूर्य भारत के मध्य भाग से गुजरती कटिबंधीय सीमांत (इंटरट्रापिकल कनवरवेंस) तक खिसक कर उत्तरी भारत के ऊपर आ जाता है। नतीजतन इस सीमांत के मध्य भाग में चलने वाली, भूमध्यरेखीय पछुआ हवाएं भी भारत तक पहुंचने लगती हैं। चूंकि ये हवाएं समुद्र से आती हैं, सो नमीयुक्त होने के कारण भारत में पहुँच कर वर्षा करती हैं। इस विचारधारा के अनुसार भारत में सर्दी के मौसम में उत्तरी हवाएं चलती हैं और ग्रीष्म ऋतु में यहां विषुवतरेखीय पछुआ हवाएं चलती हैं।

आधुनिक विचारधारा

इस विचारधारा के अनुसार भारतीय मानसून दक्षिणी गोलार्द्ध में बहने वाली हवाएं हैं, जो जेट वायुधारा के विक्षोभ से नियंत्रित होती हैं। हिमालय के ऊपर वायुमंडल की ऊपरी पर्तों में यह वायुधारा बहती है। पर्वतराज हिमालय ने ही भारत को रेगिस्तान होने से बचा लिया है। हिमालय भौतिक अवरोध की दीवार ही नहीं खड़ी करता, बल्कि दो भिन्न जलवायु वाले भू–भाग को अलग–अलग भी रखता है। इसलिए कह सकते हैं कि महाकवि कालिदास से लेकर दिनकर तक ने हिमालय की वंदना बेवजह नहीं की है –

साकार, दिव्य, गौरव विराट, पोरुष के पूंजीभूत ज्वाल।
मेरी जननी के हिम किरीट मेरे भारत के दिव्य भाल।
मेरे नगपति, मेरे विशाल।।

हिमालय की वायुधारा के दो भाग हैं। पूर्वी जेट स्ट्रीम और पश्चिमी जेट स्ट्रीम। इस वायु का वेग बहुत तेज है। इसके नामकरण का इतिहास दुःखद घटना के साथ जुड़ा है। जब नागासाकी और हिरोशिमा पर एटम बम गिराने अमेरिकी पायलट जा रहे थे तो हिमालय के ऊपर से उड़ते वक्त उनके जेट की गति कम हो गई और बम डालकर लौटते समय बढ़ गई। कुछ **समय** के लिए जेट वायुयान बेकाबू हो गया। लेकिन इस वायुधारा के बाहर निकलते ही जेट फिर पहले की तरह हो गया। इसी के बाद इस वायुधारा के वैज्ञानिक अध्ययन के बाद सबसे पहले जेट से पाला पड़ने के कारण, इसका नामकरण जेट वायुधारा हो गया। यही जेट वायुधारा मानसून की चाबी है।

अत्याधिुनिक यंत्र व मौसम उपग्रहों के अध्ययन इस दावे को प्रामाणिक ठहराते हैं। मानसून की अनिश्चितता और अनियमितता का स्पष्टीकरण - जेट वायुधारा मध्य जून के आसपास हिमालय से खिसक कर तिब्बत के पठार पर मानी जाती है, उस वर्ष मानसून भारतीय उपमहाद्वीप पर सामान्य होता है। जेट वायुधारा के उत्तर की ओर खिसकने में विलंब की सूरत में मानसून भी विलंब से भारत पहुँचता है और जब यह वायुधारा समय से खिसक जाती है तो मानसून भी समय से भारत में गर्जन करता पहुंच जाता है। हल्की या भारी वर्षा भी जेट वायुधारा के विक्षोभ की वजह से होती है। विक्षोभ के शक्तिशाली होने पर घनघोर वर्षा होती है और कमजोर होने पर बूंदाबांदी होकर रह जाती है।

मानसून हमेशा हौले–हौले आता है

आमतौर पर मानसून एक जून को केरल पहुंचता है, सात जून को बंगाल की खाड़ी, बांग्लादेश, असम और उप हिमालय क्षेत्रों में परिक्रमा के बाद दस जून को बंगाल की बारी आती है और पंद्रह जुलाई तक कश्मीर पहुंच जाता है। पंद्रह जून से पंद्रह सिंतबर के चार महीने के दौरान पूरे देश में तकरीबन 88 से.मी. बारिश होती है। इसमें दस फीसदी तक हेरफेर को स्वाभाविक वर्षा माना जाता है। अधिक होने पर अतिवृष्टि और कम होने पर अनावृष्टि कहा जाता है।

दक्षिण आंध्र, तमिलनाडु और श्रीलंका में उत्तर–पूर्वी मानसून से जाड़े में वर्षा होती है। दक्षिण–पश्चिम मानसून से वहां वर्षा नहीं होती। यही वजह है कि गर्मी में तमिलनाडु में चक्रवाती वर्षा नहीं होने से पीने के पानी का संकट हो जाता है। मौसम वैज्ञानिकों ने भारत के मौसम को मोटे तौर पर चार भागों में बांटा है।

पर्यावरण संरक्षण, मान्यताएं और वैज्ञानिक दृष्टिकोण

दुष्यन्त कुमार अग्रवाल

इंद्रप्रस्थ कॉम्प्लेक्स, सेक्टर -14, उदयपुर (राजस्थान)

जन्म 23 मार्च, 1949. एम.एससी.(फिजिक्स), एम.एड. राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान उदयपुर से शिक्षा अधिकारी पद से सेवानिवृत्त. पत्र पत्रिकाओं के संपादन और लेखन का अनुभव. पुस्तक 'जनसंख्या शिक्षा' हेतु 1996 में स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा पुरस्कृत. राज्य सरकार की प्राथमिक स्तर की पर्यावरण अध्ययन की पाठ्य पुस्तकों का लेखन. नेशनल रिसर्च डिवेलपमेंट कारपोरेशन की मासिक पत्रिका आविष्कार के स्तम्भ 'खेल-खेल में विज्ञान' में 2012 से निरंतर आलेख का प्रकाशन.

हम पर्यावरण के अभिन्न अंग हैं. पर्यावरण को मुख्यतः भौतिक पर्यावरण और सामाजिक पर्यावरण में विभक्त किया जा सकता है. मानव सभ्यता के प्रारम्भ से ही भौतिक पर्यावरण हमारे सामाजिक पर्यावरण को और सामाजिक पर्यावरण हमारे भौतिक पर्यावरण को प्रभावित करता रहा है. वास्तव में दोनों परस्पर अंतर्निर्भर हैं. भौतिक पर्यावरण के अंतर्गत प्राकृतिक पर्यावरण एवं हमारे द्वारा निर्मित कृत्रिम साधनों को लिया जा सकता है. सामाजिक पर्यावरण के अंतर्गत हमारी सोच एवं मानसिक स्थिति तथा हमारे दैनिक क्रियाकलापों को सम्मिलित किया जा सकता है. पर्यावरण हमारे सामाजिक मूल्यों से भी प्रभावित होता है. जल, जंगल और जमीन प्राकृतिक पर्यावरण के प्रमुख घटक हैं. हमारी सोच, विचारधाराएं, आस्थाएं, विश्वास, धारणाएं, मान्यताएं एवं जीवन मूल्य किसी न किसी रूप में पर्यावरण आधारित रहे हैं. ये देश, काल, और परिस्थिति के अनुरूप परिवर्तित होते रहते हैं. इन्होंने हमारे पर्यावरण को तथा अंततः हमारी जीवन गुणवत्ता को गहराई से प्रभावित किया है. समाज के विभिन्न घटक पर्यावरण संरक्षण में अपना योगदान करते रहे हैं. धार्मिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से स्त्रियों की इसमें महत्वपूर्ण प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष भूमिका रही है. प्रत्यक्ष तौर पर राजस्थान में जोधपुर क्षेत्र की अमृता देवी का जंगल की रक्षा हेतु दिया गया बलिदान अतुलनीय एवं अविस्मरणीय उदाहरण है. समय के साथ भौतिक विकास की अंधी दौड़ और बढती जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति की आकांक्षा में हमने अपनी इस अमूल्य दौलत पर्यावरण को बुरी तरह क्षति पहुंचाने में कोई कमी नहीं छोड़ी है. प्राकृतिक संसाधनों का अनियंत्रित दोहन एक गंभीर चुनौती है. आइए वैज्ञानिक दृष्टि से यह जानने-समझने का प्रयास करते हैं कि ऐसी ही बातों और पर्यावरण में हो रहे परिवर्तनों में क्या सम्बन्ध रहा है.

वनवासियों की उनके वनों में गहरी आस्था रही है. वे जीविकोपार्जन करने में वनोपज पर आश्रित रहे हैं. जीवन यापन की इस प्रक्रिया में उनका वनों को बिना कोई हानि पहुंचाए अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति का मानस रहा है. वे सूखी लकड़ियां एकत्र कर जीविकोपार्जन करते रहे हैं. वनों में उनके अपने आस्था केंद्र होते हैं. वे मानते हैं कि वन सम्पदा पर सम्पूर्ण अधिकार उस आस्था केंद्र के देवता का होता है, और वनों को हानि पहुँचाने का परिणाम होगा उनके देवता को रुष्ट करना, परिणामस्वरूप आपदाओं को आमंत्रित करना. इसी आस्था और विश्वास के चलते वे उसका अति दोहन नहीं करते और न हानि पहुंचाते हैं. संभवतः यही कारण रहा होगा कि हमारे पूर्वजों ने पर्वतों, जंगलों, नदियों के तटों, तालाबों आदि में आस्था केंद्रों की स्थापना करने की सोच को अपनाया हो. परन्तु कई इनके पीछे छिपे वैज्ञानिक दृष्टि से अनभिज्ञ प्राकृतिक संसाधनों को अपने निहित तुच्छ स्वार्थों के वशीभूत हानि पहुंचाने से बाज नहीं आते हैं. अतीत में कुछ रेल लाइन वन सम्पदा का दोहन कर उसके परिवहन हेतु ही डाली गई. वनों की लकड़ी पर ठेकेदारों का कब्ज़ा हो जाने के बाद तो वनवासियों को पैसे का लालच देकर हरे पेड़ों को काटने के लिए प्रेरित किया जाने लगा. उन लोगों को संपन्न होता देखकर अन्य वनवासियों के मन में भी आस्था की डोर धीरे-धीरे कमजोर होकर टूटने लगती है और वनों को नुकसान पहुंचना प्रारम्भ हो जाता है.

इस सबके उपरान्त भी कुछ वृक्ष, जैसे - पीपल, बरगद, कदम्ब, कल्पवृक्ष, खेजड़ी, अशोक, आदि ऐसे हैं जो हिन्दुओं में मान्यता के चलते पूजनीय हैं, इस मान्यता के चलते उनको काटते नहीं हैं, अपितु उनकी पूजा करते हैं. श्रीमदभगवतगीता के अध्याय 10 में 26 वें श्लोक का वाक्यांश है - अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां. अर्थात मैं समस्त वृक्षों में अश्वथ (पीपल) हूँ.

सभी सम्प्रदायों में पर्यावरण को महत्व देते हुए उसके संरक्षण को किसी न किसी रूप में महत्व दिया गया है. The Declarations on Nature of 1986 में विभिन्न सम्प्रदायों के पर्यावरण के सम्बन्ध में विचारों को रेखांकित किया गया है.

हिन्दू - हिन्दुओं में अहिंसा सर्वोपरि है. किसी भी जीव की हत्या निषिद्ध है. किसी भी जीव को हानि पहुंचाने से बचा जाता है. ब्रह्माण्ड का प्रत्येक अंश पूजनीय माना गया है. पशु और वनस्पति, पर्वत, नदियां, झीलें आदि सभी प्रकृति के अभिन्न अंग हैं, इसलिए वे पूजनीय हैं. यजुर्वेद का एक संस्कृत श्लोक जिसका कि प्रत्येक पूजन या शुभकार्य के प्रारम्भ और अंत में वाचन किया जाता है, पूर्णतः पर्यावरण को समर्पित है. श्लोक है -

ॐ द्यौ शान्तिरन्तरिक्षः शान्तिः पृथ्वी शान्तिरापः शांतिः रोषधयः शांतिः.
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्मा शान्तिः सर्व शांतिः शान्तिरेव शांतिः सा मा शान्तिरेधि.
ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॐ.

श्लोक का भावार्थ है, 'हे प्रभु सम्पूर्ण त्रिभुवन में शांति कीजिए. जल, थल, नभ, अंतरिक्ष, अग्नि, पवन, औषधि, वनस्पति, वन-उपवन, सकल विश्व, जड़, चेतन, में शांति कीजिए. राष्ट्र निर्माण, सृजन, नगर, ग्राम, भवन, जीव मात्र के तन-मन में और जगत के कण कण में शांति कीजिए. यहाँ शांति का अर्थ व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखा गया है, जिसका अर्थ है ये सभी बने रहें, इनकी गुणवत्ता बनी रहे. विश्नोई के 29 सूत्रों में खेजड़ी वृक्ष को काटना और हिरन का वध जघन्य अपराध है.

इस्लाम - इन्सान का फर्ज है कि वह दुनिया का ख्याल रखे. इंसान को अपने भविष्य के लिए दुनिया अर्थात पर्यावरण के विभिन्न घटकों की देखभाल करते रहना है - पृथ्वी हरी और खूबसूरत है, उसकी रक्षा का फर्ज इन्सान को सौंपा है. सम्पूर्ण पृथ्वी की रचना पूजा (इबादत), शुद्ध और साफ़ रखने के लिए की गई है. यदि एक मुसलमान पेड़ लगाता अथवा खेती करता है, जानवरों और पक्षियों को उसमें से खाने-पीने देता है, वह उसके लिए प्रेम है. जल को बहुत ही सीमित तरीके से उपयोग में लेने का प्रावधान है.

बौद्ध - प्राकृतिक संसाधनों के सीमित दोहन पर बल दिया जाता है. यह सभी प्राकृतिक जीवों की परस्पर निर्भरता में विश्वास करता है. सभी जीव-जंतु, वनस्पतियां, नदियां, पर्वत, जंगल आदि परस्पर निर्भर हैं. जीवन निर्वाह के तरीके ऐसे होने चाहियें जिससे प्राकृतिक तत्वों का विनाश न हो. गौतम बुद्ध का कहना था कि 'वृक्ष आदि काटने में दोष लगता है. कुटि बनाने के लिए वृक्षों का काटा जाना निषिद्ध था. गौतम बुद्ध के निर्देश थे कि जीवों जैसे हाथी, घोड़े, कुत्ते, सांप, बाघ, चीते, भालू, आदि का मांस नहीं खाना चाहिए. उक्त कुछ उदाहरण हैं जो बौद्ध में प्रकृति संरक्षण की महत्ता को दर्शाते हैं. गौतम बुद्ध एवं अन्य भिक्षुओं के प्रवचनों में पर्यावरण एवं उसके संरक्षण को प्रतिपादित करने वाले उदाहरण बहुत हैं. मान्यताओं में वैज्ञानिकता भरी पड़ी है.

जैन - महावीर स्वामी ने कहा है, ' सब्वे सत्ता न हंतव्वा' अर्थात किसी भी प्राणी का वध नहीं करना चाहिए. वनस्पति के जीव और उसके आश्रित जीवों की हिंसा के दोष से मुक्त रहने के लिए तो जमीन के नीचे उगने वाली सब्जियां वर्जित हैं. यहाँ तक कि साधुओं के लिए वर्षा ऋतु में एक ही जगह निवास करना अनिवार्य है, ताकि मार्ग में छोटे जीव जंतु चलने से मर न जाएं. जैन दर्शन में अनेक उदाहरण हैं जो वैसे तो अहिंसा को रेखांकित करते हैं, परन्तु यदि वैज्ञानिक दृष्टि से देखें तो वे पर्यावरण संरक्षण के कठोर नियमों को अभिव्यक्त करते हैं. जैन धर्म में अपरिग्रह एक आवश्यक घटक है. अपरिग्रह अर्थात उपयोगी वस्तुओं को जमा करने की मर्यादा निश्चित की गई है, जो कि वैज्ञानिक दृष्टि से अति दोहन को कम करने की अवधारणा के अनुरूप है. नौ प्रकार की परिग्रह मर्यादाएं निश्चित की गई हैं - कृषि भूमि, अचल सम्पति, रजत एवं स्वर्ण मुद्राएं, नौकर, पशुधन, चल सम्पति, अनाजादि, और गृहस्थी की अन्य वस्तुएं. वैज्ञानिक दृष्टि से विचार करें तो यदि इनकी अनुपालना हो सके तो पर्यावरण संरक्षण में सहायता मिलेगी.

सिक्ख - मानवता और पर्यावरण के मध्य संबंधों को बहुत महत्व दिया गया है. गुरु नानक देव की शिक्षा है कि - प्रकृति जिसे हम देखते हैं, जिसे हम सुनते हैं,

जिसे हम प्रसन्नता एवं आश्चर्य के साथ अनुभव करते हैं, प्रकृति कोई क्षेत्र विशेष नहीं है, वह तो सम्पूर्ण आकाश एवं सम्पूर्ण रचना में है. प्रकृति विभिन्न जीवों, प्रकारों, रंगों, अच्छे कर्मों, स्वयं में, पवन, जल, अग्नि, मिट्टी, सारी प्रकृति तुझमें है, ओ शक्तिशाली रचनाकार तुम ही इसके नियंत्रक हो.

ईसाई - ईसाई अनुयायियों के इस कथन के आधार पर कि मैं एक ईश्वर, पिता, सर्वशक्तिमान, स्वर्ग और पृथ्वी के निर्माता में आस्था रखता हूँ, प्रकृति के प्रति मानव के उत्तरदायित्व को रेखांकित किया जा सकता है. यह भी मान्यता है कि पृथ्वी ईश्वर की है और प्रत्येक वस्तु जो इसमें है, विश्व और उसमें रहने वाले उसके हैं.

वायु प्रदूषण को कम करने में वृक्षों की महत्वपूर्ण भूमिका है. पीपल, बरगद, खेजड़ी आदि वृक्षों का पूजन उनके संरक्षण को सुनिश्चित करता है. जल स्रोतों को पूजा जाता है. गंगा, यमुना, कृष्णा, गोदावरी, नर्मदा, क्षिप्रा, आदि नदियां हमारी आस्था की केंद्र रहीं हैं. पूज्य होने के साथ ही हमारी कुछ गतिविधियां इनके प्रदूषण का कारण बनती हैं. प्लास्टर ऑफ़ पेरिस से निर्मित और रासायनिक रंगों से सज्जित प्रतिमाओं और ताजियों और अस्थियों का विसर्जन जल स्रोतों में किया जाता है, जिससे वे प्रदूषित हो जाते हैं. वैज्ञानिक दृष्टकोण से लोग शनैः शनैः जागरूक होने लगें हैं और प्रदूषण से बचने के साथ ही अपनी आस्था को अपनाए रख सकें ऐसे उपाय करने लगें हैं. कच्ची मिटटी की प्रतिमाएं, होली आदि में हर्बल रंगों का उपयोग, जल स्रोतों के पास विसर्जन हेतु विशेष प्रावधान, घरों में ही प्रतिमाओं का विसर्जन जैसे नवाचार अपनाए जाने लगें हैं.

हमारे शास्त्रों में ही ऐसी बातें हैं, जिनका प्रसार और उनकी वैज्ञानिक व्याख्या प्रदूषण रोकने में सहायक हो सकती हैं. गीता के अध्याय 10 में श्लोक 31 है –

पवनः पवतामस्मि रामः शस्त्रभृतामहम.
झषाणां मकरच्श्रास्मि स्रोतसामस्मि जाह्नवी.

अर्थात मैं समस्त पवित्र करने वालों में वायु हूँ, शस्त्रधारियों में राम, मछलियों में मगर, नदियों में गंगा हूँ. यहाँ भी वायु, मछलियों, और नदियों को महत्व दिया गया है, इसी महत्व को लोगों के समक्ष स्पष्ट करने की आवश्यकता है. कई संतों ने भी पर्यावरण संरक्षण को रेखांकित किया है. किसी कवि ने जल के महत्व को दर्शाते हुए कहा है -

जल हीरा जल जोहरी, जल मोतियन की खान.
निगाह उठाकर देखिये जल बिन जगत वीरान.

वायु, जल, वृक्ष आदि के साथ ही उपजाऊ भूमि भी एक महत्वपूर्ण संसाधन है. उसकी उर्वरता निरंतर कम होती जा रही है. दीपावली के दूसरे दिन गोवर्धन पूजा की जाती है, इसमें घर के बाहर द्वार पर गोबर से विशेष आकृति बनाकर उसकी पूजा की जाती है. संभवतः यह गोबर खाद के महत्व को दर्शाता है. आवश्यकता इस वैज्ञानिक तथ्य को लोगों तक पहुँचाने की है. होलिका दहन के पीछे संभवतः यह मान्यता रही है कि वर्ष भर का कूड़ा करकट जला दिया जाए, पर अब तो सेमल जैसी औषधीय महत्व की लकड़ी का बहुतायत में उपयोग किया जा रहा है. इससे तापमान में भी वृद्धि होती है. क्या हम सीमित संख्या में होलिका दहन को प्रतीकात्मक रूप दे सकते हैं? शमशानों और कब्रिस्तानों में वृक्षों की संख्या बहुत अधिक होती है और वे उस क्षेत्र में ऑक्सीजन उत्पन्न करने वाले पॉकेट्स होते हैं. परन्तु बढ़ती जनसँख्या की आवश्यकता की पूर्ति के लिए लकड़ी और जमीन की कमी होती जा रही है. बड़े शहरों में तो शव दाह के लिए लकड़ी का उपयोग उसकी सीमित उपलब्धता के कारण कम हो गया है, उसकी जगह गैस और विद्युत् शवदाह गृह ले रहे हैं.

पर्यावरण संरक्षण में महिलाओं की भूमिका रही है, न केवल सांस्कृतिक-धार्मिक क्रियाकलापों अपितु प्रत्यक्ष आंदोलनों से जुड़कर भी इस वर्ग ने अपनी सार्थकता सिद्ध की है, उन्हें वैज्ञानिक दृष्टि से जागरूक कर पर्यावरण संरक्षण में उनकी भूमिका बढ़ा सकते हैं.

अंत में : हमने अपने व्यवहार में काफी कुछ बदलाव तो कर लिया है, लेकिन पर्यावरण के साथ सामंजस्य बिठाने के प्रयास में पिछड़ रहे हैं. हमारी संस्कृति, अनेक मान्यताएं एवं गतिविधियां इको-फ्रैंडली रही हैं पर हम अब इससे दूर होते जा रहे हैं. हमारी अधिकांश आस्थाएं एवं मान्यताएं पर्यावरण संरक्षण में सहायक हैं, जबकि ऐसी मान्यताएं कम हैं जो पर्यावरण के लिए हानिकारक हैं. 'आस्था ने सूखे पहाड़ पर पनपा दिया जंगल' शीर्षक से प्रकाशित समाचार राजस्थान के सुदूर आदिवासी अंचल में स्थित बांसवाड़ा जिले का है. ऐसे प्रयासों को प्रोत्साहित और प्रचारित किया जाना चाहिए. साथ ही आवश्यकता उन मान्यताओं को हतोस्ताहित करने की है, जो पर्यावरण पर विपरीत प्रभाव डालती हैं. ऐसे विकल्प सुझाए जाने होंगे जो लोगों की आस्थाओं को चोट पहुंचाए बिना अपनी और आने वाली पीढ़ियों की जीवन गुणवत्ता का उच्च स्तर सुनिश्चित कर सके.

ऊर्जा संकट का समाधान है न्यूक्लियर फ्यूज़न

विजन कुमार पाण्डेय

प्राचार्य, बड़ी बैग कॉलोनी, गाजीपुर, उ.प्र.

1920 में ब्रिटेन के एस्ट्रो-फिजिसिस्ट आर्थर एडिंगटन ने करीब एक हज़ार वैज्ञानिकों के सामने कार्डिफ़ में एक भाषण दिया था, जिसमें उन्होंने दावा किया कि सूर्य की ऊर्जा की वजह फ्यूज़न है तो लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ. फ्यूज़न के जरिए अपार ऊर्जा पैदा की जा सकती है. उसी समय ये बात भी सामने आई कि तारे अपनी ऊर्जा कैसे पैदा करते हैं. बाद में आर्थर एडिंगटन ने बताया कि सूर्य के अंदर हाइड्रोजन परमाणु इस रफ़्तार से टकराते हैं कि वो आपस में जुड़कर एक नए तत्व हीलियम के परमाणु बना देते हैं. इस प्रक्रिया में क्षय होने वाला द्रव्यमान ऊर्जा में बदल जाता है. यह प्रक्रिया लगातार सूर्य में हो रही है. इसके करीब एक दशक बाद ब्रिटेन के वैज्ञानिक अर्नेस्ट रदरफोर्ड ने सूर्य के अंदर होने वाले रिएक्शन को एक प्रयोगशाला में आजमाया. उन्होंने इसके लिए हाइड्रोजन के दो अलग किस्म के परमाणुओं ट्रिटियम और ड्यूटेरियम का इस्तेमाल किया. तब आम आदमी के इस्तेमाल के लिए फ्यूजन के जरिए ऊर्जा पैदा करने के बारे में किसी ने नहीं सोचा था. फिर 1950 के दशक में सोच बदली. वैज्ञानिक फ्यूज़न रिएक्शन के जरिए ऊर्जा पैदा करने के बारे में सोचने लगे. यह लोगों में उत्साह बढ़ाने वाला दौर था. जिसके कारण 1950 और 1960 के दशक में फ्यूज़न की दिशा में काफी प्रगति हुई.

दरअसल फ्यूजन प्रक्रिया के दो हिस्से होते हैं. पहला मशीन का डिज़ाइन कैसा हो और दूसरा फ्यूज़न हो सके इसके लिए हाइड्रोजन प्लाज़्मा को तैयार करना. प्लाज़्मा हाइड्रोजन परमाणुओं का मिश्रण होता जिनका फ्यूज़न कराया जाता है. रिएक्टर के अंदर वो बेतहाशा गर्म होते हैं और चारों तरफ बिखरे होते हैं. परमाणु एक दूसरे से बच के न निकल सकें, वो टकराएं जिससे उनका फ्यूजन हो और ऊर्जा मिल सके, इसके लिए डिवाइस पर पूरी तरह नियंत्रण रखना बहुत ज़रूरी होता है. इसके लिए बड़े चुंबकों का सहारा लिया जाता है जिससे परमाणुओं को दिशा दी जाती है और वो एक रिंग में तेज़ी से चक्कर लगाते हैं. 1950 में तत्कालीन सोवियत संघ के दो वैज्ञानिकों आंद्रेई सखारोव और इगोर टैम ने ऐसा ही एक डिज़ाइन तैयार किया था. जिसके अच्छे नतीजे सामने आए थे. बाद में इसे टोकोमाक नाम दिया गया था.

आज दुनिया के सबसे बड़े न्यूक्लियर फ्यूजन रिएक्टर में ईंधन परीक्षण को शुरू कर दिया गया है. वैज्ञानिकों की एक टीम फ्रांस में फ्यूजन रिएक्टर को ताकत देने के लिए हाइड्रोजन के एक अत्यंत दुर्लभ रूप की क्षमता का परीक्षण कर रहे हैं. अगर उनका यह परीक्षण सफल होता है तो इससे दुनिया को क्लीन एनर्जी का एक बहुत बड़ा जरिया मिल जाएगा. इससे न केवल जीवाश्म ईंधनों पर निर्भरता घटेगी, बल्कि पर्यावरण को भी लाभ होगा. न्यूक्लियर फ्यूजन लंबे समय तक वातावरण में मौजूद रहने वाले रेडियोधर्मी अपशिष्ट उत्पन्न नहीं करता. यह अक्षय ऊर्जा से भी अधिक विश्वसनीय ऊर्जा स्रोत है. नाभिकीय संलयन द्वारा उत्पन्न ऊर्जा मानव जाति की लंबे समय से चली आ रही खोजों में सबसे महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह तुलनात्मक रूप से काफी स्वच्छ है अर्थात् यह कम कार्बन का उत्सर्जन करती है, साथ ही यह तकनीकी दक्षता के साथ 100% स्वच्छ भी है. इसके एक किलोग्राम संलयन ईंधन से अन्य ऊर्जा स्रोतों की तुलना में करीब 10 मिलियन गुना अधिक ऊर्जा उत्पन्न होती है.

सूरज हमारी उर्जा की सारी कमियों को पूरा कर सकता है. यह एक विशाल रिएक्टर जैसा है. वैज्ञानिकों का प्रयास है कि कृत्रिम सूरज को धरती पर बनाया जाए. इसके लिए ये फ्यूजन तकनीक पर काम कर रहे हैं. सूर्य की चमक इंसानों के लिए हज़ारों साल से आश्चर्य की वजह रही है. लेकिन करीब सौ साल पहले नई खोज द्वारा पता चला कि सूर्य की बेशुमार ऊर्जा का कारण न्यूक्लियर फ्यूज़न है. फिर वैज्ञानिकों ने सोचा कि अगर धरती पर उसी तरह का फ्यूज़न कराया जाए जो सूर्य में हो रहा है तो बहुत कुछ बदल जाएगा और लोगों को बेशुमार ऊर्जा मिल जाएगी.

हमारे सौरमंडल में सूर्य ही ऊर्जा का प्रमुख स्त्रोत है. लेकिन उसमें लगातार हो रहे विस्फोट वैज्ञानिकों के लिए चिंता का विषय बने हुए हैं. हाल ही में उस पर एक विशाल सनस्पॉट प्लाज्मा फटा जिससे सौर तूफान उठ रहा है. ये सौर तूफान अंतरिक्ष में तेजी से आगे बढ़ रहे हैं और रास्ते में आने वाले ग्रहों को प्रभावित कर रहे हैं. इसमें हमारी धरती भी है. अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा ने सूर्य के अध्ययन के लिए एक स्पेसशिप काफी वक्त पहले भेजा था, जिसने हाल ही में वहां से कोरोनल मास इजेक्शन निकलते हुए देखा है जिसका असर पृथ्वी पर भी भविष्य में पड़ने वाला है. यह ऐसी घटना है जिसमें सौर कोरोना से अंतरिक्ष में ऊर्जावान और चुंबकीय प्लाज्मा का एक बड़ा बादल फट जाता है, जिससे पृथ्वी पर रेडियो और चुंबकीय गड़बड़ी होती है.

सूरज में बढ़ते धब्बे का खतरा

सूरज के धब्बे यानी सनस्पॉट्स सूरज के वो अधेंरे इलाके होते हैं, जो सूरज के आंतरिक मैग्नेटिक फ्लक्स की वजह से होते हैं. ये धब्बे अस्थाई होते हैं, लेकिन यह घंटों से लेकर महीनों तक टिके रहते हैं. कई बार ये चुपचाप खत्म भी हो जाते हैं लेकिन अगर ये किसी वजह से सक्रिय होते हैं, तो उनमें तेज विस्फोट होता है फिर यह सौर तूफान के रूप में धरती की ओर आता है जो कई तरह के खतरे पैदा कर सकता है. इसे ही कोरोनल मास इजेक्शन कहते हैं. अगर ये धब्बे सूरज के किसी अनियंत्रित हिस्से में बने होते हैं तो इनसे ज्यादा मैग्नेटिक फील्ड का तूफान उत्पन्न होता है. यह तूफान तब पैदा होता है जब अधिक दबाव में सक्रिय हो रहे धब्बे में प्लाज्मा विस्फोट होता है और ये तीव्र मैग्नेटिक फील्ड बनाता है. ये बेहद घने रेडिएशन वाले पदार्थों को बाहर फेंकते हैं. इसे 'सी' क्लास का सौर तूफान कहते हैं. आमतौर पर यह धरती को नुकसान नहीं पहुंचाते लेकिन अगर पीछे से कोई विस्फोट और हो गया तो इनकी ताकत बढ़ जाती है. इस सौर तूफान के साथ आवेशित कण धरती के उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों के वायुमंडल से टकरा कर अरोरा बनाते हैं जो असल में फोटोंस होते हैं. यह पृथ्वी पर हो रहे वातावरण परिवर्तन के लिए भी जिम्मेदार होते हैं.

नासा के मुताबिक पिछले कुछ महीनों से सूर्य में लगातार विस्फोट हो रहे हैं. जिस वजह से कोरोनल मास इजेक्शन भी हो रहा है. यह नासा द्वारा भेजे गए एयरक्राफ्ट से प्राप्त डेटा के विश्लेषण से पता चला है कि 30 अगस्त को सूर्य के अंदर विस्फोट हुआ था, वहां से जो मास इजेक्शन हुआ, वो तीन दिन बाद शुक्र ग्रह पर पहुंचा जिससे वह बुरी तरह प्रभावित हुआ है. इसके बाद से ये सवाल उठ रहे कि कहीं अगला नंबर पृथ्वी का तो नहीं है? अगर ऐसे सौर तूफान पृथ्वी की ओर आये तो सबसे ज्यादा हमारे सैटेलाइट प्रभावित होंगे. इसके अलावा पावर ग्रिड पर भी इसका असर पड़ सकता है. पिछले सौर तूफान की वजह से ही गैलेक्सी के 15 सैटेलाइटों से संपर्क टूट गया था. इतना ही नहीं ये सौर तूफान अंतरराष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन को भी प्रभावित कर सकता है.

सूर्य भी बूढा हो रहा

सूर्य की मदद से ही पृथ्वी पर जीवन संभव है. जरा सोचिए यदि सूर्य कुछ समय के लिए अपनी स्थिति से हट जाए तो क्या होगा? प्रलय आ जाएगा क्योंकि सूर्य की वजह से ही धरती और बाकी ग्रह अपनी कक्ष के अंदर टिके हुए हैं. आपको बता दें कि हाल ही में सूर्य की उम्र को लेकर एक रिसर्च हुआ जिसमें पता चला कि 4.57 अरब वर्ष पूरा करने के साथ सूर्य लगभग अपनी आधी उम्र पार कर चुका है. धीरे धीरे यह बूढा हो रहा है. लेकिन सूर्य का सौर चक्र अभी भी चरम पर है, जिसकी वजह से लगातार वहां से कोरोनल मास इजेक्शन देखने को मिल रहा है. यह सब वहां न्यूक्लियर फ्यूज़न के कारण हो रहा है जो सूर्य की उम्र को धीरे धीरे कम करता चला जाएगा. सूर्य की उम्र ज्ञात करने के लिए सबसे पहले अंतरिक्ष के अंदर सबसे पुरानी चीजों को तलाशा जाता है जैसे चंद्रमा की चट्टानें, जिनकी मदद से सूर्य की उम्र का अनुमान लगाया गया है. आमतौर पर वैज्ञानिक यह मानते हैं कि सूर्य जैसे तारे लगभग 10 बिलियन वर्ष तक जीवित रहते हैं. सूर्य की असीम ऊर्जा का स्रोत न्यूक्लियर फ्यूजन है. इस न्यूक्लियर फ्यूजन का स्रोत हाइड्रोजन है, जो सूरज के कोर में है. लेकिन यह हाइड्रोजन हमेशा उसी मात्रा में नहीं रहने वाली है. यह हाइड्रोजन धीरे-धीरे खत्म हो रही है. खगोलविदों ने अब सूरज के क्रमिक विकास का एक चार्ट भी तैयार कर लिया है जिससे इसके समाप्ति के समय का भी अंदाजा लग गया है.

न्यूक्लियर फ्यूज़न में चुनौतियां कम नहीं

आज से कुछ सौ साल पहले वैज्ञानिकों को पता चला की सूर्य की असीमित ऊर्जा का असली कारण उसके अंदर होने वाला फ्यूज़न है. लेकिन इस फ्यूज़न का रहस्य पता नहीं चल पाया. सूरज की रोशनी अभी भी हमारे लिए एक रहस्य ही है. सच कहें, तो इसके बारे में बहुत कुछ खोजना अभी बाकी है. लेकिन ये तो सभी को पता है कि सूर्य ऊर्जा का बहुत बड़ा भंडार है. सूरज के इसी फ्यूज़न को धरती पर कराने के प्रयास भी सालों से हो रहे हैं. पिछले पचास सालों से दावे भी जमकर हुए. कहा गया कि बस अगले दशक में हम अपने लक्ष्य पर होंगे. लेकिन अभी तक लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सके. यहां सवाल यह है कि क्या न्यूक्लियर फ्यूज़न से

दुनिया का ऊर्जा संकट दूर हो सकेगा? तो इसका जवाब हां है.

न्यूक्लियर फ्यूज़न वो प्रक्रिया है जहां दो या उससे अधिक परमाणुओं के साथ आने से एक परमाणु बनता है जिससे बड़े पैमाने पर ऊर्जा निकलती है. आइए इसे हम पानी के अणु से समझते हैं. हम जानते हैं कि हाइड्रोजन के दो परमाणु और ऑक्सीजन का एक परमाणु मिलकर पानी का एक अणु बनता है. ये एक अणु तीन परमाणु से मिलकर बनता है. लेकिन फ्यूज़न में आप दो परमाणु लेकर एक परमाणु बनाते हैं. मतलब बहुत सारी ताकत को नियंत्रित करने का हमारा प्रयास होता है. इस प्रक्रिया में बहुत कम दूरी होती है और एक दूसरे को खींचने वाला फोर्स कल्पना से परे होता है. ऐसा होने पर ऊर्जा भी बहुत पैदा होती है. महान अल्बर्ट आइंस्टाइन का सबसे फेमस समीकरण E=mc2 भी यही है. ये समीकरण बताता है कि परमाणु के वजन में हुई कमी ऊर्जा में तब्दील हो जाती है. अभी जो न्यूक्लियर ऊर्जा पैदा करने की जो प्रक्रिया है वो इसके उलट है. मौजूदा न्यूक्लियर पावर प्लांट परमाणुओं को जोड़कर नहीं बल्कि परमाणुओं को अलग-अलग करके ऊर्जा पैदा करते हैं. न्यूक्लियर पावर प्लांट में विखंडन कराना फ्यूजन के मुकाबले आसान होता है. इसकी ऊर्जा को नियंत्रित किया जा सकता है. लेकिन फ्यूज़न के साथ सबसे बड़ी चुनौती है इस प्रक्रिया को चलाए रखना.

1920 के दशक के शुरूआत में ये बात सामने आई थी कि तारे अपनी ऊर्जा कैसे पैदा करते हैं. फिर आर्थर एडिंगटन ने बताया कि सूर्य के अंदर हाइड्रोजन परमाणु इस रफ़्तार से टकराते हैं कि वो आपस में जुड़कर एक नए तत्व हीलियम के परमाणु बना देते हैं. इसके एक दशक के बाद ब्रिटेन के वैज्ञानिक अर्नेस्ट रदरफोर्ड ने सूर्य के अंदर होने वाले रिएक्शन को एक प्रयोगशाला में आजमाया. उन्होंने इसके लिए हाइड्रोजन के दो अलग किस्म के परमाणुओं ट्रिटियम और ड्यूटेरियम का इस्तेमाल किया लेकिन उसमें उनको ज्यादा सफलता नहीं मिली. इस बीच दक्षिणी फ्रांस में दुनिया का पहला न्यूक्लियर फ्यूज़न पावर स्टेशन बनाने की परियोजना पर काम जारी है. इसे इंटरनेशनल थर्मोन्यूक्लियर एक्सपेरिमेंटल रिएक्टर नाम दिया गया है. तीस से ज़्यादा देश अब तक इसमें करीब 20 अरब यूरो लगा चुके हैं. ये पहली परियोजना है जिससे ये साबित होगा कि एक रिएक्टर में आप न्यूक्लियर फ्यूजन के जरिए कितनी ऊर्जा प्राप्त कर सकते हैं. न्यूक्लियर फ्यूज़न में हम दो परमाणु लेते हैं और उनको मिलाकर अणु नहीं बल्कि एक परमाणु बनाते हैं. जिसके कारण बहुत ऊर्जा निकलती है. लेकिन यह बहुत मुश्किल काम होता है. फिर भी वैज्ञानिक इस पर बहुत जोर शोर से जुटे हुए हैं. जिस दिन इसमें सफलता मिल जाएगी उस दिन संसार का सारा ऊर्जा संकट दूर हो जाएगा.

भारत एक तेजी से उभरती अर्थव्यवस्था हैं, जिसमें 130 करोड़ से भी ज्यादा लोग रहते हैं. ऐसे विशाल जन समूह के लिए ऊर्जा की बड़ी मात्रा में आवश्यकता होती है. जिसकी पूर्ति भारत सरकार द्वारा विभिन्न नविनीकरणीय और अनविनीकरणीय संसाधनों का उपयोग करके की जा रही हैं. हमारा देश बिजली को उत्पन्न करने एवं उसकी खपत करने में विश्व में तीसरे स्थान पर है. हालांकि देश में बिजली का उत्पादन हर साल बढ़ रहा हैं, लेकिन बढ़ती जनसंख्या के लिए यह कम ही है. हालांकि भारत के पास एक अति महत्वाकांक्षी स्वदेशी परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम है, जिससे अपेक्षा है कि वर्ष 2024 तक यह 14.6 गीगावाट बिजली का उत्पादन करेगा, जबकि वर्ष 2032 तक बिजली उत्पादन की यह क्षमता 63 गीगावाट हो जाएगी. भारत का लक्ष्य है कि वर्ष 2050 तक देश के 25% बिजली उत्पादन में परमाणु ऊर्जा का योगदान हो.

'परमाणु ईंधन चक्र' का विकास

भारत का परमाणु ऊर्जा भंडार 293 बिलियन टन का है जिसमें अधिकांश योगदान इसके पूर्वी राज्यों जैसे-झारखण्ड, ओड़िसा, छत्तीसगढ़ और पश्चिम बंगाल का है. चूँकि भारत परमाणु अप्रसार संधि में शामिल नहीं है और 34 वर्षों तक इसके परमाणु संयंत्रों और इसके पदार्थों के व्यापार पर प्रतिबंध लगा दिया गया था, जिस कारण यह वर्ष 2009 तक अपनी सिविल परमाणु ऊर्जा का विकास नहीं कर सका. लेकिन अब भारत अपनी परमाणु ऊर्जा क्षमता को बढ़ाने में तत्पर है. इन व्यापार प्रतिबंधों और स्वदेशी यूरेनियम के अभाव को दरकिनार करते हुए भारत थोरियम के भंडारों से लाभ प्राप्त करने के लिये एक 'परमाणु ईंधन चक्र' का विकास कर रहा है जिसका उपयोग बिजली उत्पादन में किया जाएगा. यह ऊर्जा दो प्रक्रियाओं 'नाभिकीय विखंडन' व 'नाभिकीय संलयन' द्वारा प्राप्त की जाएगी. हालांकि पिछले कई वर्षों से विश्व भर में निर्माणाधीन परमाणु रिएक्टरों की संख्या में गिरावट आयी है. विदित हो कि जहाँ 2013 के अंत तक वैश्विक स्तर पर 68 रिएक्टरों का निर्माण कार्य चल रहा था, वहीं 2017 में निर्माणाधीन रिएक्टरों की संख्या घटकर 53 हो चुकी है. ज्ञातव्य हो कि रूस और अमेरिका ने 2016 में अपने पुराने परमाणु रिएक्टर बंद कर दिये थे, जबकि स्वीडन और दक्षिण कोरिया ने अपने पुराने परमाणु रिएक्टरों को 2017 के आरम्भ में ही बंद कर दिए थे.

यहां इस बात पर भी ध्यान देने की जरूरत है कि अधिकांश परमाणु रिएक्टरों का निर्माण कार्य समय पर पूरा नहीं हो पाता और इसी देरी के चलते प्रोजेक्टों की लागत में वृद्धि हो जाती है. साथ ही इससे बिजली का उत्पादन करने में भी अधिक समय लगता है. इसे देखते हुए ही वैश्विक स्तर पर पवन ऊर्जा के उत्पादन में 16% और सौर ऊर्जा उत्पादन में 30% की वृद्धि हुई है. इसीलिए वैज्ञानिक कोशिश कर रहे हैं कि सूर्य में जो नाभिकीय संलयन से जो ऊर्जा मिल रही है उसी प्रक्रिया से धरती पर भी ऊर्जा उत्पन्न की जाए. अगर इसमें सफलता मिल गई तो पूरे विश्व से ऊर्जा की समस्या हमेशा के लिए खत्म हो जाएगी. इसके अलावा कुछ और भी फायदे मिलेंगे जो इस प्रकार होंगे.

- फ्यूजन प्रॉसेस में किसी भी ग्रीनहाउस गैसों का उत्पादन नहीं होता है. इसका मुख्य शक्ति स्रोत हाइड्रोजन पृथ्वी पर प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है. न्यूक्लियर फ्यूजन (नाभिकीय संलयन), न्यूक्लियर फिशन (नाभिकीय विखंडन) से अधिक सुरक्षित भी है.
- फ्यूजन या संलयन की क्रिया में शहरों और उद्योगों को बिजली प्रदान करने हेतु आवश्यक बेसलोड ऊर्जा प्रदान करने की क्षमता होती है. नाभिकीय संलयन रिएक्टर कोई उच्च गतिविधि, लंबे समय तक रहने वाले परमाणु अपशिष्ट का उत्पादन नहीं करते.
- संलयन या फ्यूजन अभिक्रियाएँ प्लाज़्मा नामक पदार्थ की अवस्था में होती हैं. प्लाज़्मा एक गर्म, आवेशित गैस है जो सकारात्मक आयनों और मुक्त गति वाले इलेक्ट्रॉनों से बनी होती है जिसमें ठोस, तरल एवं गैसों से अलग अद्वितीय गुण होते हैं.
- उच्च तापमान पर इलेक्ट्रॉन परमाणु के नाभिक से अलग हो जाते हैं और प्लाज़्मा या पदार्थ की आयनित अवस्था बन जाते हैं. प्लाज़्मा को पदार्थ की चौथी अवस्था के रूप में भी जाना जाता है.
- संलयन के लिये आवश्यक सटीक स्थितियों तक पहुंचना और उन्हें बनाए रखना काफी मुश्किल काम होता है तथा यदि संलयन की प्रक्रिया में कोई गड़बड़ी होती है, तो प्लाज़्मा सेकंड के भीतर ठंडा हो जाता है और प्रतिक्रिया बंद हो जाती है.
- न्यूक्लियर फ्यूजन लंबे समय तक वातावरण में मौजूद रहने वाले रेडियोधर्मी अपशिष्ट उत्पन्न नहीं करता है. यह अक्षय ऊर्जा से भी अधिक विश्वसनीय ऊर्जा का स्रोत है. फ्यूज़न में यूरेनियम और प्लूटोनियम जैसे विखंडनीय पदार्थ उत्पन्न नहीं होते हैं.
- फ्यूजन एनर्जी का उपयोग करने के लिए वैज्ञानिकों ने एक खास तरह का उपकरण विकसित किया है. वह एक खोखली, डोनट के आकार की मशीन है जिसे टोकामक कहा जाता है.
- यह प्रयोग 'संयुक्त यूरोपीय टोरस सुविधा' (JET) साइट में किया गया, जो कि दुनिया में अपनी तरह की सबसे बड़ी परिचालन साइट है.
- टोकामक एक मशीन है, जो चुंबकीय क्षेत्र का उपयोग करके प्लाज़्मा को सीमित करती है, इस प्रक्रिया को वैज्ञानिक भाषा में 'टोरस' नाम से जाना जाता है.
- ड्यूटेरियम और ट्राइटियम हाइड्रोजन के समस्थानिक हैं, इनसे प्लाज़्मा बनाने हेतु इन्हें सूर्य के केंद्र की तुलना में 10 गुना अधिक तापमान पर गर्म किया गया.
- इसके लिये सुपर-कंडक्टर इलेक्ट्रो-मैग्नेट्स का उपयोग किया गया क्योंकि यह घूर्णन के साथ संलयन की क्रिया करने में सक्षम है और ऊष्मा के रूप में अत्यधिक ऊर्जा उत्सर्जित करता है.

निष्कर्ष

आपको बता दें अभी फ्रांस के दक्षिण में दुनिया का पहला न्यूक्लियर फ्यूज़न पावर स्टेशन बनाने की परियोजना पर काम जारी है. इंटरनेशनल थर्मोन्यूक्लियर एक्सपेरिमेंटल नाम के इस रिएक्टर (आईटीईआर) में तीस से ज़्यादा देश अब तक इसमें करीब 20 अरब यूरो लगा चुके हैं. यह एक बहुत बड़ी परियोजना है जिसमें दुनिया की सभी प्रमुख शक्तियों ने निवेश किया है. ये पहली ऐसी परियोजना है जिसके रिएक्टर से साबित होगा कि न्यूक्लियर फ्यूजन के जरिए आप जितनी ऊर्जा का इस्तेमाल करते हैं, उससे कहीं ज़्यादा हासिल करते हैं. ऐसी उम्मीद की जा रही है कि इससे निकलने वाली ऊर्जा की मात्रा करीब 10 गुना होगी. इसके बाद साथ ही अब ऐसा लगने लगा है कि भविष्य में दुनिया से ऊर्जा समस्या दूर हो जाएगी क्योंकि आईटीईआर वैज्ञानिकों का लक्ष्य पहला प्लाज्मा दिसंबर 2025 के लिए निर्धारित है, 2025-2035 में मशीन का प्रगतिशील रैंप-अप किया जाएगा और 2035 में ड्यूटेरियम-ट्रिटियम ऑपरेशन शुरू किये जाने की संभावना है. इस परियोजना में भारत समेत दुनिया के 35 देशों के वैज्ञानिक काम कर रहे हैं. आईटीईआर के 75 फीसदी निर्माण कार्य को पूरा किया जा चुका है. आशा है इस नाभिकीय संलयन से धरती पर एक नए सूरज का उदय होगा जिसका लाभ सभी को मिलेगा.

महासागरों में अनन्य आर्थिक क्षेत्र की वैज्ञानिक महत्ता

डॉ. शुभ्रता मिश्रा

वास्को-द-गामा, गोवा

डॉ. शुभ्रता मिश्रा विज्ञान विषयों पर विगत अनेक वर्षों से सतत लेखन कर रही हैं. उन्होंने वनस्पतिशास्त्र में डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर से एम.एससी तथा विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन से पीएच.डी. की उपाधियां प्राप्त की हैं. विज्ञान तथा समसामयिक विषयों पर उनकी 21 पुस्तकें और 600 से अधिक लेख प्रकाशित हैं. दूरदर्शन, इंडिया साइंस चैनल और आकाशवाणी से विभिन्न कार्यक्रमों के प्रसारण और प्रमुख वैज्ञानिक संस्थानों में आमंत्रित व्याख्यान. भारत सरकार के राजभाषा विभाग द्वारा मौलिक पुस्तक लेखन हेतु पुरस्कार एवं मध्य प्रदेश विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद द्वारा युवा वैज्ञानिक पुरस्कार सहित अनेक पुरस्कारों से सम्मानित हैं.
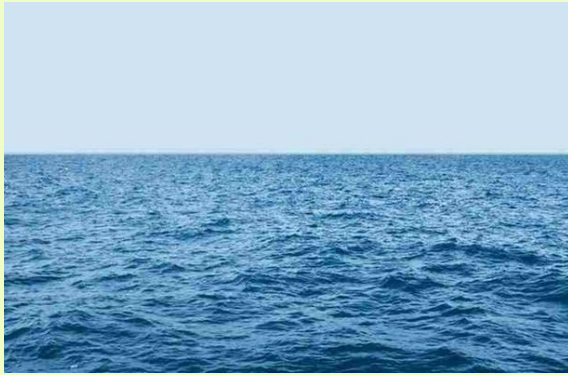
समस्त ब्रह्माण्ड में पृथ्वी एकमात्र ऐसा ग्रह है, जिसमें जीवन मौजूद है और यहां जीवों की उत्पत्ति का स्रोत महासागरों को माना गया है. आज भी यह अनुमान लगाया जाता है कि महासागरों में लगभग 10 लाख जीव प्रजातियां रहती हैं. पृथ्वी पर सर्वश्रेष्ठ जीवधारी मनुष्य का संबंध भी महासागरों से सदियों पुराना रहा है. प्रारंभ से ही मानवजाति ने महासागरों के महत्व को समझा है, लेकिन अपने जीवन को अधिक से अधिक सुविधा सम्पन्न बनाने के स्वार्थी स्वभाव ने महासागरों का अतिदोहन शुरु कर दिया है. इसके कारण ही मनुष्य के सामने महासागरों से जुड़े विभिन्न पहलुओं, जैसे -खाय सुरक्षा, जैव-विविधता, पारिस्थितिक संतुलन, सामुद्रिक संसाधनों के उपयोग, जलवायु परिवर्तन, अनन्य आर्थिक क्षेत्र आदि की बड़ी मुश्किलें और चुनौतियां खड़ी हो गई हैं. आज इन सभी बातों पर गहराई से विचार करने की महती आवश्यकता है. समुद्री प्रजातियों का अतिदोहन हो, अत्यधिक संख्या में मछलियों का पकड़ा जाना हो, बढ़ता समुद्री प्रदूषण हो या फिर जलवायु परिवर्तन ही क्यों न हो, महासागरों के साथ की जा रही मानवीय छेड़खानी कोई आज की कहानी नहीं है, बल्कि इसकी शुरुआत शताब्दियों पहले से हो चुकी थी. इसके साथ ही महासागरों पर अपने अपने अधिकार जताने की परम्पराओं ने भी जन्म ले लिया था. सीधी बात की जाए, तो वर्तमान में प्रचलित अनन्य आर्थिक क्षेत्र के मायने कहीं गहराई में इन्हीं समुद्री परम्पराओं और अवधारणाओं से जुड़े हुए हैं. अनन्य आर्थिक क्षेत्र जिसे अंग्रेजी में Exclusive Economic Zone या ईईजेड कहते हैं, जिसकी सीमारेखाएं अलग-अलग समुद्र-तटीय देशों के लिए भिन्न-भिन्न होती हैं. साधारण तौर पर हर देश की समुद्री आधार रेखा से 200 समुद्री मील की दूरी तक फैला समुद्री क्षेत्र उस देश विशेष का अनन्य आर्थिक क्षेत्र कहलाता है. इसी अनन्य आर्थिक क्षेत्र में समुद्र तटीय देशों को सभी प्राकृतिक संसाधनों की खोज, दोहन, संरक्षण और प्रबंधन का संप्रभु अधिकार प्राप्त होता है.

अनन्य आर्थिक क्षेत्र के वर्तमान स्वरुप के इतिहास को खंगालने पर एक बात स्पष्ट रुप से सामने आती है कि सत्रहवीं शताब्दी तक दुनिया में समुद्री व्यापार और शक्तिशाली समुद्री देशों के उभरने का विकास प्रारम्भ हो

चुका था. अतः कुछ देशों ने खुले समुद्र की अवधारणा के दावे पेश किए, लेकिन इसके विरोध में दुनिया के कुछ देशों ने इस धारणा में बदलाव करने की बात रखी. देखा जाए तो शताब्दियों के साथ साथ समुद्र तथा समुद्र तल से आर्थिक लाभ उठाने के प्रति बढ़ती जागरूकता ने विश्व के बहुत से समुद्रतटीय देशों में अपनी भूमि से लगे बड़े समुद्री क्षेत्र पर अपना क्षेत्राधिकार जताने की होड़ सी लगा दी थी. होलेण्ड के ह्यूगो ग्रोटियस की स्वतंत्र महासागरों की परिकल्पना इसी का एक परिणाम थी. इस परिकल्पना के अनुसार सभी महासागर विश्व के सभी देशों की सम्पत्ति हैं और विश्व का कोई भी देश किसी भी महासागर का किसी भी कार्य के लिए प्रयोग कर सकता है. यह परिकल्पना मानवतावादी आदर्शवाद की कसौटी पर जितनी परिशुद्ध प्रतीत होती थी, व्यावहारिक तौर पर उतने ही विवाद उत्पन्न करने वाली साबित हुई, क्योंकि दुनिया के प्रायः सभी देश अपने समुद्री भागों के संसाधनों के दोहन की अनुमति नहीं दे सकते थे.

यही कारण था कि अठारहवीं सदी आते आते समुद्र के कानून के दो बुनियादी सिद्धांत सामने आए, जिनमें एक था कि समुद्र-तटीय देशों से संलग्न समुद्रजल की एक संकीर्ण पट्टी उस तटीय राज्य की विशिष्ट संप्रभुता के अधीन होनी चाहिए और उससे परे सभी गहरे समुद्र स्वतंत्र रूप से दुनिया के सभी देशों के लिए सुलभ होना चाहिए. ये सिद्धांत मूल रूप से व्यापार और नेविगेशन की स्वतंत्रता के साथ राष्ट्रीय सुरक्षा की आवश्यकताओं को पूरा करने और सुलझाने के लिए बनाए गए थे. लेकिन वे दोनों क्षेत्रों में सभी गतिविधियों पर लागू होते थे और उनके तहत कानूनी दायरे में मछली पकड़ने की गतिविधियां भी शामिल थीं. इस तरह 18वीं शताब्दी में कॉर्नलुई वान बिंकरशोंक की समुद्र-तट सीमा निर्धारण की अवधारणा के आधार पर सीमांतवर्ग जल क्षेत्र की संकल्पना सामने आई, जिसमें यह निश्चित किया गया कि किसी देश की सीमांतवर्ग जल क्षेत्र की सीमा सागरीय तट से 3 समुद्री मील की दूरी तक होगी.

19वीं शताब्दी में नई वैज्ञानिक तकनीकियों और प्रौद्योगिकियों के विकास के कारण महासागरीय संसाधनों का अतिदोहन होने लगा और दुनिया के विभिन्न देशों के बीच बनी समुद्री आर्थिक परिकल्पनाएं एक बार फिर खटाई में पड़ने लगीं. ऐसे में नए सिरे से अन्तर्राष्ट्रीय समुद्री कानूनों की मांग उठने लगी. अन्तर्राष्ट्रीय विधि व कानून वे नियम होते हैं, जो स्वतंत्र देशों के मध्य परस्पर सम्बन्धों अथवा यहां तक कि विवादों के निपटारे के लिये लागू किए जाते हैं. अन्तर्राष्ट्रीय कानून किसी देश के अपने भीतरी कानूनों से पूर्णतया भिन्न होते हैं क्योंकि ये कानून वास्तव में उन दोनों देशों के संबंधों के लिए लागू किए जाते हैं न कि उनके नागरिकों के लिए बनाए जाते हैं. हां यह अवश्य है कि उन देशों के नागरिकों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इन अंतर्राष्ट्रीय कानूनों को मानना पड़ता है. अतः ये एक तरह की विधि प्रणाली कहे जा सकते हैं, जिनका संबंध व्यक्तियों के समाज से न होकर देशों के समाज से होता है.

विश्व के समुद्र संबंधी अन्तर्देशीय विवादों अथवा संबंधों के निपटारे के लिए 24 फरवरी से 27 अप्रैल 1958 के बीच जेनेवा में अन्तर्राष्ट्रीय समुद्री कानून पर पहला राष्ट्रमण्डल सम्मेलन आयोजित किया गया था. इस सम्मेलन में कहा गया कि महाद्वीपीय मग्नतट पर समुद्री खनन उस देश का अधिकार है, जिस देश के तट के साथ वह महाद्वीपीय मग्नतट संलग्न है. लेकिन फिर इससे कई विवाद खड़े हो गए, क्योंकि इससे महाद्वीपीय मग्नतट की परिभाषा स्पष्ट नहीं हो पा रही थी. अतः 1960 में जेनेवा में ही समुद्री कानून पर दूसरा राष्ट्रमण्डल सम्मेलन, फिर 1973 से 1982 तक राष्ट्रमण्डल द्वारा आयोजित अन्य सम्मेलनों के तहत अंततः एक समुद्री संधि के कानून पर जाकर सभी की सहमति हुई.

वास्तव में संयुक्त राष्ट्र की समुद्री कानून संधि एक ऐसा अंतर्राष्ट्रीय समझौता बनकर सामने आया, जो दुनिया के सभी सागरों और महासागरों पर विभिन्न देशों के अधिकार और उत्तरदायित्व निर्धारित करता है और समुद्री संसाधनों के प्रयोगों के लिए नियम स्थापित करता है. सन् 1982 में बनी यह संधि नवंबर 1994 में जाकर विश्व में लागू हो पाई क्योंकि इसमें एक नियम रखा गया था कि जब तक विश्व के 60 देश इस पर हस्ताक्षर नहीं कर देते यह किसी पर लागू नहीं होगी. सन् 1994 में गयाना ने साठवें देश के रुप में इस पर हस्ताक्षर किए और तब यह विश्व का अन्तर्राष्ट्रीय समुद्र कानून का रुप ले सकी. अंग्रेज़ी में इस संधि को "यूनाइटेड नेशन्स कन्वेंशन ऑन

द लॉ ऑफ़ द सी" (United Nations Convention on the Law of the Sea या UNCLOS) कहते हैं. इस अन्तर्राष्ट्रीय समुद्र कानून के तहत शामिल प्रावधानों में क्षेत्रीय समुद्र के लिये 12 समुद्री मील सीमा का निर्धारण, अंतर्राष्ट्रीय जलडमरूमध्य से होकर पारगमन की सुविधा, द्वीप समूह और स्थलरुद्ध देशों के अधिकारों में वृद्धि, तटवर्ती देशों के लिये 200 समुद्री मील अनन्य आर्थिक क्षेत्र (ईईजेड) का निर्धारण और राष्ट्रीय अधिकार क्षेत्र से बाहर गहरे समुद्र में स्थित खनिज संसाधनों के दोहन की व्यवस्थाएं प्रमुख हैं. संयुक्त राष्ट्र की अंतर्राष्ट्रीय समुद्री क़ानून संधि में इंटरनेशनल सीबेड अथॉरिटी (आईएसए) और कमीशन ऑन द लिमिट्स ऑफ कांटीनेंटल शेल्फ (सीएलसीएस) की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है. इंटरनेशनल सीबेड अथॉरिटी (आईएसए) किंग्स्टन, जमैका में स्थित एक अंतर-सरकारी संस्था है, जिसे सभी अंतरराष्ट्रीय समुद्र-तटीय खनिज संबंधी गतिविधियों को व्यवस्थित और नियंत्रित करने के लिए स्थापित किया गया था. 10 जून 1964 को लागू की गई कमीशन ऑन द लिमिट्स ऑफ कांटीनेंटल शेल्फ (सीएलसीएस) महाद्वीपीय मग्नतट की सीमाओं से संबंधित अंतरराष्ट्रीय कानून के नियमों को संहिताकृत करने के लिए बनाई गई एक अंतरराष्ट्रीय संधि थी. इस संधि में अतिजल-क्षेत्र और हवाई क्षेत्र को नियंत्रित करना; पनडुब्बी केबल्स या पाइप-लाइनों को बिछाने या उनका रखरखाव; इन क्षेत्रों में नेविगेशन, मछली पकड़ने, वैज्ञानिक अनुसंधान और तटीय राज्य की दक्षता; परिसीमन; सुरंग आदि शामिल थे.

भारत सरकार ने पहले ही 25 अगस्त 1976 को समुद्री क्षेत्र अधिनियम बना लिया था. यह अधिनियम 15 जनवरी 1977 को लागू हुआ था, जिसमें लगभग 20.01 लाख वर्ग किलोमीटर के संपूर्ण अन्नय आर्थिक महत्त्व के क्षेत्र को राष्ट्रीय क्षेत्राधिकार में लाया गया था. इस क्षेत्र में भारत को समुद्र में जीवित तथा अजीवित दोनों ही संसाधनों के अन्वेषण तथा दोहन द्वारा उनका उपयोग करने का विशेष कानूनी अधिकार प्राप्त है. इस अनन्य समुद्री क्षेत्र की सुरक्षा तथा राष्ट्रीय विधियों का प्रवर्तन और राष्ट्रीय हितों की रक्षा के लिए भारतीय तटरक्षक की स्थापना की गई थी. भारत ने जून 1995 में संयुक्तराष्ट्र की अन्तर्राष्ट्रीय समुद्री कानून संधि (यूएनसीएलओसी) पर हस्ताक्षर किए और साथ ही इंटरनेशनल सीबेड अथॉरिटी (आईएसबीए) और कमीशन ऑन द लिमिट्स ऑफ कांटीनेंटल शेल्फ (सीएलसीएस) में भी शामिल हुआ. यूएनसीएलओसी के प्रावधानों को भारत में लागू करने का उत्तरदायित्व नोडल एजेंसी के रुप में प्रारम्भ में भारत सरकार के पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय, जो उस समय महासागर विकास विभाग कहलाता था, को सौंपा गया था. तब से अब तक लगातार पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय भारत के प्रतिनिधि के रुप में यूएनसीएलओसी से संबंधित सभी बैठकों में नियमित रूप से भाग लेता है और समुद्री कानून के मामलों में अहम भूमिका अदा कर रहा है.

संयुक्त राष्ट्र की अन्तर्राष्ट्रीय समुद्री कानून संधि (यूएनसीएलओसी -III) विश्व के महासागर क्षेत्रों के समस्त पहलुओं को शामिल करते हुए महासागरों पर शासन के लिए एक व्यापक व्यवस्था निर्धारित करती है. अनन्य आर्थिक क्षेत्र (ईईज़ेड) की संकल्पना इस संधि की सर्वाधिक अभिनव विशेषता है, जिसे सबसे बड़ा क्रांतिकारी गुणधर्म भी कहा जा सकता है, क्योंकि इसके लागू होने के बाद से ही महासागरों के प्रबंधन व संरक्षण पर काफी गहरा प्रभाव पड़ा है. यूएनसीएलओसी के अनुच्छेद 76 के प्रावधानों के अनुसार किसी देश का अनन्य आर्थिक क्षेत्र (ईईजेड) उस देश की समुद्री तटरेखाओं से 200 समुद्री मील (370 किलोमीटर) तक विस्तारित समुद्री क्षेत्र होता है. अलग-अलग देशों के अनन्य आर्थिक क्षेत्र (ईईजेड) की लंबाई उनके भूगोल के अनुसार अलग-अलग हो सकती है. यदि किसी देश का ईईजेड किसी दूसरे देश के ईईज़ेड पर अतिव्यापित हो रहा है तो ऐसी स्थिति में देशों के बीच वास्तविक ईईज़ेड क्षेत्र का बंटवारा किया जाता है. प्रत्येक देश अपने ईईज़ेड में समुद्री संसाधनों के अन्वेषण, दोहन, विकास, प्रबन्धन एवम् संरक्षण करने का पूर्ण अधिकारी होता है. संयुक्त राष्ट्र समुद्री कानून संधि के अनुसार जो तटीय देश अपने महाद्पीवीय मग्नतट की बाहरी सीमा 200 समुद्री मील से अधिक विस्तारित करना चाहता है, तो वह 150 समुद्रीमील और अर्थात् कुल 350 समुद्रीमील तक विस्तारित कर सकता है, परन्तु इसके लिए उसे वैज्ञानिक और तकनीकी आंकड़ों सहित सीमाओं का ब्यौरा पेश

करना पड़ता है. हांलाकि आज भी दुनिया के बहुत से देसों के बीच अनन्य आर्थिक क्षेत्र को लेकर विवाद बने हुए हैं, इनमें से कुछ के बीच समझौते भी हुए हैं.

यदि विश्व के कुछ प्रसिद्ध देशों के अनन्य आर्थिक क्षेत्रों पर दृष्टिपात करें तो फ्रांस के पास दुनिया का सबसे बड़ा अनन्य आर्थिक क्षेत्र है, जिसके अंतर्गत 11.7 मिलियन वर्ग किमी क्षेत्र आता है. फ्रांस का अनन्य आर्थिक क्षेत्र दुनिया के सभी अनन्य आर्थिक क्षेत्रों की कुल सतह का लगभग आठ प्रतिशत है. यूनाइटेड किंगडम में 6,805,586 वर्ग किलोमीटर का दुनिया का पांचवां सबसे बड़ा अनन्य आर्थिक क्षेत्र है. वहीं जापान का अनन्य आर्थिक क्षेत्र 4,479,674 वर्ग किमी है, जो दुनिया का आठवां सबसे बड़ा ईईज़ेड है.
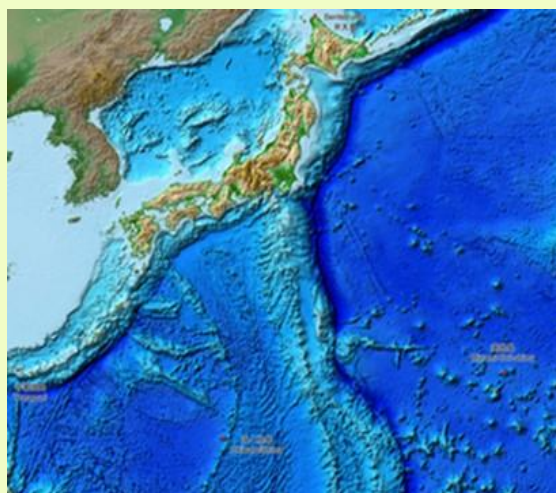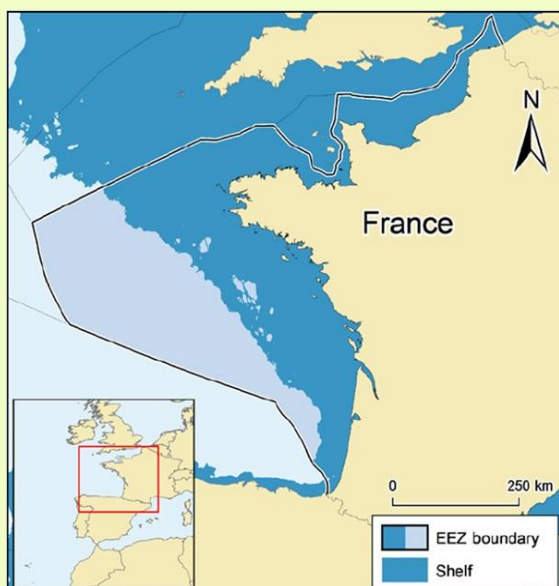
भारत का ईईज़ेड विश्व के बारहवें सबसे बड़े अनन्य आर्थिक क्षेत्र में आता है. भारत का अनन्य आर्थिक क्षेत्र लगभग 23.7 लाख वर्ग किलो मीटर है, क्योंकि अण्डमान व निकोबार द्वीप-समूहों और लक्षदीप द्वीप-समूहों के समुद्र-तट समूहों सहित इसकी कुल समुद्री तटरेखा लगभग 7500 किलोमीटर है. भारत के अनन्य आर्थिक क्षेत्र में हाइड्रो-कार्बन के प्रचुर भण्डारों के साथ साथ इलेमनाइट, रुटाइल, ज़िरकॉन, मोनाज़ाइट एवम् मेग्नेटाइट जैसे महत्वपूर्ण खनिजों के भण्डार भी मिलते हैं. भारत के ईईज़ेड में उपलब्ध इन समुद्री संसाधनों के इष्टतम उपयोग के लिए भारत सरकार ने ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान भारत के अनन्य आर्थिक क्षेत्र के स्वाथ बेथिमीट्रिक सर्वेक्षणों के लिए एक परियोजना स्वीकृत की थी. इस परियोजना के माध्यम से मल्टीबीम तकनीकियों द्वारा देश के सम्पूर्ण ईईज़ेड का व्यापक समुद्र-तल भू-आकृतिक मानचित्र तैयार कर लिया गया है. पूरे ईईज़ेड समुद्रीतल में मिलने वाले तलछटों के नमूने एकत्रित कर उनके वैज्ञानिक विश्लेषणों द्वारा वहां की समुद्री संसाधन क्षमताओं का मूल्यांकन करने में अभी भी भारतीय वैज्ञानिक जुटे हुए हैं.

भारतीय अनन्य आर्थिक क्षेत्र को दर्शाता मानचित्र
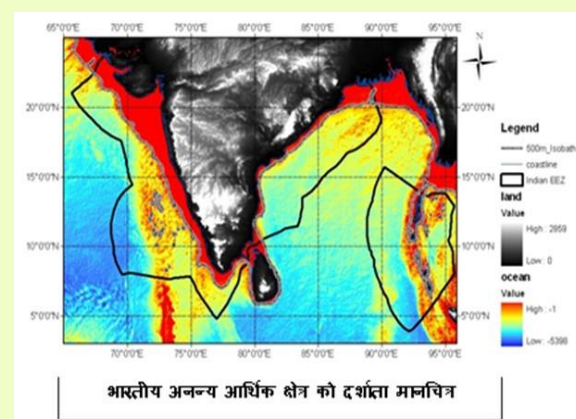
अनन्य आर्थिक क्षेत्र के दृष्टिकोण से भारत दुनिया के दूसरे देशों की तरह ही अंतरराष्ट्रीय समुद्री कानून के तहत समुद्री प्राकृतिक संसाधनों के दोहन का संपूर्ण अधिकार रखता है. भारत का अनन्य आर्थिक क्षेत्र काफी बड़ा और हिन्द महासागर के विशेष मुहाने पर स्थित होने से रणनीतिक तथा आर्थिक दोनों दृष्टि से बेहद लाभदायक है. इसका सबसे अच्छा उदाहरण अरब सागर में मुंबई से 176 किमी दूर स्थित भारत का सबसे बड़ा तेल और

प्राकृतिक गैस क्षेत्र मुंबई हाई है, जो भारतीय अनन्य आर्थिक क्षेत्र में ही स्थित है. मुंबई हाई में 545 तेल के कुएँ हैं, जिनमें से 391 तेल के कुओं से उत्पादन किया जा रहा है. एक अनुमान के अनुसार मुंबई हाई क्षेत्र से लगभग 262 लाख टन खनिज तेल का उत्पादन किया जाता है. इस तरह देश के पेट्रोलियम उत्पादन में मुंबई हाई का बहुत बड़ा है.

इसके अलावा भारत अपने तीनों ओर फैले अरबसागर, बंगाल की खाड़ी और हिंदमहासागर में अनन्य आर्थिक क्षेत्र के अंतर्गत आने वाली समुद्र संपदाओं जैसे मैंग्रोव, प्रवाल भित्तियों, समुद्री घासों और समुद्री मत्स्यजीवों के उपयोग से अपनी नीली अर्थव्यवस्था को नए आयाम दे रहा है. आज भारत एशिया-प्रशांत क्षेत्र का महत्वपूर्ण शक्ति बन कर उभरा है. भारत सरकार ने 24 नवंबर 2021 को 2021-26 की अवधि के लिए 2,177 करोड़ रुपये की लागत से ओ-स्मार्ट नामक एक समुद्री परियोजना का आरंभ किया है, इसमें भी अनन्य आर्थिक क्षेत्र के भूवैज्ञानिक अध्ययन को शामिल किया गया है. हांलाकि यह कार्य इस वृहत परियोजना का बहुत ही छोटा सा भाग है, लेकिन इस विषय का शामिल होना अपने आप में अनन्य आर्थिक क्षेत्र की महत्ता को साबित करता है. ओ-स्मार्ट परियोजना के तहत निर्धारित कार्यक्रमों जैसे महासागर प्रौद्योगिकी, महासागर मॉडलिंग और सलाहकार सेवा, महासागर अवलोकन नेटवर्क, महासागर गैर-जीवित और जीवित संसाधनों और पारिस्थितिकी, तटीय अनुसंधान और संचालन और अनुसंधान पोत रखरखाव में अप्रत्यक्ष रुप से अनन्य आर्थिक क्षेत्र से जुड़े पहलुओं की सहायता लेनी ही पड़ती है. भारत के प्रमुख समुद्री संस्थान जैसे राष्ट्रीय महासागर प्रौद्योगिकी संस्थान (एनआईओटी), चेन्नई, भारतीय राष्ट्रीय महासागर सूचना सेवा केंद्र (आईएनसीओआईएस), हैदराबाद, राष्ट्रीय तटीय अनुसंधान केंद्र (एनसीसीआर), चेन्नई, समुद्री जीव संसाधन और पारिस्थितिकी केंद्र (सीएमएलआरई), कोच्चि एवं राष्ट्रीय ध्रुवीय एवं समुद्री अनुसंधान केंद्र, (एनसीपीओआर), गोवा के वैज्ञानिक सतत समुद्री अनुसंधानों में लगे हुए हैं.
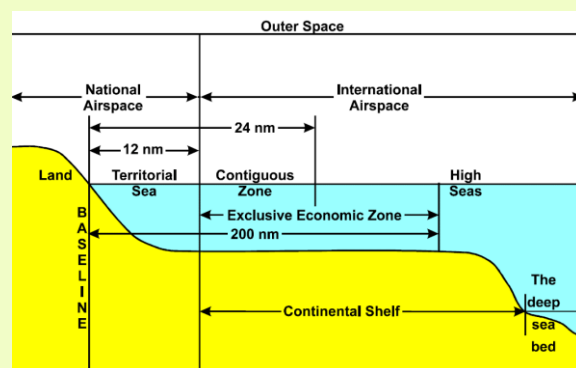
समुद्री गतिविधियों का मूलक्षेत्र अनन्य आर्थिक क्षेत्र में ही आता है. इसी क्षेत्र में सबसे अधिक मछलियां पकड़ी जाती हैं, प्राकृतिक तेल दोहन किया जाता है, इनके अलावा जहाजों की आवाजाही से लेकर अनुसंधानों तक समुद्रों में बढ़ते प्रदूषण के रुप में मानवीय गतिविधियों का जो प्रभाव सीधे-सीधे दिखाई देने लगा है, उससे सबसे अधिक खतरा अनन्य आर्थिक क्षेत्र को ही है. अतः समुद्र के सतत उपयोग के साथ साथ अनन्य आर्थिक क्षेत्र की सुरक्षा लक्षित होने की आवश्यकता है.

वायुमंडल और उसकी संरचना

डॉ. कुलवंत सिंह

वायुमंडल

पृथ्वी के चारों ओर लिपटा हुआ गैसों का विशाल आवरण पृथ्वी का अखंड भाग है और उसे चारों तरफ से घेरे हुए हुए है, वायुमंडल (Atmosphere) कहलाता है. जलवायु वैज्ञानिक क्रिचफिल्ड के अनुसार वायुमंडल अपने वर्तमान स्वरूप में 58 से 50 करोड़ वर्ष पूर्व अर्थात् कैम्ब्रियन युग (Cambrian era) में बना. वायुमंडल का भार 5.6×10^{25} टन है. इसके भार का लगभग आधा भाग धरातल से 5500 किलोमीटर की ऊँचाई पर पाया जाता है. आधुनिक अनुसंधानों से स्पष्ट होता है कि वायुमंडल की अंतिम ऊँचाई 16 हजार किलोमीटर से 32 हज़ार किलोमीटर के बीच है. वायुमंडल का 50% भाग इसके 5.5 किलोमीटर की ऊँचाई तक, 75% भाग 16 किलोमीटर ऊँचाई तक एवं 99% भाग 32 किलोमीटर ऊँचाई तक स्थित है.

वायुमंडल का संघटन

वायुमंडल का संघटन (Composition) निम्नलिखित तत्वों से हुआ है–

गैस (GASES)

भौतिक दृष्टि से वायुमंडल विभिन्न गैसों का सम्मिश्रण है. हवा में उपस्थित प्रमुख गैसें हैं -

गैस (Gas)	आयतन (%)
नाइट्रोजन	78.084
ऑक्सीजन	20.946
आर्गन	0.9340
कार्बन डाईऑक्साइड	0.0407
नियोन	0.001818
हीलियम	0.000524
मीथेन	0.00018
क्रिप्टान	0.000114
जेनान	0.000005
हाइड्रोजन	0.000055

प्रमुख गैसों में नाइट्रोजन जैविक रूप से निष्क्रिय गैस है. इसका चक्रण वायुमंडल, मृदामंडल और जैवमंडल में अलग-अलग होता है. राइजोबियम बैक्टीरिया वायुमंडलीय नाइट्रोजन को नाइट्रेट के रूप में ग्रहण करता है. ऑक्सीजन प्राणवायु है. इस भारी गैस का संघनन वायुमंडल के निचले भाग में है. कार्बन डाईऑक्साइड पौधे कार्बन डाईऑक्साइड से ग्लूकोज और कार्बोहाइड्रेट बनाते हैं. विविध कारणों से इस गैस की सांद्रता में वृद्धि के कारण ग्लोबल वार्मिंग एवं जलवायु परिवर्तन की समस्या उत्पन्न हो रही है. वायुमंडल में अति अल्प मात्र में पाए जाने वाले ओजोन का सर्वाधिक सांद्रण 20-35 किलोमीटर की ऊँचाई पर है. ओजोन सूर्य से आने वाली घातक पराबैगनी किरणों (UltraViolet rays) को रोकती है. वर्तमान में CFC एवं अन्य ओजोन क्षरण गैसों की बढ़ती मात्र के कारण ओजोन परत (Ozone Layer) का क्षरण एक गंभीर समस्या के रूप में उभरी है.
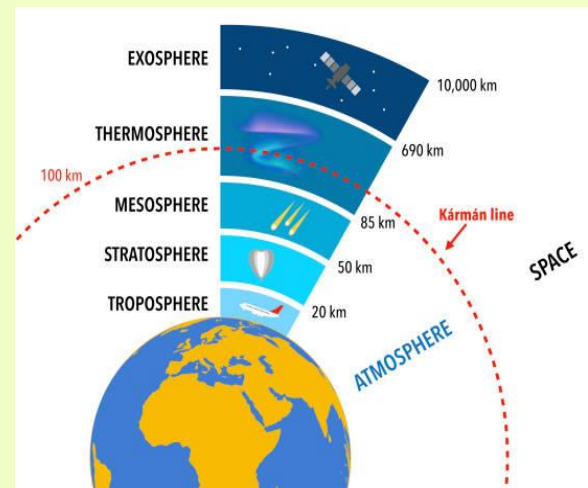
जल वाष्प (WATER VAPOUR)

वायुमंडल में आयतानुसार 4% जल वाष्प की मात्रा सामान्यत: रहती है. जल वाष्प की सर्वाधिक मात्रा भूमध्य रेखा के आसपास और न्यूनतम मात्रा ध्रुवों के

आसपास होती है. भूमि से 5 किलोमीटर तक ऊंचाई वाले वायुमंडल में समस्त जल वाष्प का 90% भाग होता है. जलवाष्प सभी प्रकार के संघनन एवं वर्षण सम्बन्धी मौसमी घटनाओं के लिए जिम्मेदार है.
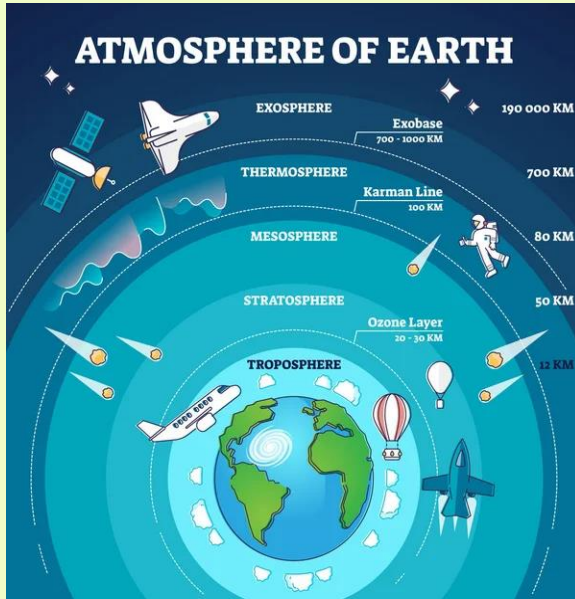
धूल-कण

इसे एयरोसोल भी कहा जाता है. विभिन्न स्रोतों से वायुमंडल में जाने वाले धूल-कण आर्द्रता ग्राही नाभिक का कार्य करते हैं. धूलकण सौर विकिरण के परावर्तन और प्रकीर्णन द्वारा ऊष्मा अवशोषित करते हैं. वर्णात्मक प्रकीर्णन के कारण आकाश का रंग नीला और सूर्योदय और सूर्यास्त के समय-समय दिखने वाला रंग धूल कणों की ही देन है. उषाकाल एवं गोधूलि की तीव्रता एवं उसकी अवधि के निर्धारण में धूल-कणों की प्रमुख भूमिका होती है. धूल-कण एवं धुएँ के कण आद्रता ग्राही नाभिकों का भी कार्य करते हैं. धूल-कणों का सर्वाधिक जमाव उपोष्ण (sub-tropical) व औद्योगिक क्षेत्रों में एवं न्यूनतम जमाव ध्रुवों के निकट पाया जाता है.

वायुमंडल की संरचना

वायुमंडल की संरचना के सम्बन्ध में 20वीं शताब्दी में विशेष अध्ययन किये गए हैं. इस दिशा में तिज़्रांस-डि-बोर, सर नेपियर शा, फ्रैडले, कैनली, फेरेब आदि वैज्ञानिकों का विशेष योगदान रहा है. तापमान के उर्ध्वाधर वितरण के आधार पर वायुमंडल की प्रमुख परतें निम्नलिखित हैं.
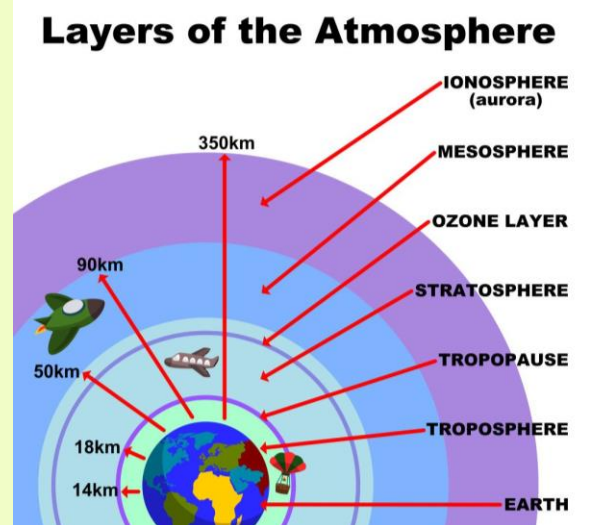
क्षोभ-मंडल (TROPOSPHERE)

ट्रोपोस्फीयर/विक्षोभ प्रदेश नामक शब्द का प्रयोग तिज़्रांस-डि-बोर ने सर्वप्रथम किया था. वायुमंडल की इस सबसे निचली परत का भार सम्पूर्ण वायुमंडल का लगभग 15% है. धरातल से इस परत की औसत ऊँचाई 10 किलोमीटर है. भूमध्य रेखा पर ऊँचाई 18 किलोमीटर और ध्रुवों पर 8-10 किलोमीटर है. ग्रीष्म ऋतु में इस स्तर की ऊँचाई में वृद्धि और शीतऋतु में कमी पाई जाती है. इस मंडल की प्रमुख विशेषता है प्रति 165 मी. की ऊँचाई पर तापमान में 1 डिग्री सेल्सियस की गिरावट आना. इसमें सर्वाधिक क्षैतिज और लम्बवत ताप अन्तर होता है. इस भाग में गर्म और शीतल होने का कार्य विकिरण, संचालन और संवहन द्वारा होता है. इस मंडल को परिवर्तन मंडल भी कहते हैं. समस्त मौसमी घटनाएँ भी इसी मंडल में घटित होती हैं. इस मंडल की एक और विशेषता यह है कि इसके भीतर ऊँचाई में वृद्धि के साथ वायुवेग में भी वृद्धि होती है. संवहनी तरंगों तथा विक्षुब्ध संवहन के कारण इस मंडल को संवहनी मंडल और विक्षोभ मंडल भी कहते हैं.

क्षोभ-सीमा (TROPOPAUSE)

क्षोभ मंडल और सम-ताप मंडल को अलग करने वाली 1.5 किलोमीटर मोटे संक्रमण को ट्रोपोपॉज (Tropopause) या क्षोभ-सीमा कहा जाता है. क्षोभ-सीमा में ऊँचाई के साथ तापमान का गिरना बंद हो जाता है. इसकी ऊँचाई भूमध्य रेखा पर 17-18 किलोमीटर (तापमान -80 डिग्री सेल्सियस), ध्रुवों पर 8-10 किलोमीटर (तापमान -45 डिग्री सेल्सियस) होती है.
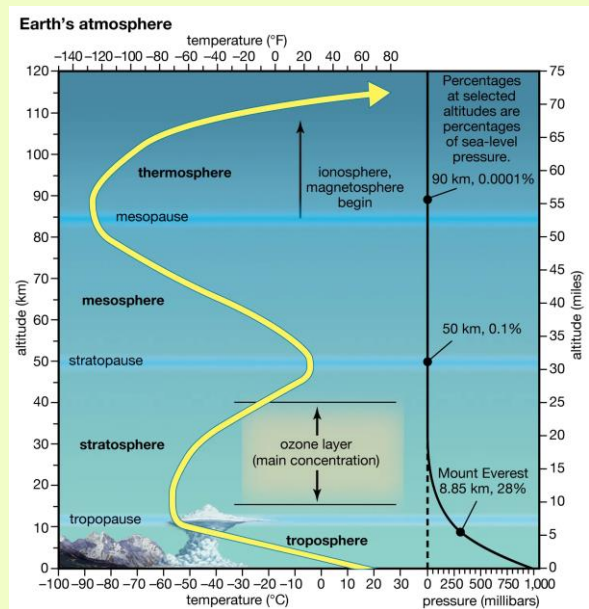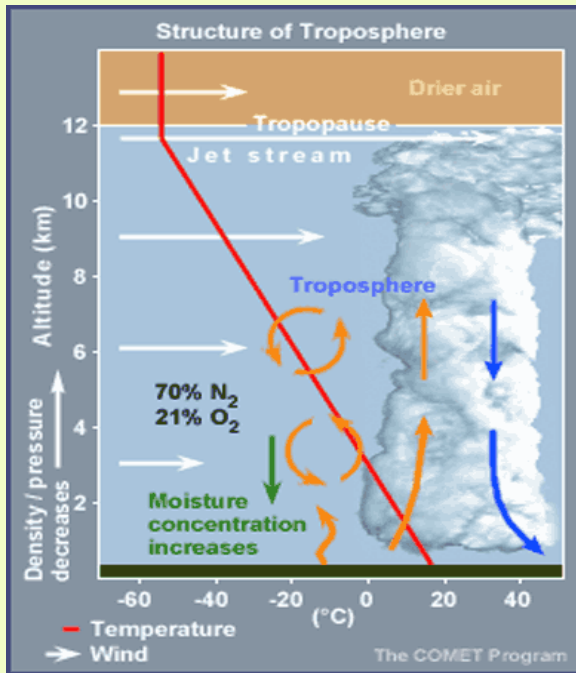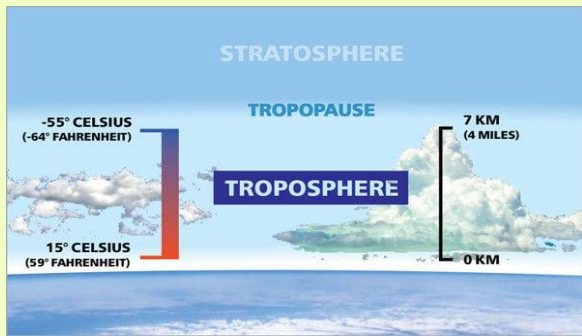
एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका से साभार
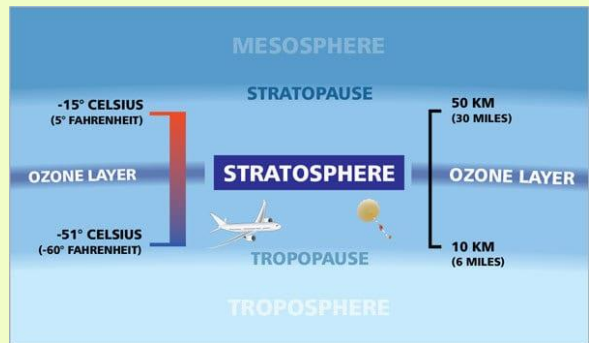
सम-ताप मंडल (STRATOSPHERE)

क्षोभ सीमा से ऊपर 50 किलोमीटर की ऊँचाई तक सम-ताप मंडल का विस्तार है. कुछ विद्वान ओजोन मंडल को भी इसी में समाहित कर लेते हैं. इस मंडल में तापमान में कोई परिवर्तन नहीं होता. यहाँ संघनन से विशिष्ट प्रकार के 'मुक्ताभ मेघ' (Noctilucent clouds) की उत्पत्ति होती है. निशाचर बादल, या रात में चमकने वाले बादल, पृथ्वी के ऊपरी वायुमंडल में झीने बादल जैसी घटनाएँ हैं. मुक्ताभ मेघ अधिकांशतः उच्च अक्षांशों विशेषतः नार्वे तथा अलास्का में देखे जाते हैं. इन मेघों की उपस्थिति के कारण सूर्यास्त के पश्चात् कुछ देर तक आकाश में रंगीन दीप्ति दिखाई पड़ती है. इस मंडल की मोटाई ध्रुवों पर सर्वाधिक और विषुवत रेखा पर सबसे कम होती है. शीत ऋतु में 50 डिग्री से 60 डिग्री अक्षाशों के बीच समताप मंडल सर्वाधिक गर्म होता है. यह मंडल मौसमी घटनाओं से मुक्त होता है, इसलिए वायुयान चालकों के लिए उत्तम होता है. 1992 में समताप मंडल (stratosphere) की खोज एवं नामकरण तिज़्रांस-डि-बोर ने किया था.

मुक्ताभ मेघ

ओजोन मंडल (OZONE SPHERE)

सम-ताप मंडल के निचले भाग में 15 से 35 किलोमीटर के बीच ओजोन गैस (Ozone gas) का मंडल होता है. ओजोन गैस (Ozone gas) सूर्य से

निकलने वाली पराबैगनी किरणों (UV rays) को सोख लेती है. इस स्तर में प्रति किलोमीटर 5 डिग्री सेल्सियस की दर से तापमान बढ़ता है. वर्तमान में ओजोन परत के क्षरण की समस्या के निवारण के लिए मोंट्रियल प्रोटोकॉल (Montreal protocol) एवं अन्य उपायों के जरिये ओजोन क्षरक पदार्थों पर कड़ाई से रोक लगाई जा रही है.

मध्य-मंडल (MESOSPHERE)

50 से 80 किलोमीटर की ऊँचाई वाला वायुमंडलीय भाग मध्य-मंडल (mesosphere) कहलाता है. पूरे मध्यमंडल में ऊंचाई के साथ तापमान घटता जाता है. पृथ्वी के वायुमंडल में सबसे ठंडा तापमान, लगभग -90 डिग्री सेल्सियस (-130 डिग्री फारेनहाइट), इस परत के शीर्ष के पास पाया जाता है. इस न्यूनतम तापमान की सीमा को 'मेसोपास' कहते हैं.
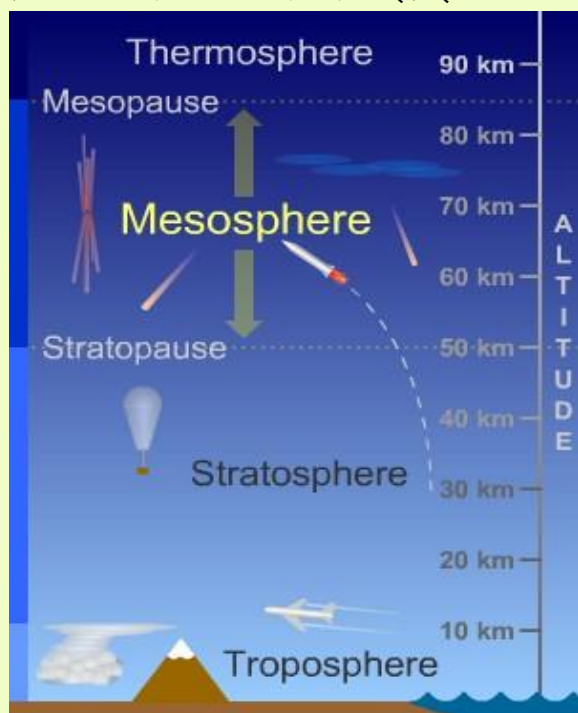
कार्मन रेखा

कार्मन रेखा पृथ्वी के वायुमंडल और बाहरी अंतरिक्ष के बीच एक सीमा को परिभाषित करने का एक प्रयास है, जो कानूनी और नियामक उद्देश्यों के लिए महत्वपूर्ण है. कार्मन रेखा पृथ्वी और अंतरिक्ष के बीच इंटरफेस है.

फेडेरेशन एरोनॉटिक इंटरनेशनेल (एफएआई), एक अंतरराष्ट्रीय मानक-सेटिंग और वैमानिकी और अंतरिक्ष यात्रियों के लिए रिकॉर्ड-कीपिंग बॉडी है, जो कार्मन लाइन को पृथ्वी के औसत समुद्र तल से 100 किलोमीटर की ऊंचाई के रूप में परिभाषित करती है. कार्मन लाइन का नाम थियोडोर वॉन कार्मन (1881-1963) के नाम पर रखा गया है, जो एक हंगेरियन अमेरिकी इंजीनियर और भौतिक विज्ञानी थे, जो वैमानिकी और अंतरिक्ष विज्ञान में सक्रिय थे.

आयन-मंडल (IONOSPHERE / THERMOSPHERE)

आयनमंडल को थर्मोस्फीयर के नाम से भी जाना जाता है. धरातल से 80-640 किलोमीटर के बीच आयन मंडल का विस्तार है. यहाँ पर अत्यधिक तापमान के कारण अति न्यून दबाव होता है. फलतः पराबैंगनी फोटोन (UV photons) एवं उच्च वेगीय कणों के द्वारा लगातार प्रहार होने से गैसों का आयनन (Ionisation) हो जाता है. आकाश का नील वर्ण, उत्तरी ध्रुव पर सुमेर ज्योति (Aurora boriyolis) व दक्षिणी ध्रुव पर कुमेर ज्योति (Aurora Australias) तथा उल्काओं की चमक एवं ब्रह्मांड किरणों की उपस्थिति इस भाग की विशेषता है. यह मंडल कई आयनीकृत परतों में विभाजित है.

पृथ्वी से लगभग 80 किलोमीटर के बाद का संपूर्ण वायुमंडल आयन-मंडल कहलाता है. आयतन में आयनमंडल अपनी निचली हवा से कई गुना अधिक है, लेकिन इस विशाल क्षेत्र की हवा की कुल मात्रा वायुमंडल की हवा की मात्रा के 200वें भाग से भी कम है. आयन-मंडल की हवा आयनित होती है और उसमें आयनीकरण के साथ-साथ आयनीकरण की विपरीत क्रिया भी निरंतर होती रहती है. पृथ्वी से प्रेषित रेडियो तरंगें इसी मंडल से परावर्तित होकर पुनः पृथ्वी पर वापस लौटती हैं. लघु तरंगों (शार्ट वेव्स) को हजारों किलोमीटर तक आयनमंडल के माध्यम से ही पहुँचाया जाता है. आयनमंडल में आयनीकरण की मात्रा, परतों की ऊँचाई तथा मोटाई, उनमें अवस्थित आयनों तथा स्वतंत्र इलेक्ट्रानों की संख्या, ये सब घटते बढ़ते हैं.

आयनमंडल को चार परतों में बाँटा गया है। पृथ्वी के लगभग 55 किलोमीटर के बाद से डी-परत प्रारंभ होती है. डी-परत के बाद ई-परत है जो अधिक आयनों से युक्त है. यह आयनमंडल की सबसे टिकाऊ परत है

और इसकी पृथ्वी से ऊँचाई लगभग 145 किलोमीटर है. इसे केनली हेवीसाइड परत भी कहते हैं. तीसरी एफ-वन परत हैं. यह पृथ्वी से लगभग 200 किलोमीटर की ऊँचाई पर है. अंत में 240 से 320 किलोमीटर के मध्य एफ-टू परत है.
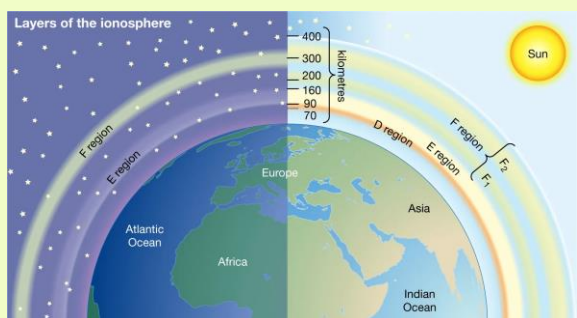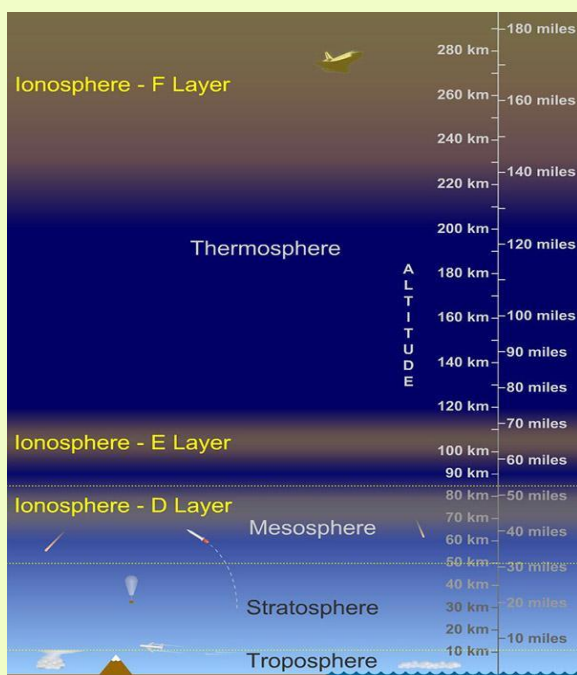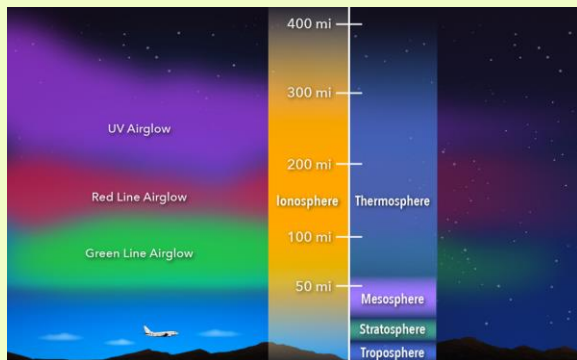
बाह्य-मंडल (EXOSPHERE)

सामान्यतः 640 किलोमीटर के ऊपर 1,000 किलोमीटर तक बाह्य-मंडल का विस्तार पाया जाता है. यहाँ पर हाइड्रोजन एवं हीलियम गैसों की प्रधानता है. अद्यतन शोधों के अनुसार यहाँ नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, हीलियम तथा हाइड्रोजन की अलग-अलग परतें भी होती हैं. लेमन स्पिट्जर ने इस मंडल पर विशेष शोध किया है. इसमें भी विद्युत आवेशित कणों की प्रधानता होती है. इस मंडल में 1,000 किलोमीटर के बाद वायुमंडल बहुत ही विरल हो जाता है और अंततः विलीन हो जाता है.

सुमेर ज्योति (Northern Lights or Aurora Borealis)

कुमेर ज्योति (Southern Lights Aurora Australis)
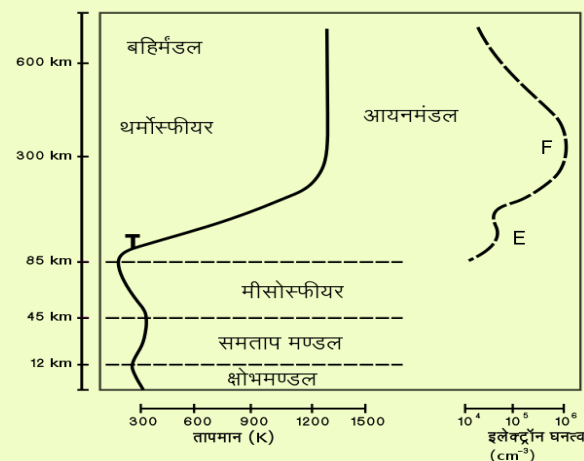
ऑक्सीजन वर्धक पौधे और पर्यावरण

पूनम त्रिखा

जी डी कालोनी, मयूर विहार, दिल्ली-96

विज्ञान लेखिका. लेख और कहानियां विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित. इग्नू मे कोर्स राईट्रर, पेपर सैटर तथा मूल्यांकनकर्ता. राष्ट्रीय इलेक्ट्रॉनिकी एवं सूचना प्रौद्योगिकी संस्थान, दिल्ली में कार्यरत.

हमारे जीवन में पेड़ और पौधों का बहुत महत्व है, इनके अधिक कटाव से धरती का पर्यावरण ही नहीं बदलता है बल्कि जीवन में भी संकट आता है। धरती पर ऑक्सीजन का निर्माण करने में वृक्ष ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। वृक्ष नहीं होंगे तो एक दिन वायु भी नहीं होगी और वायु नहीं होगी तो फिर मानव भी नहीं होगा। देश में कोरोना की महामारी के बीच अस्पतालों में ऑक्सीजन की कमी भी देखने को मिली और अब लोगों को वृक्षों का महत्व और भी समझ में आ रहा है। आइए जानते है कि कौन से ऐसे पौधे है जो ऑक्सीजन का उत्पादन करने के साथ पर्यावरण के लिए भी उपयोगी है।

हम सब जानते है कि ऑक्सीजन बनाने का काम पेड़ की पत्तियां करती हैं। इसलिए जिस पेड़ में ज्यादा पत्तियां होती हैं वो पेड़ सबसे ज्यादा ऑक्सीजन बनाता है। ऑक्सीजन सबसे अधिक पीपल और बरगद से मिलती है।

पीपल पेड़ की छाल व पत्ते कई रोग में मददगार होते है। पीपल को वृक्षों का राजा कहा जाता है। शास्त्रों में इसकी वंदना एक श्लोक से की गई है -

मूलं ब्रह्मा त्वचा विष्णु शाखा शंकरमेवच।
पत्रे-पत्रेका सर्वदेवायाम, वृक्षराज नमोस्तुते।।

अर्थात् जिसके मूल में ब्रह्मा, त्वचा (छाल) में विष्णु तथा शाखाओं में शिव तथा पत्ते - पत्ते में सभी देवगण का वास हो, उस वृक्षों के राजा को नमन है।

बरगद का पेड़ जितना बड़ा और घना होगा उतनी ही अधिक इस पेड़ से ऑक्सीजन मिलेगी। इसे वट और बड़ भी कहते हैं। औषधीय गुणों से भरपूर है बरगद। **नीम का पेड़** कई औषधीय गुणों के साथ एक प्राकृतिक शोधक भी है। ये पेड़ प्रदूषित गैसों जैसे कार्बन डाईऑक्साइड, सल्फर और नाइट्रोजन को हवा से ग्रहण करके पर्यावरण में ऑक्सीजन को छोड़ता है। नीम की छाल रोगाणु नाशक है, निम्बोली का तेल कीटाणु नाशक है, नीम की पत्तियां मधुमेह निवारक व त्वचारोग निवारक है। पर्यावरणविदों का कहना है कि नीम का पेड़ लगाने से आसपास की हवा में मौजूद बैक्टीरिया मर जाते हैं। इनकी पत्तियों की संरचना ऐसी होती है कि ये बड़ी मात्रा में ऑक्सीजन उत्पादित करता है। इससे आसपास की हवा हमेशा शुद्ध रहती है। **अर्जुन का पेड़** हवा से कार्बन डाईऑक्साइड और दूषित गैसों को सोख कर उन्हें ऑक्सीजन में बदल देता है। वहीं **बांस का पेड़** बड़ी तेजी के साथ बढ़ता है।

अधिकांश पौधे बड़े पैमाने पर दिन के समय प्रकाश संश्लेषण क्रिया करते है जिसमें कार्बन डाइऑक्साइड को ग्रहण कर ऑक्सीजन छोड़ते हैं और रात के समय (श्वसन) के दौरान ऑक्सीजन लेते हैं और कार्बन डाइऑक्साइड छोड़ते हैं। कुछ ऐसे भी पौधे होते है जो कि रात में भी कार्बन डाइऑक्साइड को लेकर ऑक्सीजन छोड़ते हैं क्योंकि उनमें एक प्रकार की प्रकाश संश्लेषण करने की क्षमता होती है, जिसे क्रसुलेसियन एसिड मेटाबॉलिज्म कहते हैं। क्रेसुलेसियन एसिड चयापचय प्रकाश संश्लेषण के रूप में भी जाना जाता है, यह एक कार्बन निर्धारण मार्ग है जो कुछ पौधों में शुष्क परिस्थितियों के अनुकूलन के रूप में विकसित हुआ है. तो ऐसे ही कुछ इंडोर पौधे (वो पौधे जो घर के अंदर उगते हैं और विकसित होने के लिए कम मात्रा में प्रकाश और पानी की आवश्यकता होती है) जैसे कि **एरेका पाम**, **स्नेक प्लांट**, **जरबेरा**, **एलोवेरा**, **तुलसी**। इन पेड़ों के अतिरिक्त **पीस लिली** का पौधा वातावरण को साफ और ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ाने के लिए घर में लगाया जाता है।

विशेषज्ञ कहते हैं कि लोगों को जागरूक होना चाहिए और बहुत संख्या में पेड़ लगाने चाहिए। ऑस्ट्रेलियाई फाइकस, युकेलिप्टस पर प्रतिबंध होना चाहिए। यह वृद्धि तेजी से करते है और इनसे धरती की उर्वरा शक्ति नष्ट होती है, साथ ही इनकी लकड़ियों की कीमत भी नहीं होती है। सारे प्रदेशो के वन विभागों के साथ हम सब मिलकर पीपल, बरगद, नीम आदि का वृक्षारोपण करें तभी अपना भारत देश प्रदूषण मुक्त व ऑक्सीजन युक्त होगा। इतना ही नहीं धरती पर जितने अधिक पेड़ पौधे होंगे, उससे जल संरक्षण भी होगा। हम अपने संगठित प्रयासों से ही अपने भारत को नैसर्गिक आपदा से बचा सकते है।

भारत में वर्टिकल फार्मिंग

डॉ. दीपक कोहली
संयुक्त सचिव, उत्तर प्रदेश सचिवालय, गोमती नगर लखनऊ

भारत हर दिन कुछ नया कर रहा है. साथ ही औद्योगिकीकरण में नाटकीय रूप से वृद्धि देखी जा रही है जिसके कारण कृषि योग्य भूमि अधिक जोखिम में हैं. भारत के संदर्भ में वर्टिकल फार्मिंग इन सभी समस्याओं का समाधान है. 1915 में गिल्बर्ट एलिस बेली ने वर्टिकल फार्मिंग शब्द गढ़ा और उन्होंने इस पर एक किताब लिखी. इस आधुनिक अवधारणा को पहली बार वर्ष 1999 में प्रोफेसर डिक्सन डेस्पोमियर द्वारा प्रस्तावित किया गया था. उनकी अवधारणा इस विचार पर केंद्रित थी कि शहरी क्षेत्रों को अपना भोजन खुद उगाना चाहिये, जिससे परिवहन के लिये आवश्यक समय और संसाधनों की बचत हो सके.

वर्टिकल फार्मिंग में पारंपरिक खेती की तरह ज़मीन पर क्षैतिज रूप से खेती करने के बजाय ऊर्ध्वाधर रूप में खेती की जाती है तथा भूमि और जल संसाधनों पर अत्यधिक प्रभाव डाले बिना ऊर्ध्वाधर परतों में फसल उगाई जाती हैं. इसमें मिट्टी रहित कृषि तकनीक व अन्य कारक शामिल हैं. एरोपोनिक्स और हाइड्रोपोनिक्स जैसी ऊर्ध्वाधर कृषि प्रणालियाँ 'संरक्षित खेती' के व्यापक दायरे में आती हैं, जहाँ एक कारक पानी, मिट्टी, तापमान, आर्द्रता आदि जैसे कई कारकों को नियंत्रित कर सकता है.

बड़े पैमाने पर संरक्षित खेती उपभोक्ता के नज़दीक भोजन उपलब्ध कराकर हमारी फार्म-टू-प्लेट आपूर्ति श्रृंखला को छोटा और अनुकूलित करने की एक विशाल क्षमता प्रदान कर सकती है तथा इस तरह हमारे देश के सकल घरेलू उत्पाद में सुधार के लिये एक लंबा मार्ग तय कर आयात निर्भरता को कम कर सकती है.

वर्टिकल फार्मिंग के प्रकार:

हाइड्रोपोनिक्स: हाइड्रोपोनिक्स जल आधारित, पोषक तत्त्वों के घोल में पौधों को उगाने की एक विधि है. इस विधि में जड़ प्रणाली को एक अक्रिय माध्यम जैसे- पेर्लाइट, मिट्टी के छर्रों, पीट, काई या वर्मीक्यूलाइट का उपयोग करके उगाया जाता है. इसका मुख्य उद्देश्य ऑक्सीजन तक पहुँच प्रदान करना है जो उचित विकास के लिये आवश्यक है.

एरोपोनिक्स: एरोपोनिक्स खेती का एक पर्यावरण के अनुकूल तरीका है, जिसमें जड़ें हवा में लटकी रहती हैं और पौधे बिना मिट्टी के आर्द्र वातावरण में बढ़ते हैं. यह हाइड्रोपोनिक्स का एक प्रकार है जहाँ पौधों के बढ़ने का माध्यम और बहते पानी दोनों अनुपस्थित होते हैं. इस विधि में पौधों की जड़ों पर पानी और पोषक तत्त्वों के घोल का छिड़काव किया जाता है. यह तकनीक किसानों को ग्रीनहाउस के अंदर आर्द्रता, तापमान, पीएच स्तर और जल चालकता को नियंत्रित करने में सक्षम बनाती है.

एक्वापोनिक्स: एक्वापोनिक्स एक प्रणाली है जिसमें एक बंद प्रणाली के भीतर हाइड्रोपोनिक्स और जलीय कृषि की जाती है. एक्वापोनिक्स प्रक्रिया में तीन जैविक घटक होते हैं: मछलियाँ, पौधे और बैक्टीरिया. इस प्रणाली में पौधों और मछलियों के बीच एक सहजीवी संबंध पाया जाता है; अर्थात् मछली का मल पौधों के लिये उर्वरक के रूप में उपयोग किया जाता है, जबकि पौधे मछली हेतु जल को साफ करते हैं.

वर्टिकल फार्मिंग का महत्त्व:

वित्तीय व्यवहार्यता: यद्यपि ऊर्ध्वाधर खेती/वर्टिकल फार्मिंग में शामिल प्रारंभिक पूंजी लागत आमतौर पर अधिक होती है लेकिन यदि संपूर्ण फसल उत्पादन की परिकल्पना आवश्यकतानुसार उचित तरीके से की जाए तो यह प्रक्रिया पूरी तरह से लाभ प्रदान करने वाली बन जाती है और पूरे वर्ष या किसी विशिष्ट अवधि के दौरान एक विशेष फसल को ऊर्ध्वाधर खेती के माध्यम से उगाने, उसकी कटाई करने तथा उत्पादन करने वित्तीय रूप से व्यवहार्य हो सकती है.

अत्यधिक जल कुशल: पारंपरिक कृषि पद्धतियों के माध्यम से उगाई जाने वाली फसलों की तुलना में वर्टिकल फार्मिंग विधि के माध्यम से उगाई जाने वाली सभी फसलें आमतौर पर 95% से अधिक जल कुशल होती हैं.

पानी की बचत: भारत जैसे देश के लिये, जिसमें दुनिया के जल संसाधनों का लगभग 4% हिस्सा है, ऊर्ध्वाधर कृषि-आधारित प्रौद्योगिकियां न केवल हमारे खाद्य उत्पादन की दक्षता व उत्पादकता को बढ़ा सकती हैं, बल्कि पानी की बचत के मामले में भी सुधार कर सकती हैं, जो बदले में अपने खाद्य उत्पादन पारिस्थितिकी तंत्र के भीतर कार्बन-तटस्थता प्राप्त करने के भारत के महत्वाकाँक्षी लक्ष्यों को समर्थन और प्रोत्साहन देगा.

बेहतर सार्वजनिक स्वास्थ्य: इसके अतिरिक्त चूंकि अधिकांश फसलें "कीटनाशकों के उपयोग के बिना" उगाई जाती हैं, इससे "समय के साथ-साथ बेहतर सार्वजनिक स्वास्थ्य की दिशा में सकारात्मक योगदान" प्रदान करता है; इसलिये उपभोक्ता शून्य-कीटनाशक उत्पादन की उम्मीद कर सकते हैं, जो ग्रह के लिये स्वस्थ, ताज़ा और टिकाऊ भी है.

रोज़गार: अंत में इस बात पर ज़ोर देना महत्त्वपूर्ण है कि संरक्षित खेती में हमारे देश के कृषि छात्रों के लिये नए रोज़गार, कौशल सेट और आर्थिक अवसर पैदा करने की क्षमता है, जो सीखने की अवस्था के अनुकूल होने के साथ तेज़ी से आगे बढ़ने में सक्षम है.

आगे की राह:

खाद्य सुरक्षा के लिये मिट्टी रहित तकनीकों को प्रोत्साहित करना: भूख से लड़ने और कुपोषण के बोझ से निपटने के लिये खाद्य उत्पादन व वितरण प्रणाली को मज़बूत करना महत्त्वपूर्ण है.

एक्वापोनिक्स और हाइड्रोपोनिक्स के विकास में खाद्य सुरक्षा के सभी आयाम शामिल हैं. सरकार इन विधियों को पारंपरिक खेती के लिये व्यवहार्य विकल्प के रूप में मानती है और इन तकनीकों को बड़ी संख्या में किसानों के लिये सस्ती बनाने में सहायता प्रदान करेगी.

ज्ञान और कौशल प्रदान करना: हालाँकि इन वैकल्पिक तकनीकों का उपयोग विभिन्न हितधारकों द्वारा किया जा सकता है, घरेलू उपयोग के लिये कृषि करने वाले किसानों व छोटे से लेकर बड़े पैमाने पर खेती करने वाले किसानों तक सुरक्षित, सफल व टिकाऊ कार्यान्वयन हेतु उनमें विशिष्ट ज्ञान तथा कौशल विकसित किया जाना चाहिये.

सतत खेती को सुगम बनाना: भारत जैसे देश में कृषि भूमि पर लगातार दबाव बना रहता है, अतः इसे अन्य विकल्प के रूप में उपयोग में लाया जाता है. एरोपोनिक्स और हाइड्रोपोनिक्स प्रणाली के तहत खेती द्वारा भूमि की कमी को दूर कर स्थायी कृषि तकनीकों पर अधिक ध्यान केंद्रित किया जा सकता है.

स्कूलों के लिये आगे की रणनीति: ऐसी प्रणालियाँ कठिन हैं लेकिन इन्हें बनाए रखना असंभव नहीं है, इन प्रणालियों की कम-से-कम बुनियादी समझ होना आवश्यक है. स्कूली छात्रों को गणित, जीव विज्ञान, रसायन विज्ञान और इंजीनियरिंग जैसे मुख्य एसटीईएम विषयों के व्यावहारिक ज्ञान के साथ कृषि कार्य के रूप में स्कूलों में एक्वापोनिक सिस्टम स्थापित करने के लिये प्रोत्साहित कर सकते हैं.

डार्ट मिशन : धरती को उल्का-पिंडों से बचाने का प्रयास

विजन कुमार पाण्डेय

प्राचार्य, बड़ी बैग कॉलोनी, गाजीपुर, उ.प्र.

क्षुद्र-ग्रह सूर्य के चारों ओर घूमने वाली चट्टानी वस्तुएं होती हैं. उन्हें प्लेनेटॉइड्स या माइनर प्लैनेट्स के रूप में भी जाना जाता है. अंतरिक्ष में लाखों क्षुद्र-ग्रह हैं, जिनका आकार सैकड़ों मील से लेकर कई फीट तक होता है. कुल मिलाकर, सभी क्षुद्र-ग्रहों का द्रव्यमान पृथ्वी के चंद्रमा से कम ही होता है. हमेशा से उल्कापिंड धरती के लिए खतरा रहा है. लेकिन इससे बचने के लिए वैज्ञानिक हमेशा से तत्पर रहे हैं. एक पुरानी कहावत है कि संकट को या तो टाल देना चाहिए या फिर हिम्मत करके उससे टकराना चाहिए. कुछ यही हाल अंतरिक्ष खोज में भी है. ब्रह्मांड में बहुत से उल्कापिंड, धूमकेतु और क्षुद्र-ग्रह तैर रहे हैं. ये बेकाबू हैं और किसी भी ग्रह के गुरुत्वाकर्षण के दायरे में आने पर उससे टकराकर ख़त्म हो जाते हैं. ऐसा टकराव भारी तबाही ला सकता है. हमारी धरती ने इसका एक सबूत 1908 में साइबेरिया के टुंगुस्का में देखा था. जब एक क्षुद्र ग्रह धरती से टकराने से पहले जलकर नष्ट हो गया था. इसकी वजह से क़रीब 100 मीटर बड़ा आग का गोला बना था. इसकी चपेट में आकर 8 करोड़ पेड़ नष्ट हो गए थे.

एक साल पहले अंतरिक्ष में एक एस्टेरॉयड यानी उल्कापिंड पृथ्वी की तरफ बढ़ रहा था. इस आकाशीय संकट से बचने के लिए नासा ने पिछले साल एक मिशन शुरू किया जिसका नाम था डार्ट मिशन. जिसके तहत धरती को बचाने के लिए स्पेस में जानबूझकर एक महाटक्कर कराई गई. यहां डार्ट का अर्थ, डबल एस्टेरॉयड रीडायरेक्शन टेस्ट है. जिसका मतलब है उल्कापिंडों की दिशा बदलने का टेस्ट. इसका मकसद सिर्फ इतना ही नहीं कि यह 24,000 किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार से एस्टाराएड से टकराएगा बल्कि इस मिशन के जरिए ये जानना भी है की क्या धरती की तरफ बढ़ते किसी पिंड की दिशा बदली जा सकती है. यह अपनी तरह का पहला ऐसा मिशन है जिसमें नासा को सफलता मिली है. इस मिशन को 27 सितंबर सुबह 4 बजे के करीब पूरा कर लिया गया है. इसके तहत नासा के अंतरिक्ष यान की एक उल्कापिंड से जोरदार टक्कर हुई जिसको सारी दुनिया ने देखा.

नासा के डबल क्षुद्रग्रह पुनर्निर्देशन परीक्षण (डार्ट मिशन) जांच दल द्वारा पिछले दो हफ्तों में प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण कर 11 अक्टूबर 2022 को यह बताया कि इस टक्कर ने क्षुद्रग्रह की कक्षा को सफलतापूर्वक बदल दिया. यह मानवता का पहली बार जानबूझकर किसी खगोलीय वस्तु की गति को बदलने और क्षुद्रग्रह विक्षेपण प्रौद्योगिकी के पहले पूर्ण पैमाने पर प्रदर्शन का प्रतीक है. डाइमॉरफोस एक छोटा चंद्रमा है, जो धरती के पास मौजूद उल्कापिंड डिडिमोस का चक्कर लगा रहा है. दुनिया भर के वैज्ञानिकों का मानना है कि इस उल्कापिंड से धरती को कोई खतरा नहीं है तो फिर इसका टेस्ट क्यों किया गया? इस पर नासा वैज्ञानिकों की दलील थी कि इस उल्कापिंड का चुनाव इसलिए किया गया क्योंकि यह टेस्टिंग के लिहाज से धरती के नजदीक था. ऐसे में अगर इसकी दिशा बदलती है, तो भविष्य में इसी तरीके से धरती के लिए खतरा माने जाने वाले उल्कापिंडों की दिशा को भी बदला जा सकेगा. यह नासा का पहला ऐसा मिशन है, जिससे ये पता लगाने की कोशिश की गई है कि किस तकनीक का इस्तेमाल कर हम अपने ग्रह को बचा सकते हैं. लेकिन क्या कुछ और भी है जिसे अमेरिका लोगों से छिपा रहा है.

अब सवाल यह है कि आखिर अमेरिका को ही इस धरती की सुरक्षा के बारे में क्यों चिंता है? क्या और देश इसका खामियाजा नहीं भुकतेंगें? आखिर दुनिया के दूसरे ताकतवर देश और स्पेस में नई इबारत लिख रहे चीन, रूस, फ्रांस, इटली और भारत सरीखे देशों को इस मिशन का हिस्सा क्यों नहीं बनाया गया? क्या अमेरिका को इस मिशन के जरिये कोई निजी फायदा होने वाला है या फिर इस मिशन के पीछे अमेरिका का कोई स्वार्थ छिपा है? इसलिए नासा के इस मिशन के उस दूसरे पहलुओं पर भी

गौर करने की जरूरत है जिसे वह दुनिया के सामने नहीं ला रहा.

जरा सोचिए नासा को इस मिशन पर 26 अरब रुपए खर्च करने की क्या जरूरत थी. धरती पर अकेले अमेरिका को ही इसे बचाने की चिंता क्यों सता रही है. बाकी देशों को क्या एस्टेरॉयड से खतरा नहीं है? फिर धरती को बचाने की चिंता सिर्फ और सिर्फ अमेरिका को ही क्यों है? अमेरिका को इस बेहद खर्चीले मिशन से क्या मिलने वाला है जबकि इस बात की गारंटी नहीं है कि यह मिशन पूरी तरह सफल हो ही जाएगा. दरअसल इसके पीछे अमेरिका का एक बहुत बड़ा मकसद छुपा हुआ है. अगर ऐसा नहीं होता तो अमेरिका बाकी देशों को भी इस स्पेशल मिशन में जरूर शामिल करता. क्या अमेरिका को इस मिशन के जरिये कोई निजी फायदा होने वाला है या फिर इस मिशन के पीछे अमेरिका का कोई स्वार्थ छिपा हुआ है तो आइए हम इसके बारे में आपको विस्तार से बताते हैं.

मिशन का उद्देश्य

स्पेसक्राफ्ट जिस एस्टेरॉयड से टकराया है उसका नाम डिमॉरफोस है. यह किसी स्पोर्ट्स स्टेडियम के बराबर विशाल है. डिमॉरफोस एक दूसरे एस्टेरॉयड डिडिमोस के चारों ओर चक्कर काटता है. यहां ये भी सावधानी बरती गई कि स्पेसक्राफ्ट डाइमॉरफोस से बहुत तेज गति से न टकराए. इससे खतरा ये है कि वह डिडिमोस से टकराने के बजाय अंतरिक्ष में किसी और दिशा में निकल सकता है. इससे मिशन फेल हो जाता. अगर डाइमॉरफोस की स्थिति में एक डिग्री कोण का भी बदलाव होता है तो उसकी गति और दिशा दोनों बदल जाएगी. इस कार्यक्रम का उद्देश्य यह देखना है कि अगर कोई खतरनाक एस्टेरॉयड पृथ्वी की तरफ आता है तो उसे नष्ट किया जा सकता है या उसका रुख मोड़ा जा सकता है या नहीं. नासा के अनुसार, 11 मिलियन किलोमीटर दूर से किसी टारगेट पर सीधा निशाना साधना सरल काम नहीं होता. डिडिमोस का व्यास कुल 2600 फीट है. डाइमॉरफोस इसके चारों तरफ चक्कर लगाता है. उसका व्यास 525 फीट है. स्पेसक्राफ्ट ने करीब 22,530 किलोमीटर प्रतिघंटा की गति से डाइमॉरफोस से टक्कर की. नासा ने पृथ्वी के चारों तरफ 8000 से ज्यादा नीयर-अर्थ ऑब्जेक्ट्स (NEO) रिकॉर्ड किए हैं. इनमें से कुछ 460 फीट व्यास से ज्यादा बड़े हैं, अगर ये धरती से टकराते हैं कई शहरों को नष्ट कर सकते हैं.

'नियर अर्थ ऑब्जेक्ट' पर नजर

इसमें ताकतवर कैमरा भी लगा है जिसकी मदद से करोड़ों किलोमीटर दूर स्थित सितारों और ग्रहों की तस्वीरें खींचकर वह अपना रास्ता खुद बना लेता और उसी रास्ते पर आगे बढ़ता है. कुछ दिनों पहले इसने बृहस्पति और उसके चारों चंद्रमाओं की तस्वीरें भी शेयर की थीं, इन तस्वीरों को डार्ट स्पेसक्राफ्ट से ही खींचा गया था. दरअसल लंबे समय से नासा नियर अर्थ ऑब्जेक्ट की निगरानी कर रहा है. ये ऐसे ऑब्जेक्ट होते हैं जो पृथ्वी से 6 से 8 मिलियन किलोमीटर की दूरी पर मौजूद होते हैं. यानी पृथ्वी के करीब की वस्तुओं पर वह पारखी नजर रखे हुए है. नासा का टारगेट ऐसे एस्ट्रॉयड की खोज भी करना है जो पृथ्वी के लिए खतरा बन सकते हैं. अब तक करीब 8000 से ज्यादा निअर अर्थ ऑब्जेक्ट की खोज की जा चुकी है. नासा ने विश्वास दिलाया है कि पृथ्वी के चारों तरफ चक्कर लगा रहे 8000 चट्टानों में से एक भी अगले 100 सालों तक धरती से नहीं टकराएंगे. लेकिन अंतरिक्ष की किसी भी वस्तु का भरोसा नहीं कर सकते. कभी भी गति, टक्कर, गुरुत्वाकर्षण या किसी अन्य कारण से किसी एस्टेरॉयड की दिशा अगर बदली तो खतरा बढ़ सकता है.

मिशन का छिपा हुआ पहलू

एक बार 1964 में दो स्पेस साइंटिस्ट ने एक किताब लिखी थी जिसका नाम था 'आयरलैंड इन स्पेस'. इस किताब में पहली बार एस्ट्राएड को पृथ्वी पर दुश्मन देश के खिलाफ़ परमाणु बम के रूप में इस्तेमाल करने की कल्पना की गई थी. इस किताब में दोनों वैज्ञानिकों ने एक कैलकुलेशन के आधार पर बताया था की दो से आठ किलोमीटर ब्यास के एस्टेरॉयड की पृथ्वी से टक्कर होने पर कई मिलियन मेगाटन के बराबर ऊर्जा निकलेगी जो धरती में 30 से 80 किलो मीटर व्यास का एक गड्ढा बना देगी. जिसकी ऊर्जा पृथ्वी की सतह पर मौजूद जीवन को जला कर भस्म कर देगी. इस किताब का जिक्र यहां इसलिए जरूरी है क्योंकि अमेरिकी स्पेस एजेंसी नासा ने जिस डार्ट मिशन को अंजाम दिया है उसका एक पहलू ही दुनिया के सामने रखा गया है, वो है धरती को आसमानी खतरों से बचाने की कोशिश. जबकि मिशन का दूसरा पहलू अंधेरे में यानी डार्क में रखा गया है. इस छिपे हुए पहलुओं को किताब 'आयरलैंड इन स्पेस' से जोड़कर देखा जा सकता है.

नासा के इस मिशन से कुछ अंतरिक्ष वैज्ञानिक बहुत नाराज हैं. इसके कुछ कारण जरूर हैं. मान लीजिए कि नासा अगर अपने डार्ट मिशन में पूरी तरह कामयाब हो भी जाता है तो धरती को आसमानी खतरों से बचाने की तरकीब के साथ साथ अमेरिका की नजर एक ऐसी तकनीक पर होगी जो एक ही बार में किसी भी देश को जलाकर भस्म करने की ताकत रखेगा. अगर अमेरिका

एस्ट्राएड की दिशा बदलने की तकनीक हासिल कर लेता है तो उसके पास अंतरिक्ष में हजारों तैरते हुए एटम बम मौजूद हो जाएंगे जिसकी दिशा वो जब चाहे जिस देश की तरफ मोड़ देगा और उसे तबाह कर देगा. इसीलिए नासा के डार्ट मिशन से कुछ स्पेस साइंटिस्ट नाखुश हैं. उनका मानना है कि किसी एक सरकार या संस्था को किसी एस्टेरॉयड की दिशा बदलने का अधिकार गैरकानूनी घोषित किया जाना चाहिए.

डार्ट मिशन पूरी तरह से अमेरिकी स्पेस एजेंसी नासा का है, तो क्या इसलिए नासा ने इस बेहद खर्चीले मिशन में किसी और देश को साझीदार नहीं बनाया ताकि वो परमाणु बम से भी ज्यादा शक्तिशाली इस महाविनाशक स्पेस तकनीक हासिल कर पाए जिससे वो दुनिया का सुपर पावर हमेशा के लिए बना रहे. दूसरी तरफ स्पेस साइंटिस्ट की एक जमात मानने लगी है कि अगर डार्ट मिशन पूरी तरह सफल होता है तो अमेरिका परमाणु हथियारों की तुलना में बहुत ज्यादा विनाशकारी ताकत की नुमाइश कर सकता है. वो पृथ्वी पर ना सही लेकिन भविष्य में किसी एस्टेरॉयड को हमारे सौरमंडल से बाहर किसी भी चीज से टकराकर इस तकनीक की ताकत को परख सकता है और पूरी दुनिया को अपनी विनाशकारी ताकत से दहला सकता है.

भविष्य की योजना

भविष्य में एस्ट्रोनॉमर्स इस टक्कर का निरीक्षण करने के लिए धरती पर आधारित टेलीस्कोप का इस्तेमाल करेंगे और देखेंगे कि डाइमॉरफोस की कक्षीय अवधि कितनी बदली है, जो यह निर्धारित करेगी कि डार्ट मिशन सफल रहा है या नहीं. अंतरिक्ष में पहले से मौजूद टेलीस्कोप हबल, वेब और नासा के लूसी मिशन भी इस घटना पर नजर रखे हुए है. डार्ट से एकत्रित डेटा एस्टेरॉयड से रक्षा करने में हमारी मदद करेंगे. विशेष रूप से यह समझने में कि किस तरह के फोर्स उन नीयर अर्थ ऑब्जेक्ट्स की दिशा बदल सकती है, जिसकी हमारी पृथ्वी के टकराने की आशंका है. दरअसल खगोलविद अंतरिक्ष में 30 हजार ऐस्टरॉइड की निगरानी करते हैं. वैज्ञानिकों के मुताबिक आज से करीब 6.6 करोड़ साल पहले 11 किमी चौड़े ऐस्टरॉइड की टक्कर से धरती से विशालकाय डायनासोर तबाह हो गए थे. यह टक्कर मैक्सिको के पास हुई थी. यही वजह है कि वैज्ञानिक अब आने वाले सैकड़ों सालों में ऐसी कोई टक्कर न हो, इसकी तैयारी अभी से कर रहे हैं. हालांकि एक बड़ा संकट छोटे छोटे एस्टरॉयड से है, जिनको ट्रैक नहीं किया जा सकता है लेकिन अगर वे धरती से टकराते हैं तो इससे भारी नुकसान हो सकता है. साल 2013 में रूस के चेलयाबिन्स्क में एक 20 मीटर ऐस्टरॉइड गिरा था जिससे पूरा इलाका हिल गया था और 1600 लोग घायल हो गए थे. इनमें से ज्यादातर लोग शीशे टूटने या घर की छत के ढहने की वजह से घायल हुए थे.

अभी इस टक्कर से केवल डाइमॉरफोस की गति को बदला जा सकेगा. क्योंकि यह डिडिमोस की परिक्रमा 1 फीसदी तक करता है, जो बहुत अधिक नहीं है लेकिन यह चंद्रमा के चक्कर लगाने के समय को बदल देगा. डाइमॉरफोस को डिडिमोस का चक्कर लगाने में 11 घंटे, 55 मिनट का वक्त लगता है. लेकिन इस टक्कर से यह वक्त बदलकर 11 घंटे, 45 मिनट हो जाएगा. हालांकि समय में कितना बदलाव होगा, ये तो भविष्य ही बताएगा. लेकिन इस मिशन की कामयाबी ने कई देशों के कान खड़े कर दिए हैं. जो भी हो हम एक ऐसे नए युग में प्रवेश कर रहे हैं, जिसमें उल्कापिंड जैसी खतरनाक किसी भी चीज से खुद को बचा सकेंगे. आपको मालूम है कि किसी भी टक्कर से नुकसान भी बहुत होता है. इस टक्कर में भी यही हुआ. डार्ट का कैमरा ऐस्टरॉइड के साथ टक्कर तक प्रति सेकेंड एक तस्वीर धरती पर भेज रहा था. लेकिन टकराने के बाद स्पेसक्राफ्ट और उस पर लगा कैमरा दोनों नष्ट हो गए. शुरुआती अनुमान हैं कि यह टक्कर डिमोर्फोस के केंद्र से करीब 17 मीटर दूर हुई है. डिमोर्फोस धरती के लिए कोई खतरा नहीं था लेकिन इस मिशन की सफलता हमारा भविष्य सुरक्षित कर सकती है.

लाइव साइंस की एक रिपोर्ट के अनुसार, वैज्ञानिकों का अनुमान है कि लगभग 10 हजार उल्कापिंड हर साल पृथ्वी से टकराते हैं. पर, ऐसा बहुत कम होता है कि अंतरिक्ष से कोई विशाल चीज पृथ्वी की सतह से टकराती हो. आमतौर पर पृथ्वी पर गिरने वाली चट्टानें बहुत छोटी होती हैं और उनमें से कुछ पृथ्वी तक पहुंच पाती हैं. इनसे पृथ्वी पर मौजूद जीवों को कोई खतरा नहीं होता. हालांकि पृथ्वी पर हर साल जितने उल्कापिंडा टकराते हैं, वह चंद्रमा के मुकाबले बहुत कम होते हैं. इसलिए तो चंद्रमा की सतह पर बड़े-बड़े गड्ढे दिखाई देते हैं. अगर हम चंद्रमा पर बसने की सोच रहे हैं तो सबसे पहले इस खतरे से बचना होगा, जिसमें नासा वैज्ञानिक सफल होते नजर आ रहे हैं.

फास्ट-चार्जिंग, गैर-दहनशील बैटरी

हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद
संस्थापित-1968

नरेंद्र कुमार करनानी

सेवानिवृत्त वैज्ञानिक, भाभा परमाणु अनुसन्धान केंद्र, मुंबई

लिथियम-आयन बैटरी के आविष्कारक ने फास्ट-चार्जिंग, गैर-दहनशील बैटरी के लिए नई तकनीक पेश की है. जॉन गुडइनफ और उनकी टीम ने पहली पूर्ण-सॉलिड-स्टेट बैटरी सेल विकसित की है जो सुरक्षित, तेज़-चार्जिंग, लंबे समय तक चलने वाली रिचार्जेबल बैटरी है.

ऑस्टिन, टेक्सास के 94 वर्षीय जॉन गुडइनफ के नेतृत्व में इंजीनियरों की एक टीम ने ऑस्टिन में टेक्सास विश्वविद्यालय में कॉकरेल स्कूल ऑफ इंजीनियरिंग के प्रोफेसर और लिथियम-आयन बैटरी के सह-आविष्कारक ने पहला पूर्ण सॉलिड-स्टेट बैटरी विकसित किया है. सेल जो हैंड-हेल्ड मोबाइल उपकरणों, इलेक्ट्रिक कारों और स्थिर ऊर्जा भंडारण के लिए सुरक्षित, तेज-चार्जिंग, लंबे समय तक चलने वाली रिचार्जेबल बैटरी का नया विकल्प बन सकती है.

जॉन गुडइनफ

गुडइनफ ने नवीनतम सफलता, कॉकरेल स्कूल के वरिष्ठ शोध साथी मारिया हेलेना ब्रागा के साथ पूरी की. एक कम लागत वाली ऑल-सॉलिड-स्टेट बैटरी है जो गैर-दहनशील है और इसमें उच्च वॉल्यूमेट्रिक ऊर्जा घनत्व और चार्ज की तेज दरों के साथ एक लंबा चक्र जीवन (बैटरी जीवन) और निर्वहन है.

ऊर्जा और पर्यावरण विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित एक हालिया पेपर में इंजीनियरों ने अपनी नई तकनीक का वर्णन किया है. "बैटरी से चलने वाली कारों को अधिक व्यापक रूप से अपनाने के लिए लागत, सुरक्षा, ऊर्जा घनत्व, चार्ज और डिस्चार्ज की दर और साइकिल जीवन महत्वपूर्ण हैं." गुडइनफ ने कहा कि हमारा मानना है कि हमारी खोज आज की बैटरी में निहित कई समस्याओं का समाधान करती है.

शोधकर्ताओं ने प्रदर्शित किया कि उनकी नई बैटरी में आज की लिथियम-आयन बैटरी की तुलना में कम से कम तीन गुना अधिक ऊर्जा घनत्व है. एक बैटरी सेल का ऊर्जा घनत्व एक इलेक्ट्रिक वाहन को उसकी ड्राइविंग रेंज देता है, इसलिए उच्च ऊर्जा घनत्व का मतलब है कि एक कार चार्ज के बाद अधिक मील की दूरी तय कर सकती है. यूटी ऑस्टिन बैटरी फॉर्मूलेशन भी अधिक संख्या में चार्जिंग और डिस्चार्जिंग चक्रों की अनुमति देता है, जो लंबे समय तक चलने वाली बैटरी के साथ-साथ रिचार्ज की तेज दर (घंटों के बजाय मिनट) के बराबर होती है.

आज की लिथियम-आयन बैटरी लिथियम आयनों को एनोड (बैटरी का ऋणात्मक इलेक्ट्रोड) और कैथोड (बैटरी का धनात्मक इलेक्ट्रोड) के बीच ले जाने के लिए तरल इलेक्ट्रोलाइट्स का उपयोग करती है. यदि बैटरी सेल को बहुत तेज़ी से चार्ज किया जाता है, तो यह डेंड्राइट्स या "मेटल व्हिस्कर्स" को तरल इलेक्ट्रोलाइट्स के रूप में परिवर्तित करती है जिससे शॉर्ट सर्किट हो सकता है. जिसके कारण विस्फोट और आग लग सकती है.

मारिया हेलेना ब्रागा

तरल इलेक्ट्रोलाइट्स के बजाय, शोधकर्ता ग्लास इलेक्ट्रोलाइट्स पर भरोसा करते हैं, जो डेंड्राइट्स के गठन के बिना क्षार-धातु एनोड के उपयोग को सक्षम करते हैं.

एक क्षार-धातु एनोड (लिथियम, सोडियम या पोटेशियम), कैथोड की ऊर्जा घनत्व को बढ़ाता है और एक लंबा चक्र जीवन प्रदान करता है. प्रयोगों में, शोधकर्ताओं ने कम सेल प्रतिरोध के साथ 1,200 से अधिक चक्रों (cycles) का प्रदर्शन किया है.

इसके अतिरिक्त, क्योंकि सॉलिड-ग्लास इलेक्ट्रोलाइट्स -20 (शून्य से 20 डिग्री कम) डिग्री सेल्सियस पर काम कर सकते हैं, या उच्च चालकता रखते हैं, कार में इस प्रकार की बैटरी सब-जीरो मौसम में अच्छा प्रदर्शन कर सकती है. यह पहली ऑल-सॉलिड-स्टेट बैटरी सेल है, जो 60 डिग्री सेल्सियस के नीचे काम कर सकती है.

पुर्तगाल में पोर्टो विश्वविद्यालय में रहते हुए ब्रागा ने सहयोगियों के साथ ठोस-ग्लास इलेक्ट्रोलाइट्स विकसित करना शुरू किया. लगभग दो साल पहले, उन्होंने यूटी ऑस्टिन में गुडइनफ और शोधकर्ता एंड्रयू जे. मर्चिसन के साथ सहयोग करना शुरू किया. ब्रागा ने कहा कि गुडइनफ ने सॉलिड-ग्लास इलेक्ट्रोलाइट्स की संरचना और गुणों का उपयोग किया, जिसके परिणाम स्वरूप इलेक्ट्रोलाइट्स का एक नया संस्करण सामने आया, जिसे अब यूटी ऑस्टिन ऑफिस ऑफ टेक्नोलॉजी व्यावसायीकरण के माध्यम से पेटेंट कराया गया है.

ग्लास इलेक्ट्रोलाइट्स को डेंड्राइट्स के बिना कैथोड और एनोड दोनों तरफ क्षार धातुओं को प्लेट और स्ट्रिप रूप में बना सकते हैं, जो बैटरी सेल निर्माण को सरल बनाता है. एक अन्य लाभ यह है कि बैटरी को पृथ्वी के अनुकूल (eco freindly) सामग्री से बनाया जा सकता है. "ग्लास इलेक्ट्रोलाइट्स में लिथियम की जगह कम लागत वाले सोडियम का उपयोग किया जा सकता है. सोडियम समुद्री जल से निकाला जाता है जो व्यापक रूप से उपलब्ध है."

गुडइनफ और ब्रागा अपने बैटरी से संबंधित अनुसंधान को आगे बढ़ा रहे हैं और कई पेटेंट पर काम कर रहे हैं. अल्पावधि में, वे इलेक्ट्रिक वाहनों और ऊर्जा भंडारण उपकरणों में अपनी नई सामग्रियों के विकास और परीक्षण के लिए बैटरी निर्माताओं के साथ काम करने की उम्मीद करते हैं. यूटी ऑस्टिन ऑफ़िस ऑफ़ टेक्नोलॉजी व्यावसायीकरण के लिए सक्रिय रूप से बैटरी से संबंधित उद्योग क्षेत्रों में लगी कई कंपनियों के साथ लाइसेंस समझौतों पर बातचीत कर रहा है.

लेखकों से अनुरोध

- वैज्ञानिक पत्रिका में प्रकाशन के लिए आप विज्ञान संबंधी रचनाएं कभी भी भेज सकते हैं.
- रचनाएं कृपया वर्ड फाइल में मंगल फॉण्ट या अन्य किसी यूनिकोड फॉण्ट में ही भेजें.
- रचना के साथ दो पंक्तियों में अपना परिचय एवं अपना फोटो (<50 KB) भी भेजें.
- रचना के साथ रचना से संबंधित आवश्यक फोटोग्राफ एवं चित्र भेजें.
- भेजते समय यह अवश्य उल्लेख करें कि रचना मौलिक एवं अप्रकाशित है, एवं इसे अन्यत्र प्रकाशन के लिए नहीं भेजा गया है.
- रचनाएं निम्न ईमेल पर भेजें: hvsp.sachiv@gmail.com

संपादक

जनता के सरोकारों से संबद्ध है सड़क अवसंरचना का विकास

संजय चौधरी

हिंदी अधिकारी, संपादक 'सड़क दर्पण', सीएसआईआर - केंद्रीय सड़क अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

रोटी, कपड़ा और मकान के साथ सड़कों ने भी आज मनुष्य की मूलभूत आवश्यकता का रूप ले लिया है. सड़कें न केवल एक स्थान से दूसरे स्थान तक आने जाने के लिए प्रयोग में लाई जाती हैं, बल्कि जीवन की अन्य बुनियादी आवश्यकताओं को भी पूरा करती हैं. इसके अलावा सड़कें मनुष्य को रोजगार दिलाने और उनका जीवन-स्तर सुधारने का साधन भी होती हैं. समझा जा सकता है कि सड़क अवसंरचना के विकास के साथ जनता के सरोकार भी जुड़े हुए हैं.

कभी ये सड़कें बीमार को अस्पताल पहुंचाने का रास्ता देती हैं तो कभी शिक्षा एवं व्यापार के द्वार खोल देती हैं. अच्छी सड़कों से स्थानीय उत्पादों को बाजार तो मिलता ही है, साथ ही पर्यटन के माध्यम से घरेलू आय में वृद्धि और पूरे क्षेत्र में समृद्धि भी आती है. यही कारण है कि अच्छी सड़कें आम लोगों के साथ-साथ पूरे समाज और राष्ट्र को विकास की राह पर ले जाती हैं. भारतीय संदर्भ में मानवीय सरोकारों एवं सड़कों का संबंध इसी तथ्य से समझा जा सकता है कि देश का लगभग 87% यात्री यातायात और 60% माल यातायात सड़कों के रास्ते ही संपन्न होता है.

सड़कों के महत्व के संबंध में भले ही विभिन्न आयु वर्ग की अलग-अलग मान्यता हो सकती है, लेकिन छोटे बच्चों से लेकर बुजुर्गों तक, सभी इनकी उपयोगिता जानते हैं. छोटे कस्बों, दूर-दराज के गांवों, पहाड़ी इलाकों और बीहड़ों में रहने वाले लोग इस बात को अच्छी तरह से समझते हैं कि सड़कों का अभाव मानव जीवन में कितनी प्रकार की समस्याएं लेकर आता है. वास्तव में, उत्तम सड़कों से मानव जीवन, हमारा पर्यावरण और हमारी अर्थव्यवस्था, ये तीनों स्वस्थ अवस्था में रहते हैं. इसलिए यह माना जाता है कि सड़क अवसंरचना के विकास से राष्ट्रीय विकास का गहरा संबंध होता है. किसी भी देश के विकास में सड़कों का क्या महत्व हो सकता है, इसे पड़ोसी देश चीन के उदाहरण से अच्छी तरह समझा जा सकता है. चीन में राष्ट्रीय और स्थानीय सरकारों ने बेहतर सड़क नेटवर्क के माध्यम से भौगोलिक कनेक्टिविटी बढ़ाने के महत्व को पहचाना और देश में सड़कों का जाल बिछा दिया. इसके परिणामस्वरूप स्थानीय समुदायों को आगे बढ़ने का अवसर मिला और क्षेत्रीय एकीकरण में वृद्धि देखी गई. सड़कों के नेटवर्क के कारण सुदूर इलाकों के बुनियादी ढांचे में सुधार हुआ तथा अविकसित इलाकों तक सरकारी योजनाओं एवं सेवाओं की जानकारी पहुंचाना आसान हो गया. इस प्रकार, समाज के उपेक्षित और वंचितों के सशक्तीकरण का मार्ग प्रशस्त हो पाया.

भारत में सड़कों के बारे में एक बात निश्चित रूप से कही जा सकती है कि दैनिक समाचार पत्रों में अक्सर हमें सड़कों से जुड़ी कोई न कोई खबर पढ़ने को मिल जाती है. सड़क पर बने गड्ढे हर साल सैकड़ों लोगों की मौत का कारण बनते हैं और इसके कारण कभी यह मामला संसद में गूँजता है और कभी सर्वोच्च न्यायालय तक पहुँच जाता है. सड़कों पर घंटों घंटों तक लगने वाला जाम तथा विभिन्न कारणों से होने वाली दुर्घटनाएँ भी अक्सर सुर्खियों में रहती हैं. हमारे देश में सड़कों पर बाधित यातायात भी आम बात है क्योंकि चक्का जाम, धरना, प्रदर्शन, अतिक्रमण आदि के लिए सामान्य तौर पर सड़कें ही सबसे सुलभ जगह दिखलाई देती है.

यह माना जाता है कि सड़क अवसंरचना के विकास से संबंधित कार्यक्रमों को सही दिशा देना आवश्यक है

क्योंकि इनसे आम जनता के जीवन का हर पक्ष जुड़ा होता है. व्यक्ति के सामाजिक, आर्थिक, सामुदायिक अर्थात हर प्रकार के सरोकारों से सड़कें संबद्ध हैं. वास्तव में, अच्छी सड़कों के अभाव और इस अभाव जनित विविध समस्याओं के कारण कई बार सामान्य लोगों को भी अपने जीवन में एक दिशा मिल जाती है. अच्छी सड़कों के उपलब्ध न होने पर लोग इतने त्रस्त व आंदोलित हो जाते हैं कि अपने क्षेत्र में सड़कों को बनाना अर्थात बड़े शहरों या व्यापारिक केंद्रों से अपने इलाके को जोड़ना एवं विद्यमान सड़कों की दशा सुधारना ही उनके जीवन का उद्देश्य बन जाता है.

भौगोलिक दूरी को कम करने तथा जीवन को आसान बनाने में सड़कों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है. देहात क्षेत्र में विशेषकर घटिया सड़क प्रणाली के कारण बच्चों के लिए रोज स्कूल आना-जाना और गंभीर रुप से बीमार रोगियों को अस्पताल पहुंचाना कठिन हो जाता है. हस्त-शिल्पकारों एवं छोटे कामगारों के लिए अपने उत्पादों तथा किसानों के लिए अपनी उपज को मंडी तक ले जाना भी महंगा होता है. इसलिए यह माना जाता है कि “खराब सड़कें लोगों को और गरीब बनाती हैं.” इस मान्यता ने सड़कों के विकास और अवसंरचना में सुधार के प्रति लोगों को जागरूक बना दिया है. कई स्थानों पर यह देखा गया है कि इस जागरुकता ने अवसंरचना के विकास में भागीदारी का रुप ले लिया है.

बुनियादी सेवाओं तक सुगमतापूर्ण पहुंच बनाने तथा सामाजिक पिछड़ेपन को दूर करने के लिए सड़कों की आवश्यकता ने ही हमारे देश के कुछ सामान्य लोगों को असामान्य कार्य करने के लिए प्रेरित किया. देश में ऐसे बहुत सारे उदाहरण हैं जो बताते हैं कि समाज के उपेक्षित वर्ग से संबंध रखने वाले सामान्य व्यक्तियों ने जीवन में अभाव और समस्याओं से तंग आकर अपने गांव को नजदीक के शहर से जोड़ने के लिए स्वयं सड़क बनाने का निर्णय लिया और अकेले अपने बलबूते इसे पूरा करके दिखाया.

बिहार के 'माउंटेन मैन' के नाम से प्रख्यात दशरथ मांझी ने अपनी पत्नी के देहांत के बाद जीवन के 22 साल सड़क-निर्माण के कार्य को समर्पित कर दिए और 1982 में पूरी सड़क बनाने में कामयाब हुए. उन्होंने पहाड़ के कठोर पत्थरों के बीच से 360 फुट लंबा, 25 फुट गहरा और 30 फुट चौड़ा रास्ता तैयार किया. इसी प्रकार, रामचंद्र दास का उदाहरण है जो 11 साल तक सड़क के निर्माण में अकेले लगे रहे ताकि अपने गांव को गया जिले से जोड़ सकें. लेकिन मांझी और रामचंद्र दास द्वारा निर्मित सड़कें राज्य के सड़क नेटवर्क मानचित्र पर कहीं दिखाई नहीं देती. बिहार सरकार के सड़क निर्माण विभाग के अधिकारियों के अनुसार व्यक्तियों या समुदायों द्वारा निर्मित लगभग 70 ऐसी सड़कें और पुल बिहार राज्य में हैं जिनका सरकारी दस्तावेजों में रिकॉर्ड नहीं है.

ऐसे भी उदाहरण हैं कि सरकारी विभागों की कार्यशैली तथा लालफीताशाही से परेशान होकर पूरा का पूरा समुदाय कई बार खुद सड़क बनाने में लग जाता है. पश्चिम बंगाल की राजधानी कोलकाता से सटे उत्तर 24-परगना ज़िले के एक गाँव की महिलाओं ने ऐसा ही अद्भुत काम कर दिखाया. शक्तिनगर गाँव से मुख्य (पक्की) सड़क तक दो किलोमीटर लंबी संपर्क सड़क बनाने का जो काम नगरपालिका वर्षों में नहीं कर सकी थी, उसे दो महीनों की अपनी मेहनत से इन महिलाओं ने पूरा कर दिया. कच्ची पगडंडी को उन्होंने आठ फीट चौड़ी और दो किलोमीटर लंबी सड़क के रूप में बदल दिया. विभिन्न सामाजिक-आर्थिक अध्ययनों ने यह सिद्ध किया है कि चाहे सरकारी हो या गैर-सरकारी, ऐसी सभी सड़कें उन उपेक्षित इलाकों की जीवन रेखा बन जाती है.

ऊपर जो उदाहरण दिए गए हैं, ये सभी स्थानीय स्तर के हैं तथा उन्होंने एक सीमित क्षेत्र पर ही अपना प्रभाव डाला है. लेकिन छोटे स्तर पर होने के बावजूद यह सभी उदाहरण जन-आकांक्षा को अभिव्यक्त करते हैं. इस सच्चाई को जब भी सरकारी स्तर पर स्वीकार

किया गया और गंभीरता से योजनाओं का कार्यान्वयन हुआ तो उसके अविश्वसनीय परिणाम हमारे सामने आए. जिन क्षेत्रों में सड़क अवसंरचना से संबंधित विकास कार्य किए गए, उन क्षेत्रों का कायाकल्प हो गया. आम जनता के जीवन स्तर में सुधार हुआ तथा उसकी सोच का दायरा व्यापक हुआ.

यह जानना महत्वपूर्ण है कि हमारे देश में सड़कों के रखरखाव और निर्माण के उद्देश्य से देश की सड़कों को राष्ट्रीय राजमार्ग, राज्य राजमार्ग, जिला राजमार्ग, गांव की सड़कों, सीमा सड़क, आदि के रूप में वर्गीकृत किया गया है. हमारे देश में केन्द्र सरकार द्वारा राष्ट्रीय राजमार्गों का रखरखाव किया जाता है, संबंधित राज्य सरकार द्वारा राज्य राजमार्गों का, जबकि जिला राजमार्गों का रखरखाव संबंधित जिला बोर्ड द्वारा किया जाता है. सीमा सड़क और अंतर्राष्ट्रीय राजमार्गों की जिम्मेदारी भी केन्द्र सरकार पर है. भारत में लगभग 63.72 लाख किमी. के साथ दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा सड़क नेटवर्क है. वर्गीकरण के आधार पर भारत के सड़क नेटवर्क को निम्नलिखित तालिका में प्रस्तुत किया गया है –

क्रम	सड़क का प्रकार	लंबाई किमी. में
1.	राष्ट्रीय महामार्ग	1,41,000
2.	राज्य महामार्ग	1,71,039
3.	अन्य सड़कें	60,59,813
	कुल	**63,71,847**

(स्रोत: सड़क परिवहन और राजमार्ग मंत्रालय, वार्षिक रिपोर्ट, 2021-22)

केन्द्र के स्तर पर सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्रालय, भारत सरकार का एक मंत्रालय है जो राष्ट्रीय राजमार्गों, सीमा सड़कों और अंतर्राष्ट्रीय राजमार्गों के रखरखाव का कार्य देखता है. यह, नियमों, विनियमों और सड़क परिवहन से संबंधित कानूनों, राष्ट्रीय राजमार्गों और परिवहन अनुसंधान के निर्माण और कार्यान्वयन के लिए शीर्ष निकाय है. यह मंत्रालय निम्नलिखित के लिए जिम्मेदार है :

- देश में राष्ट्रीय राजमार्गों की योजना, विकास और अनुरक्षण.
- राज्यीय सड़कों और अंतर्राज्यीय संपर्क और आर्थिक महत्व की सड़कों के लिए राज्य सरकारों को तकनीकी और वित्तीय सहायता प्रदान करना.
- देश में सड़कों और पुलों के लिए मानक विनिर्देश तैयार करना.
- सड़कों और पुलों से संबंधित तकनीकी जानकारी के भंडार के रुप में कार्य करना.

केन्द्र के स्तर पर भारतीय अर्थव्यवस्था को मजबूती देने के लिए बुनियादी ढांचे में निवेश की एक बड़ी योजना बनाई गई है. इसमें सड़क परिवहन के ढांचे का महत्वपूर्ण स्थान है, जिसके तहत पूरे देश में बड़े पैमाने पर सड़कों का जाल बिछाया जा रहा है. भारतमाला कार्यक्रम के नाम से सरकार महत्वाकांक्षी परियोजना पर तेजी से काम कर रही है. भारतमाला परियोजना भारत सरकार की एक प्रायोजित और वित्त पोषित सड़क और राजमार्ग परियोजना है. यह परियोजना पूरी होने के बाद देश के समस्त क्षेत्रों की पहुंच राष्ट्रीय राजमार्गों तक सुगम हो जाएगी.

देश के आर्थिक विकास के लिए सड़क परिवहन को एक महत्वपूर्ण बुनियादी ढांचा माना जाता है. आज भारत जब 5 ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था बनना चाहता है तो मुख्यत: सड़क अवसंरचना के विकास पर ही हमारे लक्ष्य की पूर्ति निर्भर है. इसलिए, सड़कों का निर्माण तथा संबंधित अवसंरचना का विकास भारत के लिए सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है. लेकिन, द्वितीय विश्व युद्ध से पहले तक भारत में आधुनिक प्रकार का सड़क परिवहन अत्यंत सीमित था. पहला गंभीर प्रयास 1943 में 'नागपुर योजना' बनाकर किया गया. पराधीन भारत में यह योजना क्रियान्वित नहीं हो पाई. स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में सड़कों की दशा सुधारने के लिए सर्वप्रथम एक बीस वर्षीय सड़क योजना (1961) आरंभ की गई.

हमारे देश में पिछले कुछ वर्षों के दौरान राष्ट्रीय राजमार्गों एवं राज्य राजमार्गों के विकास की परियोजनाओं पर सर्वाधिक जोर दिया गया है.

प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, उत्तर-दक्षिण तथा पूर्व-पश्चिम गलियारा, स्वर्णिम चतुर्भुज परियोजना जैसी कई परियोजनाओं को सरकार ने सर्वोच्च प्राथमिकता दी तथा इनके चरणबद्ध निर्माण की दिशा में तेजी से काम किया गया. राष्ट्रीय राजमार्ग देश के सड़क नेटवर्क का महज दो प्रतिशत है, लेकिन वह यातायात के 40 प्रतिशत भार का वहन करता है. वर्ष 2014 में राष्ट्रीय राजमार्ग की लंबाई 96,000 किलोमीटर थी और अब हमारे पास 1.5 लाख किलोमीटर है. सरकार की योजनाओं के परिणामस्वरूप जल्द ही इनके 2 लाख किलोमीटर तक पहुंच जाने की उम्मीद है.

जालुकबारी, गुवाहाटी में सिग्नल मुक्त चौराहा

भारत में आज सड़क और राजमार्ग निर्माण के लिए विश्व-स्तरीय स्वदेशी तकनीक उपलब्ध है. सड़क परिवहन और राजमार्ग क्षेत्र में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के बढ़ते अनुप्रयोग से भारत की विकास यात्रा में बड़ी मदद मिल रही है. अब से 25 साल बाद, जब भारत स्वतंत्रता के 100 वर्ष मनाएगा तब भारत को दुनिया में अग्रणी देश के रूप में स्थापित करने में राजमार्गों की भूमिका सुनहरे अक्षरों में लिखी जाएगी. सड़क नेटवर्क एवं अवसंरचना के विकास में अकसर पूर्व अमरीकी राष्ट्रपति जॉन एफ कैनेडी के एक चर्चित बयान का हवाला दिया जाता है जिसमें उन्होंने कहा था - 'अमरीकी सड़कें इसलिए अच्छी नहीं हैं, क्योंकि अमरीका समृद्ध है, बल्कि अमरीका समृद्ध है क्योंकि अमरीकी सड़कें अच्छी हैं.'

पिछले कुछ वर्षों के दौरान सड़कों का यह विशाल नेटवर्क बहुत तेज गति से बढ़ा है. सड़क परिवहन और राजमार्ग मंत्रालय के अनुसार अप्रैल 2014 में राष्ट्रीय राजमार्ग की लंबाई 91,287 किलोमीटर थी, जो दिसंबर 2021 तक 1.41 लाख किलोमीटर तक हो गई. राजमार्ग एवं सड़कों के निर्माण की गति की दृष्टि से देखें तो पहले, हर दिन जहां 12 किलोमीटर राजमार्ग (एनएच) का निर्माण होता था, वह 37 किलोमीटर प्रतिदिन तक पहुंच चुका है. चौबीस घंटे में ढाई किलोमीटर लंबा और चार लेन का हाइवे तैयार करना एक रिकॉर्ड है और 18 घंटे में 25.54 किमी एक लेन वाली पक्की सड़क तैयार करना भी, अपने आप में एक बड़ी उपलब्धि है.

आजादी के बाद 75 सालों में देश में सड़क नेटवर्क को 150 गुना कर लिया गया है. सबसे तेज गति से सड़क बनाने का रिकॉर्ड भी भारत अपने नाम कर चुका है. आंकड़ों को देखने से स्पष्ट होता है कि भारत से तीन गुना बड़े अमेरिका में 68.03 लाख किमी लंबी सड़क है जबकि 2021-22 के रिकॉर्ड के अनुसार हमारे यहां 63.72 लाख किलोमीटर सड़कें बनाई जा चुकी हैं. इस प्रकार, भारत का सड़क नेटवर्क अमेरिका के बाद विश्व का दूसरा सबसे बड़ा नेटवर्क है. इस समय भारत में सड़कों का घनत्व लगभग 1.43 किलोमीटर प्रति वर्ग किलोमीटर है, जो कई देशों से अच्छा है.

लेकिन दूरदराज के क्षेत्रों और दुर्गम स्थानों पर आज भी सड़क नेटवर्क की पर्याप्त पहुंच का अभाव है. अधिकतर सड़कें और राजमार्ग संकरे, भीड़भाड़ वाले और खराब रख-रखाव वाले हैं जिनकी वजह से

यातायात की गति धीमी रहती है. देश में यह जाना-माना तथ्य है और अकसर ऐसा देखा भी जाता है कि सड़क मार्ग के जरिये बहुत अधिक मात्रा में माल ढुलाई की जाती है. इसके लिए भी सड़कों का मजबूत नेटवर्क आवश्यक होता है. हालांकि यह भी साबित हो चुका है कि क्षमता से अधिक ढुलाई के कारण सवारी एवं माल वाहनों, दोनों के द्वारा ज्यादा प्रदूषण होता है तथा सड़कों की क्षति भी तेज गति से होती है. वाहनों का बहुत पुराना होना, सीमा से अधिक भार ढोना, सड़क के निर्माण में खराब गुणवत्ता की सामग्री लगाना आदि कारणों से सड़कों की दशा लगातार खराब होती जाती है.

सड़कों की खराब दशा के कारण अर्थव्यवस्था को होने वाला नुकसान ही वह प्रमुख कारक है जिसने सड़कों के गुणवत्तापूर्ण निर्माण को केंद्र-बिंदु में ला दिया है. विशेषज्ञ मानते हैं कि सड़क बनाने के लिए अच्छी गुणवत्ता की सामग्री का प्रयोग बहुत आवश्यक है, क्योंकि सड़कों पर गड्ढों की वजह से हर साल देश को हजारों करोड़ रूपये का नुकसान उठाना पड़ता है. अगर सड़कें अच्छी हों तो व्यापार-कारोबार तो बढ़ेगा ही, साथ ही लोगों की जिंदगी बचेगी और उन करोड़ों रूपये की भी बचत होगी जो खराब सड़क पर दुर्घटनाग्रस्त होने के बाद इलाज में खर्च होता है.
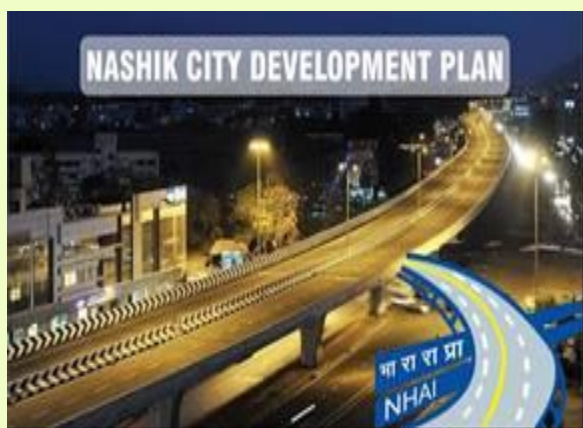
सड़कों की दशा के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय ने पिछले दिनों जो कुछ कहा, उससे वास्तविक स्थिति को समझा जा सकता है. सड़कों की खराब दशा और यातायात की अव्यवस्था की वजह से आये दिन सड़क दुर्घटनाएं होती हैं. पिछले पांच सालों में देश की सड़कों पर गड्ढों के कारण करीब 15 हजार लोगों की असामयिक मौत हुई है, जो किसी भी सभ्य समाज के लिए अस्वीकार्य है. ध्यान देने वाली बात है कि महानगरों में सड़कों की इंजीनियरी संबंधी कमियां या सड़क अवसंरचना का अनियोजित विकास भी जनता के दैनिक जीवन को ही सबसे अधिक प्रभावित करता है. इसके बावजूद सड़कें आज मनुष्य की बुनियादी जरूरत बन गई हैं और इनके बिना जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है.

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि किसी भी क्षेत्र के विकास के लिए सड़कें आज के युग की पहली प्राथमिकता बन चुकी है. किसी भी देश का सम्पूर्ण आर्थिक एवं सामाजिक विकास कहीं न कहीं अच्छी गुणवत्ता युक्त पक्की सड़कों में निहित है. देश के दुर्गम और उपेक्षित इलाकों में पक्की सड़कों के बनने तथा मुख्य शहरों एवं व्यापारिक केंद्रों से जुड़ जाने का परिणाम अत्यंत सकारात्मक होता है. अविकसित इलाकों के लिए ये सड़कें जीवन रेखा बन जाती हैं और इनके कारण आम लोगों की सोच एवं जीवन की प्राथमिकताएं बदल जाती हैं.

इतना अवश्य है कि जनता की बदलती आवश्यकताओं के अनुसार सड़क अवसंरचना के सुनियोजित विकास पर ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए. समय समय पर खराब सड़कों की मरम्मत, सड़कों के चौड़ीकरण और नई सड़कों के निर्माण से लोगों की जिंदगी पर जबरदस्त प्रभाव पड़ता है. इसी बात से राष्ट्र और समाज के विकास में सड़कों का महत्व समझा जा सकता है. सड़कों से ही देश का वास्तविक विकास संभव है क्योंकि विकास का वास्तविक रास्ता अच्छी सड़कों से ही होकर गुजरता है. प्रत्येक गांव को संपर्क मार्ग के द्वारा यदि मुख्य सड़क से जोड़ दिया जाए तो आम आदमी को आगे बढ़ने के लिए नए अवसर मिल जाते हैं और इससे भी अधिक देश के विकास को अनपेक्षित गति मिलती है.

विज्ञान में नोबेल पुरस्कार 2022

प्रतिभा गुप्ता

वैज्ञानिक अधिकारी-एफ, प्लाज़्मा अनुसंधान संस्थान, भाट, गाँधीनगर

संस्थापक: नोबेल पुरस्कार के संस्थापक अल्फ्रेड नोबेल (चित्र 1:) एक स्वीडिश रसायनज्ञ, इंजीनियर और उद्योगपति थे जो डायनामाइट के आविष्कार के लिए सबसे प्रसिद्ध थे. उन्होंने अपने जीवनकाल में 355 पेटेंट प्राप्त किए और विज्ञान में कई महत्वपूर्ण योगदान दिए. 1896 में 63 वर्ष की उमर में उनकी उनकी मृत्यु हो गई. अपनी वसीयत में, उन्होंने अपनी "शेष वसूली योग्य संपत्ति" को पांच पुरस्कारों में स्थापित करने के लिए इस्तेमाल किए जाने की इच्छा प्रकट की. इस वसीयत को कार्यान्वित करने के लिए नोबेल फाउंडेशन की स्थापना की गई. इस फाउंडेशन से नोबेल पुरस्कार दिया जाने लगा .

चित्र 1: अल्फ्रेड नोबेल

नोबेल पुरस्कारों का इतिहास: नोबेल पुरस्कार पहली बार 1901 में प्रदान किए गए थे. भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, शरीर क्रिया विज्ञान (फिज़ियोलॉजी) या चिकित्सा, साहित्य, अर्थशास्त्र और शांति के क्षेत्रों में मानव जाति को सबसे बड़ा लाभ प्रदान करने वाले योगदान के लिए नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है. स्वीडन में (शांति पुरस्कार छोड़कर) सभी पुरस्कार, दिये जाते हैं. नॉर्वे में शांति पुरस्कार दिया जाता है.

भौतिकी, रसायन विज्ञान और आर्थिक विज्ञान में रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंसेज द्वारा, फिजियोलॉजी या मेडिसिन में करोलिंस्का संस्थान में नोबेल असेंबली द्वारा, साहित्य में स्वीडिश अकादमी द्वारा, शांति में नॉर्वेजियन नोबेल समिति द्वारा पुरस्कार दिया जाता है. नोबेल पुरस्कार में एक स्वर्ण पदक (चित्र 2:), एक सर्टिफिकेट, और 10 मिलियन स्वीडिश क्रोनर की धनराशि शामिल है. नोबेल पुरस्कार विजेता को नोबेल लॉरिएट कहा जाता है .
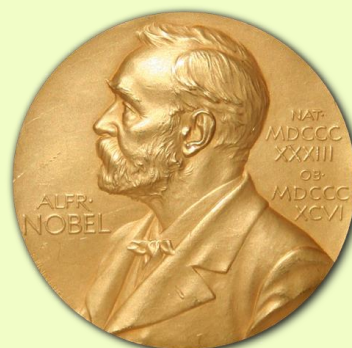
चित्र 2: नोबेल पुरस्कार का स्वर्ण पदक

भौतिकी में नोबेल पुरस्कार: 1901 और 2022 के बीच 222 नोबेल पुरस्कार विजेताओं को भौतिकी में नोबेल पुरस्कार से 116 बार सम्मानित किया जा चुका है. जॉन बारडीन एकमात्र पुरस्कार विजेता हैं, जिन्हें 1956 और 1972 में दो बार भौतिकी में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया है. इसका मतलब है कि कुल 221 व्यक्तियों ने भौतिकी में नोबेल पुरस्कार प्राप्त किया है.

भौतिकी में नोबेल पुरस्कार के कुछ रोचक तथ्य:

- भौतिकी पुरस्कार: 116
- भौतिकी पुरस्कार विजेता: 222
- सम्मानित महिलाएं: 4
- सबसे कम उम्र के पुरस्कार विजेता: 25 वर्ष
- सबसे उम्रदराज पुरस्कार विजेता: 96 वर्ष

भौतिकी नोबेल पुरस्कार 2022: एलेन एस्पेक्ट (चित्र 3a), जॉन एफ क्लॉसर (चित्र 3b) और एंटोन ज़िलिंगर (चित्र 3c) "उलझे हुए फोटॉनों के साथ प्रयोगों के लिए, बेल असमानताओं के उल्लंघन की स्थापना और अग्रणी

क्वांटम सूचना विज्ञान” में उल्लेखनीय कार्य किया है. क्वांटम यांत्रिकी के सबसे उल्लेखनीय लक्षणों में से एक यह है कि यह दो या दो से अधिक कणों को एक उलझी हुई अवस्था में मौजूद रहने की अनुमति देता है. उनका कार्य उलझी हुई क्वांटम अवस्थाएँ पर है, जहाँ दो कण अलग होने पर भी एक इकाई की तरह व्यवहार करते हैं. उलझे हुए जोड़े में से एक कण का क्या होता है यह निर्धारित करता है कि दूसरे कण का क्या होता है, भले ही वे बहुत दूर हों. यह और अन्य प्रयोग पुष्टि करते हैं कि क्वांटम यांत्रिकी सही है और क्वांटम कंप्यूटर, क्वांटम नेटवर्क और क्वांटम एन्क्रिप्टेड संचार के लिए मार्ग प्रशस्त करता है.

चित्र 3a: एलेन एस्पेक्ट

जन्म: 15 जून 1947, एजेन, फ्रांस.

पुरस्कार के समय संबद्धता: इंस्टीट्यूट डी'ऑप्टिक ग्रेजुएट.

चित्र 3b: जॉन एफ क्लॉसर

जन्म: 1 दिसंबर 1942, पासाडेना, सीए, यूएसए

पुरस्कार के समय संबद्धता: जे.एफ. क्लॉज़र एंड असोक., वॉलनट क्रीक, सीए, यूएसए.
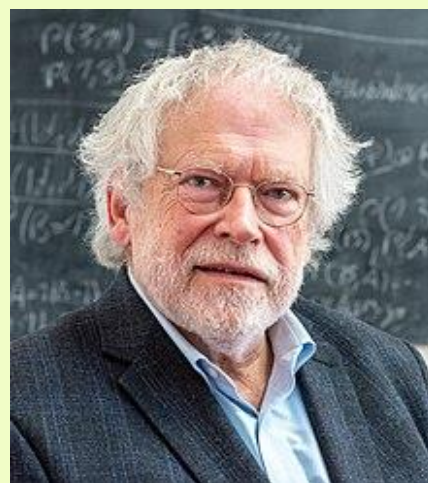
चित्र 3c: एंटोन ज़िलिंगर

जन्म: 20 मई 1945, रिद इम इनक्रेइस, ऑस्ट्रिया.

पुरस्कार के समय संबद्धता: विएना विश्वविद्यालय, विएना, ऑस्ट्रिया.

रसायन विज्ञान में नोबेल पुरस्कार: 1901 और 2022 के बीच 191 नोबेल पुरस्कार विजेताओं को रसायन विज्ञान में नोबेल पुरस्कार से 114 बार सम्मानित किया गया है. फ्रेडरिक सेंगर और बैरी शार्पलेस दोनों को दो बार रसायन विज्ञान में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है. कुल 189 व्यक्तियों को रसायन विज्ञान में नोबेल पुरस्कार मिला है.

रसायन विज्ञान में नोबेल पुरस्कार के कुछ रोचक तथ्य:

- रसायन विज्ञान पुरस्कार: 114
- रसायन विज्ञान पुरस्कार विजेता: 191
- सम्मानित महिलाएं: 8
- सबसे कम उम्र के पुरस्कार विजेता: 35 वर्ष
- सबसे उम्रदराज पुरस्कार विजेता: 97 वर्ष

रसायन विज्ञान नोबेल पुरस्कार 2022: कैरोलिन आर. बर्टोज़ज़ी (चित्र 4a), मोर्टन मेल्डल (चित्र 4b) और के. बैरी शार्पलेस (चित्र 4c) को "क्लिक केमिस्ट्री और बायो-ऑर्थोगोनल केमिस्ट्री के विकास के लिए" संयुक्त रूप से प्रदान किया गया है. रसायनज्ञ तेजी से जटिल अणुओं का निर्माण करने का प्रयास करते हैं. लंबे समय से, यह बहुत समय लेने वाला और महंगा रहा है. क्लिक केमिस्ट्री का

मतलब है कि आणविक बिल्डिंग ब्लॉक्स जल्दी और कुशलता से एक साथ स्नैप करते हैं.

चित्र 4a: कैरोलिन आर. बर्टोज़्ज़िक

जन्म: 10 अक्टूबर 1966, यूएसए

पुरस्कार के समय संबद्धता: स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी, स्टैनफोर्ड, सीए, हॉवर्ड ह्यूजेस मेडिकल इंस्टीट्यूट, यूएसए.

विशेष कार्य: सन् 2000 के आसपास, कैरोलिन बर्टोज़ी ने जीवित जीवों में क्लिक रसायन का उपयोग करना शुरू कर दिया. उन्होनें बायोऑर्थोगोनल प्रतिक्रियाएं विकसित कीं जो कोशिका के सामान्य रसायन विज्ञान को बाधित किए बिना जीवित जीवों के अंदर होती हैं. इन प्रतिक्रियाओं का उपयोग अब कोशिकाओं का पता लगाने, जैविक प्रक्रियाओं को ट्रैक करने और कैंसर फार्मास्यूटिकल्स के लक्ष्यीकरण में सुधार करने के लिए किया जाता है.

चित्र 4b: मोर्टन मेल्डाल

जन्म: 1954, डेनमार्क

पुरस्कार के समय संबद्धता: कोपेनहेगन विश्वविद्यालय, कोपेनहेगन, डेनमार्क.

विशेष कार्य: सन् 2002 में, मोर्टन मेल्डल और बैरी शार्पलेस ने, एक दूसरे से स्वतंत्र रूप से, एक सुरुचिपूर्ण और कुशल रासायनिक प्रतिक्रिया विकसित की : तांबे में एज़ाइड-एल्काइन साइक्लोडिशन को उत्प्रेरित किया. यह अब व्यापक उपयोग में है और इसका उपयोग फार्मास्यूटिकल्स के विकास में, डीएनए की मैपिंग और नये पदार्थ बनाने के लिए किया जाता है.
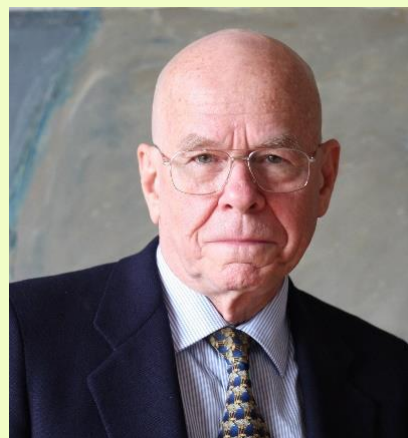
चित्र 4c: के. बैरी शार्पलेस

जन्म: 28 अप्रैल 1941, फिलाडेल्फिया, पीए, यूएसए

पुरस्कार के समय संबद्धता: स्क्रिप्स रिसर्च, ला जोला, सीए, यूएसए

2001 में रसायन विज्ञान में नोबेल पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया है.

फिजियोलॉजी या मेडिसिन में नोबेल पुरस्कार: 1901 और 2022 के बीच 225 नोबेल पुरस्कार विजेताओं को फिजियोलॉजी या मेडिसिन में नोबेल पुरस्कार से 113 बार सम्मानित किया गया है.

मेडिसिन में नोबेल पुरस्कार के कुछ रोचक तथ्य:

- फिजियोलॉजी या मेडिसिन पुरस्कार: 113
- फिजियोलॉजी या मेडिसिन पुरस्कार विजेता: 225
- सम्मानित महिलाएं: 12
- सबसे कम उम्र के पुरस्कार विजेता: 32 वर्ष
- सबसे उम्रदराज पुरस्कार विजेता: 87 वर्ष

फिजियोलॉजी या मेडिसिन 2022 में नोबेल पुरस्कार स्वंते पाबो (चित्र 5) को "विलुप्त होमिनिन और मानव विकास के जीनोम से संबंधित उनकी खोजों के लिए" प्रदान किया गया है.
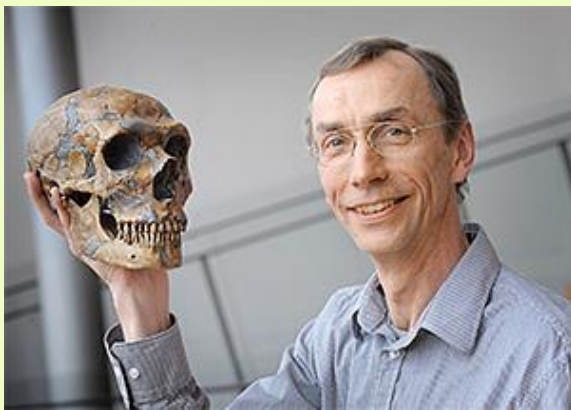
चित्र 5: मेडिसिन 2022 में नोबेल पुरस्कार : स्वंते पाबो

स्वंते पाबो का जन्म 1955 में स्वीडन के स्टॉकहोम में हुआ था. उन्होंने 1986 में उप्साला विश्वविद्यालय में अपनी पीएचडी थीसिस का डिफेन्स किया और ज्यूरिख विश्वविद्यालय, स्विट्जरलैंड और बाद में कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले, यूएसए में पोस्ट-डॉक्टरल फेलो थे. वे 1990 में म्यूनिख विश्वविद्यालय, जर्मनी में प्रोफेसर बने. 1999 में उन्होंने जर्मनी के लीपज़िग में मैक्स प्लैंक इंस्टीट्यूट फॉर इवोल्यूशनरी एंथ्रोपोलॉजी की स्थापना की, जहां वे अभी भी सक्रिय हैं. वह ओकिनावा इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एंड टेक्नोलॉजी, जापान में सहायक प्रोफेसर के रूप में भी कार्यरत हैं.

अपने करियर की शुरुआत में, निएंडरथल के डीएनए का अध्ययन करने के लिए आधुनिक आनुवंशिक तरीकों का उपयोग करने की संभावना से स्वंते पाबो अचरज में पड़ गये. हालांकि, उन्हें जल्द ही अत्यधिक तकनीकी चुनौतियों का एहसास हुआ, क्योंकि समय के साथ डीएनए रासायनिक रूप से संशोधित हो जाता है और छोटे टुकड़ों में बदल जाता है. हजारों वर्षों के बाद, डीएनए की केवल थोड़ी मात्रा ही बची है, और जो बचा है वह बैक्टीरिया और समकालीन मनुष्यों के डीएनए से बड़े पैमाने पर दूषित है. विकासवादी जीव विज्ञान के क्षेत्र में अग्रणी एलन विल्सन के साथ एक पोस्ट-डॉक्टरल छात्र के रूप में, पाबो ने निएंडरथल से डीएनए का अध्ययन करने के तरीकों को विकसित करना शुरू किया, एक प्रयास जो कई दशकों तक चला.

हमारे पुरखे कौन हैं : मानवता हमेशा से इसकी उत्पत्ति के बारे में अध्ययनशील रही है. हम कहाँ से आए हैं, और जो हमसे पहले आए थे, उनसे हमारा क्या संबंध है? क्या हमें, होमो सेपियन्स, अन्य होमिनिन से अलग बनाता है?

पाबो की खोजों ने हमारे विकासवादी इतिहास की नई समझ पैदा की है. उस समय जब होमो सेपियन्स अफ्रीका से बाहर चले गए, कम से कम दो विलुप्त होमिनिन आबादी यूरेशिया में रहती थी. निएंडरथल पश्चिमी यूरेशिया में रहते थे, जबकि डेनिसोवन्स महाद्वीप के पूर्वी हिस्सों में बसे थे. अफ्रीका के बाहर होमो सेपियन्स के विस्तार और पूर्व में उनके प्रवास के दौरान, उन्होंने न केवल निएंडरथल के साथ, बल्कि डेनिसोवन्स के साथ भी इंटरब्रीड किया, जिससे हमारे डीएनए में उनके निशान रह गए (चित्र 6).
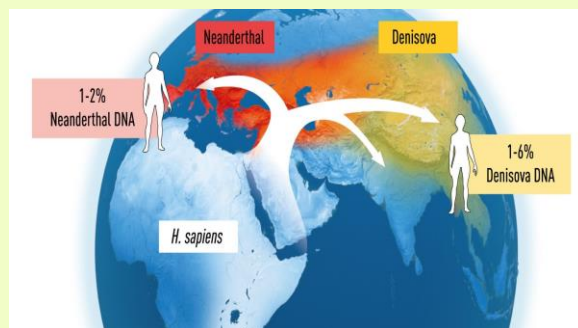
चित्र 6: पाबो की खोजों ने महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान की

लिंडौ नोबेल पुरस्कार विजेता बैठकें : 1951 से जर्मनी के लिंडौ में आयोजित लिंडौ नोबेल पुरस्कार विजेता बैठकें (चित्र 7:) वार्षिक वैज्ञानिक सम्मेलन हैं. उनका उद्देश्य विभिन्न पीढ़ियों और संस्कृतियों के बीच वैज्ञानिक आदान-प्रदान को बढ़ावा देने के लिए नोबेल पुरस्कार विजेताओं और युवा अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिकों को एक साथ लाना है. अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक सम्मेलनों के बीच बैठकें एक अद्वितीय स्थान रखती हैं, क्योंकि प्रत्येक बैठक में भाग लेने वाले 30 से 65 नोबेल पुरस्कार विजेता स्टॉकहोम में नोबेल पुरस्कार के पुरस्कार समारोह के अलावा दुनिया में नोबेल पुरस्कार विजेताओं की सबसे बड़ी नियमित बैठक है .

चित्र 7: लिंडौ नोबेल पुरस्कार विजेता बैठक

नोबल पुरस्कार से सम्मानित भारतीय मूल के वैज्ञानिक :

चित्र 8: सर चंद्रशेखर वेंकट रमण

सर चंद्रशेखर वेंकट रमण : 1930 में भौतिकी में सर सी. वी. रमन (चित्र 8) को उनके विशिष्ट योगदान के लिए नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था. उन्होंने प्रकाश के प्रकीर्णन के व्यवहार पर असाधारण कार्य किया. उन्होंने जो शोध किया उसका नाम उनके नाम पर रखा गया, जिसे रमन प्रभाव कहा गया. उन्होंने आकाश के नीले रंग के कारणों की खोज की. वे भौतिकी में यह उपलब्धि हासिल करने वाले पूरे एशिया के पहले व्यक्ति थे. उनकी खोज का दिन 28 फरवरी को भारत में राष्ट्रीय विज्ञान दिवस के रूप में मनाया जाता है.
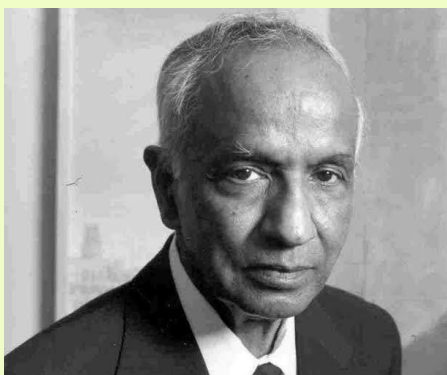
चित्र 9: सुब्रमण्यम चंद्रशेखर

सुब्रमण्यम चंद्रशेखर: भौतिकी में नोबेल पुरस्कार 1983 को सुब्रमण्यम चंद्रशेखर (चित्र 9) के बीच "सितारों की संरचना और विकास के लिए महत्व की भौतिक प्रक्रियाओं के सैद्धांतिक अध्ययन के लिए" और विलियम अल्फ्रेड फाउलर के साथ ”ब्रह्मांड में रासायनिक तत्वों के निर्माण में महत्व की परमाणु प्रतिक्रियाओं के उनके सैद्धांतिक और प्रायोगिक अध्ययन के लिए” दिया गया था.

चित्र 10: वेंकटरामन रामकृष्णन

वेंकटरामन रामकृष्णन: रसायन विज्ञान में नोबेल पुरस्कार 2009 से वेंकटरामन रामकृष्णन (चित्र 10), थॉमस ए. स्टीट्ज़ और एडा ई योनाथ को "राइबोसोम की संरचना और कार्य के अध्ययन के लिए" संयुक्त रूप से सम्मानित किया गया था.
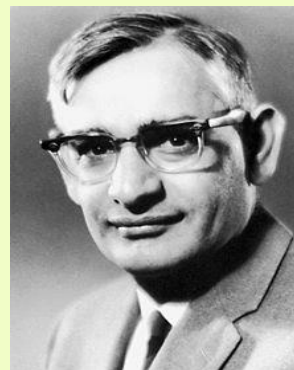
चित्र 11: हर गोबिंद खोराना

हर गोबिंद खोराना: फिजियोलॉजी या मेडिसिन के लिए 1968 का नोबेल पुरस्कार हर गोबिंद खोराना (चित्र 11) ने अनुसंधान के लिए मार्शल डब्ल्यू. निरेनबर्ग और रॉबर्ट डब्ल्यू. होली के साथ साझा किया, जिसमें न्यूक्लिक एसिड में न्यूक्लियोटाइड का क्रम दिखाया गया था, जो कोशिका के आनुवंशिक कोड को ले जाते हैं और कोशिका के प्रोटीन के संश्लेषण को नियंत्रित करते हैं.

सारांश: विज्ञान में नोबेल पुरस्कार मिलना बहुत सम्मान की बात है. नोबेल पुरस्कार से पुरस्कृत वैज्ञानिकों ने उनके मूल और नवीन विचारों, उनकी लगन और कड़ी मेहनत से समाज के लिए उपयुक्त कार्य किया है.

सन्दर्भ:

1. http://www.britannica.com
2. https://www.nobelprize.org/alfred-nobel/biographical-information/
3. https://en.wikipedia.org/wiki/Nobel_Prize

शरीर के लिये महत्वपूर्ण हैं
शक्तिशाली विटामिन 'डी' और 'बी-12'

डॉ. प्रेमचंद्र स्वर्णकार

गायत्री नगर, पो॰ दमोह - 470661 (म.प्र.)

एम.बी.बी.एस., एम.डी., 30 पुस्तकों एवं 10 पुस्तिकाओं के लेखक, हिंदी लेखन में रूचि, 12 राष्ट्रीय पुरुस्कारों से सम्मानित, समाजसेवी.

यद्यपि शरीर के लिए संतुलित भोजन के सभी घटक महत्वपूर्ण हैं और सभी विटामिन्स की भी शारीरिक प्रक्रिया में विशेष भूमिका होती है, लेकिन विटामिन 'डी' और 'बी-12' कुछ अलग तरह के विटामिन हैं जो शरीर के लिये अत्यंत आवश्यक होते हैं. लेकिन अज्ञानता या असावधानी वश अकसर शरीर में इनकी कमी हो जाती है. इस कारण व्यक्ति गंभीर रोगों से ग्रसित भी हो जाता है और ये विटामिन्स विटामिन 'डी' और 'बी-12' अकसर सामान्य भोजन से प्राप्त नहीं हो पाते इनके लिए विशेष प्रयास करने होते हैं. और इनको रातों-रात या एकदम से प्राप्त नहीं किया जा सकता है. अतः इनकी प्राप्ति की ओर ध्यान केन्द्रित करना जरूरी होता है.

आपको आश्चर्य होगा कि लगभग 30 प्रतिशत लोग जिनमें स्वयं डॉक्टर्स छात्र-छात्राएं और नौकरी पेशा लोग शामिल हैं, विटामिन 'डी' की कमी से जूझ रहे हैं. अमेरिका में तो 40 प्रतिशत लोग विटामिन डी की कमी से जूझ रहे हैं. विटामिन डी की खोज सन् 1930 में वैज्ञानिकों द्वारा की गई थी.

बहुत से पढ़े-लिखे लोगों को पता है कि विटामिन डी धूप के सेवन से हमारी त्वचा द्वारा बनती है, लेकिन फिर भी वे पूरे शरीर के साथ चेहरा भी ढांके रखते हैं उन्हें डर होता है कि धूप पड़ने से उनका रंग काला हो जायेगा. जबकि 10-15 मिनिट हल्की धूप रोज या सप्ताह में 3-4 दिन तो लेनी ही चाहिये.

विटामिन डी की कमी से शरीर में कैल्शियम की कमी भी हो जाती है, जिससे हड्डियां भी कमजोर होकर अस्थि- पोरोसिस या अस्थि-छिद्रता नामक रोग का शिकार हो जाती हैं. चूंकि विटामिन डी भोज्य पदार्थों से कैल्शियम अवशोषित करने का कार्य करता है.

इसके अलावा विटामिन डी की कमी से शरीर की रोग प्रतिरोधक शक्ति कम हो जाती है. ऐसी महिलाओं में अकसर विटामिन डी की कमी पाई गई है जो हमेशा सारे शरीर को ढंककर रखती है और कभी कभार हल्की धूप का भी सेवन नहीं करती हैं और परिणामतः विटामिन डी सहजता से उपलबध होते हुये भी लोगों में इस विटामिन की कमी बढ़ रही है. यह पाया गया है कि विटामिन डी की कमी कोरोना काल में और भी बढ़ी है. जबकि विटामिन डी शरीर की इम्युनिटी भी बढ़ाता है. अतएव लोगों को इसकी कमी को दूर करने का प्रयास करना चाहिये स्वास्थ्य विभाग को भी इस लोग ध्यान देने की जरूरत है.

इसी प्रकार एक और शक्तिशाली और महत्वपूर्ण विटामिन है, बी-12 इसे कोबाल्मिन कहते हैं इसकी खोज सन् 1948 में हुई थी. इस विटामिन में कोबाल्ट और फास्फोरस होता है और यह लाल रंग का होता है. इस विटामिन की प्रमुख विशेषता यह है कि यह प्राणिज स्त्रोत से ही प्राप्त होता है. वनस्पतियों में यह नहीं मिलता. यही कारण है कि विटामिन बी-12 की कमी अक्सर हो जाती है, विशेषकर ऐसे शाकाहारियों में तो यह कभी ज्यादा होती है, जो दूध और दूध से बने उत्पाद जैसे पनीर चीज मक्खन आदि नहीं ले पाते हैं. इस विटामिन की कमी से गंभीर परनीसियस नामक रक्ताल्पता हो जाती है तथा तंत्रिका तंत्र के गंभीर रोग कोबाल्बिन की कमी से उत्पन्न हो जाते हैं. यह शरीर में लाल रक्त कणिकाओं और अन्य कोशिकाओं की वृद्धि में भी सहायक होता है. अतएव इस विटामिन की कमी को दूर करना भी जरूरी है. वरना रक्ताल्पता और अन्य गंभीर बीमारियां भी हो सकती हैं.

विटामिन बी-12 शरीर की कोशिकाओं के पैतृक गुणों के वाहक डी.एन.ए. को भी बनाता है, इस प्रकार यह विटामिन 'बी' समूह का एक महत्वपूर्ण और विशेष

विटामिन है. यह पानी में घुलनशील विटामिन है और पेट की छोटी आंतों के अंतिम भाग द्वारा अवशोषित होता है. लेकिन इसके लिये वह एक इंट्रेसिक फेक्टर नामक कारक से संयुक्त होता है यह कारक एक प्रोटीन होता है, जो आमाशय द्वारा उत्पन्न किया जाता है. यह विटामिन यकृत में जमा रहता है और जब व्यक्ति बी-12 की कई दिनों तक नहीं दे पाता तो शरीर इसी का प्रयोग करता है लेकिन शाकाहारी लोग यदि पर्याप्त मात्रा में दूध और उससे बने उत्पाद न लें तो फिर उनके शरीर को इस विटामिन की पर्याप्त मात्रा नहीं मिल पाती है. विटामिन बी-12 तंत्रिकाओं और मस्तिष्क के कार्यों को सही रूप में संपादित करने के लिये भी जरूरी होता है यदि व्यक्ति के शरीर के लीवर में पर्याप्त मात्रा में विटामिन बी-12 एकत्र हो तो 3-4 वर्षों तक शरीर में रक्त अल्पता नहीं होने पाती लेकिन जब इस विटामिन की कमी हो जाती है तो रक्ताल्पता (एनीमिया) होती ही है, साथ ही तंत्रिकायें क्षतिग्रस्त हो जाती है. शरीर का मेरूरज्जू या स्पाइनल कार्ड भी विटामिन बी-12 की कमी से प्रभावित होता है.

1. विटामिन डी

चूंकि शरीर की त्वचा पर धूप पड़ने से यह विटामिन तैयार होता है अतएव इसे सनसाइन विटामिन डी कहते हैं. लेकिन धूप से बचने की प्रवृत्ति विटामिन डी की कमी की समस्या को बढ़ा रहा है, विशेषकर महिलाओं में इसकी ज्यादा कमी देखने को मिल रही है. विटामिन डी की कमी से कैल्शियम की भी कमी हो जाती है, जिससे हड्डियां कमजोर होती है.

विटामिन डी की कमी के लक्षण और होने वाले रोग

दिल्ली एम्स ने कई स्वास्थ्य संस्थाओं से मिलकर एक सर्वे किया था. उसके अनुसार उसमें 60 प्रतिशत से अधिक लोगों में विटामिन डी की कमी पाई गई. महिलाओं में पुरुषों की अपेक्षा यह कमी अधिक देखी गई है. इस शोध में म.प्र. का भोपाल शहर भी शामिल था. शोध में यह भी उजागर हुआ कि जिन लोगों में विटामिन डी की कमी थी उनमें से कई को टी. बी. भी हो गई थी. यह शोध एक वर्ष में 3 हजार लोगों पर किया गया. इनमें टी.बी. के 1 हजार रोगी लिये गये तथा 1 हजार रोगी अन्य बीमारियों के एवं 1 हजार स्वस्थ दिखने वाले रोगियों को लिया गया था. इन सभी के रक्त में विटामिन डी की जांच की गई तो 20 प्रतिशत लोगों में इसकी कमी पाई गई. ये परिणाम चौंकाने वाले थे. ब्रेन, टी.बी. के मरीजों में विटामिन डी सबसे कम मिला तथा मधुमेह (डायबिटीज) तथा प्रोस्टेट कैंसर वाले रोगियों में भी यह कम था. सर्वे में देश के दिल्ली, लखनऊ, मुंबई, पुणे, पटना, बेंगलुरू, जैसे शहर भी शामिल थे तथा यहां के मेडिकल कालेजों के पी.एस.एम. विभाग के डॉक्टरों ने सहयोग किया. चूंकि विटामिन डी की कमी से रोग प्रतिरोधक शक्ति कम हो जाती है, इसलिये कई बीमारियों की संभावना बढ़ जाती है, तथा हड्डियां कमजोर हो जाने की वजह से बच्चों में रिकेट या सूखा रोग नामक बीमारी हो जाती है. इस रोग में हड्डियां टेढ़ी हो जाती है, बच्चा ठीक से खड़ा नहीं हो पाता है, सीने का आकार भी बदल जाता है तथा हड्डियों के जोड़ो का आकार बढ़ जाता है, दांतों का विकास भी रुक जाता है.

इनके अलावा आस्टियो मलेशिया नामक रोग भी हड्डिया कमजोर होने की वजह से हो जाता है. यहां तक कि वे शरीर का वजन नहीं सह पाती और टेढ़ी-मेढ़ी हो जाती है. कई बार टूट भी जाती है इन गंभीर रोगों से विटामिन डी के महत्व का पता चलता है. अतः यह प्रयास करना चाहिए कि इसकी कमी न हो.

विटामिन डी की कमी को दूर करने तथा उसकी कमी से बचने के उपाय

धूप की उपस्थिति में शरीर की त्वचा में मौजूद स्टेरॉल विटामिन डी में बदल जाता है. यदि व्यक्ति 15-20 मिनिट ही धूप में रहे तो आवश्यक विटामिन डी की पूर्ति हो जाती है. शरीर की जरूरत का 90 प्रतिशत विटामिन डी धूप से ही मिल सकता है. शेष 10 प्रतिशत भोजन में मौजूद खाद्यों से मिलता है. रोजाना लगभग 40 अंतर्राष्ट्रीय इकाई लेने से एक वयस्क का काम चल जाता है.

विटामिन डी के शरीर में कार्य

यह शरीर की रोग प्रतिरोधक शक्ति बढ़ाता है. नये शोधों के अनुसार धूप विटामिन 'डी' तो बनाती ही है साथ ही डिप्रेशन (अवसाद) भी दूर करती है. विटामिन 'डी' खून के संचार, मांसपेशियों की गतिविधियां तथा संक्रमणों और हड्डी संबंधी रोगों से शरीर को बचाता है. यह कैल्शियम और फास्फोरस का अवशोषण करता है जिससे हड्डियां मजबूत होती है. विटामिन 'डी' एक तरह के हार्मोन का कार्य करता है जिससे बच्चों में रिकेट (सूखा रोग) और बड़ों में आस्टियो पोरोसिस (इसमें हड्डियों में छिद्रलता हो जाती है, हड्डियां कमजोर होकर टूट भी सकती हैं) का इलाज होता है.

विटामिन डी के स्रोत

जैसा कि बतलाया गया है कि सूर्य का प्रकाश विटामिन डी लेने का प्रमुख स्त्रोत है. अतएव 15-20 मिनिट सहनीय धूप में रहने का प्रयास करें. महिलाएं कुछ देर धूप का सेवन करें. मध्य दिवस (मिड-डे) की धूप से यह विटामिन ज्यादा बनता है.

भोजन में बहुत ज्यादा विटामिन नहीं मिल पाता इसलिये यह अच्छा स्त्रोत नहीं है. मांसाहार में लिवर, अण्डों में यह होता है. शाकाहारी इसे दूध मक्खन घी से प्राप्त कर सकते हैं. वनस्पति घी में भी अलग से विटामिन डी मिलाया जाता है. मछली के तेल में भी विटामिन डी होता है इसलिए डॉक्टर ए/डी कैप्सूल खाने की भी सलाह देते हैं.

विटामिन डी की कितनी मात्रा जरूरी है

इसका निर्धारण पूर्ण रूप से नहीं किया जा सकता है, यह व्यक्ति पर भी निर्भर करता है. फिर भी बच्चों में पांच एम.सी.जी. या 200 आई.यू. विटामिन डी रोज लेना उचित होता है. जबकि वयस्क व्यक्ति 400 अंतराष्ट्रीय इकाई या 10 एम.सी.जी. विटामिन डी ले सकते हैं. इस विटामिन की मात्रा ज्यादा भी नहीं लेनी चाहिए क्योंकि वह हानिकारक (टॉक्सिक) भी हो सकती है. लेकिन विटामिन डी लेना बहुत जरूरी है.

2. विटामिन बी-12 (साईनोकोबाल्विन)

जैसा कि पूर्व में भी बतलाया गया है कि विटामिन बी-12 भी अत्यंत महत्वपूर्ण विटामिन है. लेकिन बिडम्बना यह है कि इस विटामिन की भी शाकाहारियों में अक्सर कमी पाई जाती है क्योंकि यह प्राणिज स्त्रोत में ही पाया जाने वाला विटामिन है. लेकिन फिर भी दूध और दूध से बने उत्पादों में विटामिन बी-12 मौजूद होता है. हां, मात्रा जरूर लीवर (यकृत) या मीट मटन से कम होती है. इस विटामिन की कमी, शरीर में गंभीर समस्याएं उत्पन्न करती है.

क्या लक्षण हैं शरीर में साईनोकोबाल्विन की कमी के

विटामिन बी-12 की कमी शाकाहारियों विशेषकर अधिक उम्र के व्यक्तियों में अधिक देखी गई है. इसकी कमी के निम्न लक्षण और रोग मिल सकते हैं.

1. हथेलियों में पीलापन लिये कुछ सफेद हो जाती हैं, तथा आँखों के नीचे की श्लेष्मा भी लाल की बजाए पीलापन लिए सफेद हो जाती है. यह लक्षण शरीर में रक्त-अल्पता के होते हैं.

2. कमजोरी एवं थकावट - रोगी जल्दी थक जाता है उसे एक तरह की गंभीर रक्त-अल्पता हो जाती है जिसे परनीसियस रक्त-अल्पता कहते हैं. इस कारण शरीर पर्याप्त आक्सीजन शरीर को दे नहीं पाता.

3. पैरों और हाथों में पिन चुभने का या शून्यता का एहसास होता है. चूंकि विटामिन बी-12 की कमी से शरीर की तंत्रिकाओं की रक्षा करने वाली पर्त बन नहीं पाती और वह क्षतिग्रस्त हो जाती है.

4. शरीर के अंगों में चलने के दौरान संतुलन या एकरूपता नहीं रहती.

5. मुंह में छाले हो जाते हैं जीभ में सूजन हो सकती है, इस कारण जीभ चिकनी दिखती है.

6. रोगी हांफता है और उसे चक्कर आ सकते हैं.

7. रोगी को कुछ धुंधला या हिलता सा दिखता है.

8. रोगी को अवसाद हो जाता है तथा भूलने की भी आदत पड़ जाती है.

9. इसकी कमी से आस्टियो पोरोसिस अथवा अस्थि छिद्रता हो सकती है. इस रोग से हड्डियों का आकार कम हो जाता है और वे कमजोर हो जाती हैं.

10. रोगी का वजन भी कम हो सकता है.

विटामिन बी-12 के स्त्रोत

यह विटामिन मांसाहारी को लिवर, गोस्त, अण्डों से मिल जाता है और शाकाहारियों के लिये दूध और दूध से बने उत्पादों जैसे पनीर इत्यादि से मिलता है. लेकिन दूध के पास्चराइजेशन से 10 प्रतिशत विटामिन्स कम हो जाता है तथा उबालने से 40 प्रतिशत से 80 प्रतिशत तक कम जाता है. इस तरह शाकाहारियों में कोबाल्चिन के स्त्रोत कम ही हैं. डिब्बे बंद खाद्यों में भी इस विटामिन का ह्रास हो जाता है. विटामिन बी-12 की कितनी मात्रा किसको प्रतिदिन जरूरी होती है -

1. वयस्क स्त्री पुरुष - 1 माईक्रोग्राम
2. दूध पिलाने वाली महिलाएं - 1.5 माईक्रोग्राम
3. शिशु - 0.2 माईक्रोग्राम
4. बच्चों और किशोरों को - 0.2 से 1.0 माईक्रोग्राम

इस विटामिन की कमी का इलाज

इसके लिए विटामिन बी-12 युक्त इंजेक्शन रोगी को दिये जाते हैं. सीरप या गोली / कैप्सूल के रूप में भी यह विटामिन दिया जाता है तथा भोजन भी विटामिन बी-12 युक्त लिया जाता है. गंभीर स्थिति में विटामिन बी-12 के इंजेक्शनों से ही ज्यादा लाभ होता है.

डिजिटल रूपांतरण : साभार, श्री नरेंद्र कुमार करनानी

विज्ञान कविता

शिव सन्याल

मकड़ाहन, ज्वाली कांगड़ा, हि.प. - 176023

दोहे : पर्यावरण, पेड़ और वैक्सीन

धरा प्रदूषण बढ़ रहा, दूषित पर्यावरण.
सेहत को है चाहिये, स्वच्छ वातावरण.

पॉलिथीन को त्यागिये, रोकता जल बहाव.
वहाँ गंदगी पनपती, जल का हो ठहराव.

वृक्ष न काटो तुम सुनो, वैभव के भंडार.
आक्सीजन देते हमें, हैं जीवन आधार.

साफ पर्यावरण रहे, स्वस्थ होंगे लोग.
हवा स्वच्छ हमें मिले, लगे कभी न रोग.

पीपल, बरगद पेड़ हो, तुलसी, जूही, नीम.
देते आक्सीजन हमें, सब से बड़े हकीम.

एलोवेरा फाइकस, लगाओ मनी प्लांट.
जूही एरिकापाम से, शोभे बांबू प्लांट.

कसम खाओ जी मन से, खूब लगाएं पेड़.
रक्षित पर्यावरण हो, करें न इन से छेड़.

सूरज के ही तेज से, धीरे उठते मेघ.
गगन तड़ित गर्जन करे, उमड़े आते मेघ.

सूरज फैलाता सदा, चहुँ ओर है नूर.
होती जग में रोशनी, तम भागे है दूर.

सूरज जीवन-दायनी, प्रकृति का करे संचार.
जागे है नव-चेतना, होता जग विस्तार.

दो गज है दूरी भली, नहीं मिलाओ हाथ.
मास्क मुंह पर रखना, मिल के रहो न साथ.

भीड़ में मत जाईये, कोरोना बलवान.
सुक्ष्म जीव जानलेवा, ना होती पहचान.

चढ़े ताप गला सूखे, रहो तुम सावधान.
चैकअप करवाईये, यही है समाधान.

लगाइये वैक्सीन को, नजदीक हस्पताल.
अब देरी मत कीजिए, कर अपनी सँभाल.

साबुन से हाथ धोना, मलना बारंबार.
किटाणू मर जाएगा, रखो यह शुभ विचार.

पेड़ इक लगाया नहीं, काट डाले हजार.
अब पछतावा क्यों करे, दी कुदरत ने मार.

आक्सीजन को मांगता, जा जा के परदेस.
सँभल पहले ही जाता, न पड़ता यह क्लेश.

प्राणवायु आधार है, जीवन का स्वरूप.
गरीब भले अमीर हो, या बलशाली भूप.

चाहते सभी जिंदगी, साफ हवा के साथ.
पेड़ लगायें मिल सभी, आओ हाथों हाथ.

पेड़ आक्सीजन देते, करें जीव उद्धार.
है आक्सीजन जीव का, जीने का आधार.

.. आयुर्वेदिक दोहे ..

आचार्य आञ्जनेय विजयानंद

दही मथें माखन मिले, केसर संग मिलाय,
होठों पर लेपित करें, रंग गुलाबी आय.

बहती यदि जो नाक हो, बहुत बुरा हो हाल,
यूकेलिप्टिस तेल लें, सूंघें डाल रुमाल.

अजवाइन को पीसिये गाढ़ा लेप लगाय,
चर्म रोग सब दूर हो, तन कंचन बन जाय.

अजवाइन को पीस लें, नीबू संग मिलाय,
फोड़ा-फुंसी दूर हों, सभी बला टल जाय.

अजवाइन-गुड़ खाइए, तभी बने कुछ काम,
पित्त रोग में लाभ हो, पायेंगे आराम.

ठण्ड लगे जब आपको, सर्दी से बेहाल,
नीबू मधु के साथ में, अदरक पियें उबाल.

अदरक का रस लीजिए मधु लेवें समभाग,
नियमित सेवन जब करें, सर्दी जाए भाग.

रोटी मक्के की भली, खा लें यदि भरपूर,
बेहतर लीवर आपका, टी.बी भी हो दूर.

गाजर रस संग आँवला, बीस औ चालिस ग्राम,
रक्तचाप हिरदय सही, पायें सब आराम.

शहद आंवला जूस हो, मिश्री सब दस ग्राम,
बीस ग्राम घी साथ में, यौवन स्थिर काम.

चिंतित होता क्यों भला, देख बुढ़ापा रोय,
चौलाई पालक भली, यौवन स्थिर होय.

लाल टमाटर लीजिए, खीरा सहित सनेह,
जूस करेला साथ हो, दूर रहे मधुमेह.

प्रातः संध्या पीजिए, खाली पेट सनेह,
जामुन-गुठली पीसिये, नहीं रहे मधुमेह.

सात पत्र लें नीम के, खाली पेट चबाय,
दूर करें मधुमेह को, सब कुछ मन को भाय.

सात फूल प्रतिदिन लीजिए सुन्दर सदाबहार,
दूर करें मधुमेह को, जीवन में हो प्यार.

तुलसीदल दस लीजिए, उठकर प्रातःकाल,
सेहत सुधरे आपकी, तन-मन मालामाल.

थोड़ा सा गुड़ लीजिए, दूर रहें सब रोग,
अधिक कभी मत खाइए, चाहे मोहनभोग.

अजवाइन और हींग लें, लहसुन तेल पकाय,
मालिश जोड़ों की करें, दर्द दूर हो जाय.

ऐलोवेरा-आँवला, करे खून में वृद्धि,
उदर व्याधियाँ दूर हों,जीवन में हो सिद्धि.

दस्त अगर आने लगें, चिंतित दीखे माथ,
दालचीनि का पाउडर, लें पानी के साथ.

मुँह में बदबू हो अगर, दालचीनि मुख डाल,
बने सुगन्धित मुख, महक, दूर होय तत्काल.

कंचन काया को कभी, पित्त अगर दे कष्ट,
घृतकुमारि संग आँवला, करें उसे भी नष्ट.

बीस मिली रस आँवला, पांच ग्राम मधु संग,
सुबह शाम में चाटिये, बढ़े ज्योति सब दंग.

बीस मिली रस आँवला, हल्दी हो एक ग्राम,
सर्दी कफ तकलीफ में, फ़ौरन हो आराम.

नींबू, बेसन, जल, शहद, मिश्रित लेप लगाय,
चेहरा सुन्दर तब बने, बेहतर यही उपाय.

मधु का सेवन जो करे, सुख पावेगा सोय,
कंठ सुरीला साथ में, वाणी मधुरिम होय.

पीता थोड़ी छाछ जो, भोजन करके रोज,
नहीं जरूरत वैद्य की, चेहरे पर हो ओज.

ठण्ड अगर लग जाय जो नहीं बने कुछ काम,
नियमित पी लें गुनगुना, पानी दे आराम.

कफ से पीड़ित हो अगर, खाँसी बहुत सताय,
अजवाइन की भाप लें, कफ तब बाहर आय.

अजवाइन लें छाछ संग, मात्रा पाँच गिराम,
कीट पेट के नष्ट हों, जल्दी हो आराम.

छाछ हींग सेंधा नमक, दूर करे सब रोग,
जीरा उसमें डालकर, पियें सदा यह भोग.

पद्मा मिश्रा
जमशेदपुर, झारखंड

विज्ञान दोहे : विज्ञान और जीवन

जल थल नभ में है जिसे, विशिष्ट अभिनव ज्ञान,
सकल विश्व का सारथी, चमत्कार विज्ञान.

जल जीवन है जगत का, श्वास श्वास में प्राण,
जल विहीन धरती नहीं, दूषित हुआ जहान.

हरी भरी धरती सजे, वृक्षों की हो छांव,
सागर नदिया मेघ सब, पोषित करें जहान.

अश्रु नयन रो रो धरा, चाहे सुत से त्राण,
जल-थल सब दूषित हुआ, मांगे वसुधा प्राण.

दूषित है पर्यावरण, मेघ प्रलय के छाए,
वृक्ष श्रृंखला सूखती, खुद अपने ही साए.

सुन्दर जीवन विधि दिया, क्यूँ है हाहाकार?
सजा दो फिर हरीतिमा, धरती करे पुकार.

हम दुनिया में कम नहीं, हौसलों की उड़ान,
छू लिया मंगल को भी, परिक्रमा चंद्रयान.

सपने सब साकार हों, दम है अपनी रीत,
ध्रुव सच कोई भ्रम नहीं, धरा गगन तक जीत.

हरीतिमा को निगल गई, यह विकास की धार,
सूनी आंखें देखती, अपलक सृष्टि निहार.

डॉ. शुभा द्विवेदी
एसोसिएट प्रोफेसर, जैवप्रौद्योगिकी विभाग
आई.आई.एम.टी. विश्वविद्यालय, मेरठ

जीवन चक्र मूल्यांकन

जीवन चक्र मूल्यांकन
ऐसा कौन सा माध्यम
जो कर सके एक धीर गंभीर विश्लेषण प्रकृति का
प्रकृति, जिसका मूल है नव-सर्जना
"क्षिति जल पावक गगन समीर"
पंच महाभूतों से आवृत प्रकृति
समय काल से परे भी और बंधी भी
सामग्रियों का प्रसंस्करण
कच्चे पदार्थ निष्कर्षण से उत्पादों का निर्माण
पर्यावरणीय प्रभावों का सटीक मूल्यांकन
कैसे संभव हो
जब प्रकृति की सबसे सुन्दर सर्जना
मनुष्य ही दोषी हो दोहन के लिए
सिर्फ स्वयं के लोभ के लिए ही
प्रकृति का अंधाधुंध हरण
क्या समुद्र का गर्जन सुनाई नहीं पड़ता
क्या वृक्षों का क्रंदन सुनाई नहीं पड़ता
या घनघोर मेघ गर्जन सुनाई नहीं पड़ता
प्रश्न अनुत्तरित हैं कौन सुने यहाँ
कैसे हो जीवन पारिस्थितिकी का मूल्यांकन
भीषण ताप को सहती हुई आज की सभ्यता
कोई है जो ले आये फिर शीतलता
पूछ रही है प्रकृति, देख रही है धरा
कोई है जो कर पायेगा संवाद फिर से
कोई होगा जो जान पायेगा
क्या छिपा है प्रकृति के गर्भ में
कौन होगा जो कर पायेगा उल्लासित पुनः
करना होगा स्वयं का मूल्यांकन
या करना होगा मूल्यांकन कण-कण का
सोचो हो रहा है क्षरण क्षण-क्षण जिसका
कैसे होगा स्पंदित जीवन फिर से
उत्तर हो यदि किसी के पास
तो आ जाना इसी नीले अनंत आकाश के नीचे
इन्तजार है संरक्षण का
इंतज़ार है अनादि काल से अन्नंत तक का.

सुभाष चंद्र लखेड़ा
सिद्धार्थ कुंज, सेक्टर-7, द्वारका, दिल्ली

विज्ञानकु

1. एनरिको फर्मी

श्रेष्ठ न कभी
अज्ञानता ज्ञान से
जान लें सभी.

विश्व में सभी
ज्ञान की बढ़ोतरी
रोकें न कभी.

कल्पना ध्वस्त
करे यदि प्रयोग
हो नई खोज.

आंकें न कम
पूर्व सुनी बातें भी
देती आनंद.

करें मनन
एनरिको फर्मी के
ये हैं कथन.

2. मैक्स प्लांक

करते हम
प्रकृति से सवाल
प्रयोगों द्वारा.

उत्तर देती
आँकड़ों के रूप में
प्रकृति हमें.

आपको ज्ञान
प्रयोगों से मिलेगा
कहे विज्ञान.

इंसान खुद
रहस्य एक ऐसा
दूजा न वैसा.

नहीं आसान
इंसान का विज्ञान
है मुझे भान.

3. सर न्यूटन

कला में नहीं,
त्रुटियां टटोलिए
कलाकार में.

सुदूर दिखा
ऊँचे थे सब कंधे
जहां मैं चढ़ा.

चतुर वह
बिना शत्रु बनाए
जो हाँ करा दे.

सच मिलेगा
जटिलता में नहीं
सरलता में.

करें मंथन
बता गए न्यूटन
ये सब हमें.

4. अल्बर्ट आइंस्टाइन

करेंगे कुछ
गलती होगी तभी
अन्यथा नहीं.

याद रखना
चुनौतियों के बीच
मौका खोजना.

बता गए वे
मूर्खता व ब्रह्मांड
दोनों अनंत.

जिज्ञासा रहे
सवाल लगातार
करते रहें.

नाम उनका
जिनके ये कथन
आइंस्टाइन.

राजस्थान के मूर्तिकार श्री त्रिलोक चन्द माण्डण ने श्री सुभाष चंद्र लखेड़ा के तीन प्रारंभिक विज्ञानकु काष्ठ में गढ़े.

विज्ञान समाचार

'मंगल ग्रह पर भूकंप' अध्ययन

नासा के अंतरिक्ष यान इनसाइट ने 'मंगल ग्रह पर भूकंप' को रिकॉर्ड किया है, जबकि यह खुद नष्ट होने की राह पर है. इनसाइट लैंडर ने मंगल ग्रह पर अब तक के सबसे बड़े उल्कापिंडों के गिरने की रिपोर्ट दी है. और वैज्ञानिक इसे एक शानदार विदाई देने की कामना करते हैं.
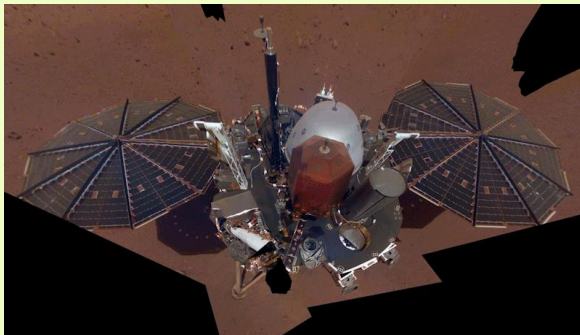
नासा का इनसाइट अंतरिक्ष यान, 2018 में मंगल ग्रह पर छूने के तुरंत बाद
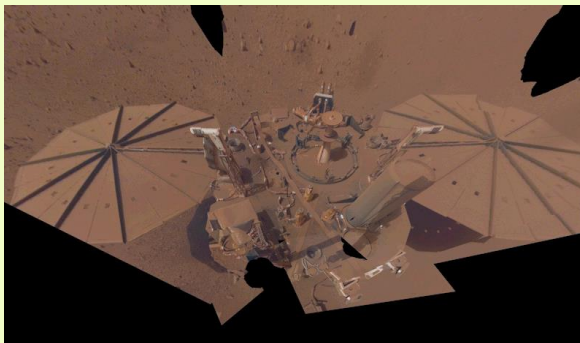
इनसाइट की सबसे हालिया सेल्फी जिसमें, यह एक तूफान से धूल में लिपटा दिख रहा है

मंगल ग्रह पर भूकंप का अध्ययन करने वाला पहला और एकमात्र अंतरिक्ष यान नष्ट होने वाला है. हाल ही में मंगल ग्रह पर एक तूफान ने नासा के इनसाइट लैंडर के सौर पैनलों को धूल से ढक दिया, जिसने इसकी बैटरी को चार्ज करने के लिए आवश्यक सूर्य प्रकाश अवरुद्ध कर दिया. मिशन नियंत्रक अब ऊर्जा संरक्षण के लिए इसके सीस्मोमीटर को रुक-रुक कर चला रहे हैं. कुछ हफ्तों में, अंतरिक्ष यान शायद पृथ्वी से संकेतों का जवाब देना बंद कर देगा और गुमनामी में चला जाएगा.

लेकिन इनसाइट बिना कुछ धमाल मचाये समाप्त नहीं हो रहा है. 27 अक्टूबर को वैज्ञानिकों ने बताया कि पिछले साल, मिशन ने मंगल ग्रह पर देखे गए अब तक के सबसे बड़े दो उल्कापिंडों द्वारा बनाई गई भूकंपीय तरंगों का पता लगाया. दोनों उल्कापिंडों ने एक छोटे परमाणु बम की ऊर्जा से ग्रह पर प्रहार किया. इनसाइट के माध्यम से मंगल ग्रह पर बड़े पैमाने पर भूकंप का पता लगाकर, वैज्ञानिक हजारों किलोमीटर दूर से लाल ग्रह की सतह के गुणों का अध्ययन करने में सक्षम रहे, और एक रहस्य को सुलझा रहे थे कि क्या अंतरिक्ष यान भूगर्भीय रूप से असामान्य स्थान पर बैठा है.

समृद्ध विरासत

इनसाइट की खोज की निष्कर्ष समृद्ध विरासत है. नवंबर 2018 में मंगल पर पहुंचने के बाद से, इसने 1,300 से अधिक 'मंगल-भूकंप' के बारे में जानकारी एकत्र की है. इसने शोधकर्ताओं को अन्य बातों के अलावा, मंगल के अन्तर्भाग के लंबे समय से वांछित आकार और इसकी पपड़ी की मोटाई की गणना करने में सहायता की है. अभी पिछले महीने, शोधकर्ताओं ने पांच 'मंगल-भूकंप' के डेटा का उपयोग यह निर्धारित करने के लिए किया कि मंगल का मेंटल पृथ्वी की तुलना में लोहे से अधिक समृद्ध है. मंगल की आंतरिक परतों की यह सारी जानकारी वैज्ञानिकों को यह समझने में मदद करेगी कि अरबों वर्षों में ग्रह कैसे बना और विकसित हुआ.
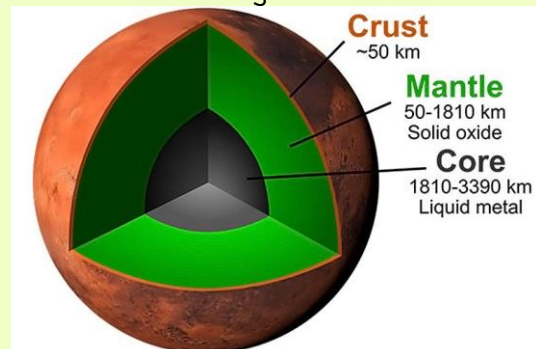
"मिशन से पहले, मैंने हमेशा ग्रहों के आंतरिक भाग के कटे हुए कार्टून दिखाए", कैलिफोर्निया के पासाडेना में जेट प्रोपल्शन लेबोरेटरी (JPL) में इनसाइट के प्रोजेक्ट साइंटिस्ट मार्क पैनिंग कहते हैं, "मंगल अब कार्टून, प्रश्न चिह्नों और अस्पष्ट सीमाओं से आंतरिक भाग की वास्तविक तस्वीर की ओर बढ़ गया है. हमने यही वादा किया था और हमने इसे पूरा किया."

भूकंपीय खुलासे

यह हमेशा स्पष्ट नहीं था कि वैज्ञानिक सफल होंगे. 2012 में, नासा ने 994 मिलियन अमेरिकी डॉलर का इनसाइट बनाने और लॉन्च करने का फैसला किया, जो एक विवादास्पद विकल्प था, क्योंकि एजेंसी के पास पहले से ही कई अन्य मंगल मिशन थे. फिर, इसके सुपर-सेंसिटिव सीस्मोमीटर के निर्माण में समस्याओं ने लॉन्च में दो साल की देरी को मजबूर किया. एक बार जब इनसाइट अंत में मंगल पर पहुंच गया, तो एक जर्मन-निर्मित उपकरण जिसका नाम मोल था, जो मिट्टी में गर्मी के प्रवाह को मापने के लिए था, विफल हो गया, क्योंकि वह मंगल की जमीन के अंदर खुद को स्थापित नहीं कर सका. मिशन ने लैंडिंग के पांच महीने बाद तक अपने पहले भूकंप का भी पता नहीं लगाया था, और जब आखिरकार ऐसा हुआ, तो शोधकर्ताओं ने यह समझने के लिए संघर्ष किया कि वे क्या देख रहे थे.
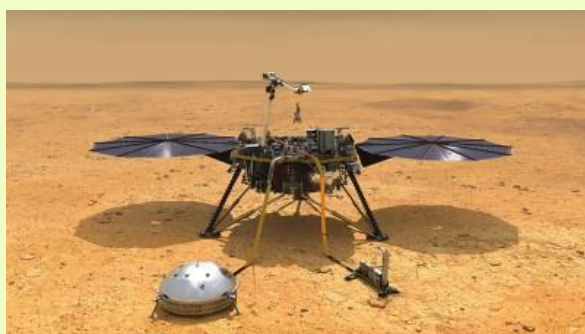
आश्चर्य! मंगल ग्रह के अंदर पहली बार झांकने से केक जैसी परतों के साथ क्रस्ट का पता चलता है

"शुरुआत में, हमें वास्तव में यकीन नहीं था कि हम डेटा से कितना कुछ प्राप्त कर सकते हैं", जर्मनी में कोलोन विश्वविद्यालय के एक ग्रह-वैज्ञानिक ब्रिगिट नैपमेयर-एर्ड्रन कहते हैं. लेकिन अपने दूसरे मंगल वर्ष के दौरान इनसाइट का प्रयोजन सफल रहा. एलीसियम प्लैनिटिया के नाम से जाने जाने वाले क्षेत्र में जो मंगल ग्रह की भूमध्य रेखा के पास बैठता है, अंतरिक्ष यान यह पता लगाता है कि कई भूकंप भूगर्भीय रूप से सक्रिय क्षेत्र से आते हैं, जिसे सेर्बेरस फॉसे (Cerberus Fossae) के नाम से जाना जाता है, जो लगभग 1,500 किलोमीटर दूर है, जहां मैग्मा के भूमिगत इंजेक्शन से झटके लगते हैं. अगस्त और सितंबर 2021 में, अंतरिक्ष यान ने पहली बार ग्रह के दूसरी तरफ भूकंप का पता लगाया.

और इस साल 4 मई को, इनसाइट ने 4.7 तीव्रता के भूकंप का पता लगाया - अब तक का सबसे बड़ा (इनसाइट द्वारा पता लगाये गये अधिकांश भूकंप 2-3 की सीमा में हैं). पृथ्वी पर, इस तरह के भूकंप को मनुष्यों द्वारा महसूस किया जा सकता है यदि वे उत्कैंद्र (Epicentre) के पास होते हैं.

"यह मंगल ग्रह द्वारा दिया गया एक सुंदर उपहार है", पेरिस इंस्टीट्यूट ऑफ अर्थ फिजिक्स के भूभौतिकीविद फिलिप लोगनने कहते हैं, जो सीस्मोमीटर टीम का नेतृत्व कर रहे हैं.

शोधकर्ताओं ने अभी तक प्रकाशित नहीं किया है कि उन्होंने 'बड़े भूकंप' से क्या सीखा है. लेकिन यह इतना बड़ा था कि इसने मंगल ग्रह की पपड़ी की सतह परतों के माध्यम से भूकंपीय ऊर्जा भेजी, जो कि सतह की लहर के रूप में जानी जाती है - जो अन्य प्रकार की भूकंपीय तरंगों की तुलना में किसी ग्रह के आंतरिक भाग के बारे में अधिक जानकारी दे सकती है. जेपीएल के भूभौतिकीविद् और इनसाइट के प्रमुख अन्वेषक ब्रूस बैनर्ड कहते हैं, "... यह वास्तव में पूरे स्पेक्ट्रम में उथले क्रस्ट से लेकर सबसे गहरे मेंटल और कोर तक की जानकारी दे रहा है."

गहरा प्रभाव

इस बीच, वैज्ञानिकों ने पिछले साल 18 सितंबर और 24 दिसंबर को दो रिकॉर्ड-सेटिंग उल्कापिंड प्रभावों के दौरान उत्पन्न सतह तरंगों का विश्लेषण किया है. इनसाइट ने उन्हें हजारों किलोमीटर दूर से प्राप्त किया.

वे इनसाइट के उत्तर में मंगल क्रस्ट से टकरा कर फट गए, जो एक प्रमुख भूवैज्ञानिक सीमा के पास

बैठता है, जहां भूभाग चिकना है और भारी गड्ढों वाले दक्षिणी हाइलैंड्स की तुलना में ऊंचाई में कम है. जिस तरह से सतह की लहरें क्रस्ट के माध्यम से उत्तर की ओर जाती हैं, उससे पता चलता है कि यह इनसाइट के नीचे की पपड़ी की तुलना में सघन है, जहां चट्टानें विशेष रूप से छिद्रपूर्ण (Porous) हैं.
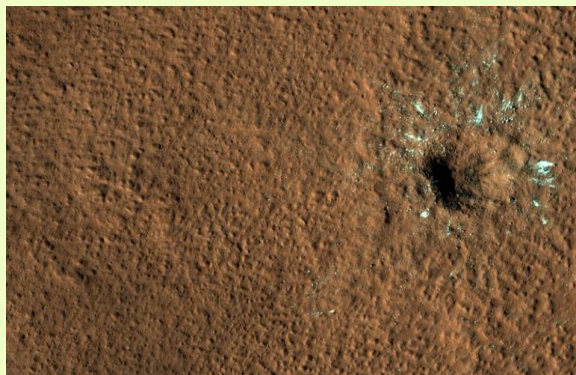
मंगल टोही ऑर्बिटर ने 24 दिसंबर 2021 को एक उल्कापिंड से लाल ग्रह से टकराने के कारण बने गड्ढे की इस छवि को कैप्चर किया. यह 130 मीटर से अधिक चौड़ा है

नासा के मार्स रिकोनिसेंस ऑर्बिटर (एमआरओ) की बदौलत इनसाइट यह बताने में सक्षम था कि भूकंप की उत्पत्ति कहां से हुई. वैज्ञानिक जो ऑर्बिटर से प्राप्त छवियों के माध्यम से देख रहे थे, प्रत्येक प्रभाव द्वारा छोड़ी गई सतह पर क्रेटर देखे गए, और उन तिथियों को इंगित करने में सक्षम थे जिस दिन वे बने थे. दोनों क्रेटर 130 मीटर से अधिक चौड़े हैं, जिससे वे एमआरओ द्वारा 16 वर्षों में देखे गए सबसे बड़े नये क्रेटर बन गए हैं जो ग्रह का अध्ययन कर रहा है. कैलिफ़ोर्निया के सैन डिएगो में मालिन स्पेस साइंस सिस्टम्स में एमआरओ के लिए कक्षीय-विज्ञान संचालन नेतृत्व, लिलिया पोसीओलोवा कहती हैं, "यह प्रभाव के इस आकार का एक बहुत ही अनूठा डेटा सेट है." जब पहली छवियां आईं, तो वह कहती हैं, "ऐसा कुछ भी नहीं था जैसा हमने पहले कभी नहीं देखा था, और हमने लगभग डबल-टेक किया था".

अलविदा कहा

सिर्फ इसलिए कि इनसाइट लगभग समाप्त हो गया है, इसका मतलब यह नहीं है कि खोज बंद हो जाएगी. ज्यूरिख में स्विस फेडरल इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी पर आधारित एक 'मंगल-भूकंप सर्विस' मिशन के डेटा को संग्रहित कर रही है. शोधकर्ता शायद उस जानकारी का उपयोग आने वाले वर्षों में नये निष्कर्ष निकालने के लिए करेंगे, क्योंकि उनके पास चंद्रमा पर भूकंप के दौरान एकत्र किए गए दशकों पुराने अपोलो डेटा हैं. "मुझे पूरा यकीन है कि हम मंगल ग्रह के साथ भी ऐसा ही करने जा रहे हैं", ब्रिटेन के ब्रिस्टल विश्वविद्यालय में एक भूकंप-विज्ञानी अन्ना होर्लेस्टन कहती हैं.

इनसाइट डेटा के पुनर्मूल्यांकन से शोधकर्ता पहले ही लाभान्वित हो चुके हैं. प्रारंभ में, वे केवल भूकंप के परिमाण को निर्धारित कर सकते थे, लेकिन आमतौर पर उसका स्थान नहीं. ETH, ज्यूरिख के एक भूभौतिकीविद गेराल्डिन ज़ेनहौसर्न के नेतृत्व में वैज्ञानिकों ने यह पता लगाया कि भूकंप से भूकंपीय तरंगों की ध्रुवीयता का उपयोग कैसे किया जाए ताकि भूकंप के स्थान का आकलन किया जा सके. अलग से, मशीन लर्निंग जैसी नई तकनीकें पहले से ही इनसाइट के डेटा में अतिरिक्त मंगल-भूकंप का पता लगाना शुरू कर रही हैं.

इनसाइट के नष्ट होने के बाद, मंगल कुछ समय के लिए बिना सिस्मोमीटर के रहेगा. यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी की एक योजना ExoMars लैंडर के लिए बनाई गई थी, लेकिन उस मिशन में रूस के साथ सहयोग शामिल था, और रूस यूक्रेन आक्रमण के मद्देनजर इसे रोक दिया गया है.

एक छोटा सा सौभाग्य हो सकता है कि एक अन्यत्र धूल इनसाइट के सौर पैनलों को कवर करने वाली धूल को उड़ा सकता है और मिशन के जीवन को बढ़ा सकती है. लेकिन शोधकर्ता इसे अलविदा कहने की तैयारी कर रहे हैं.

'मंगल भूकंप' से छिपे हुए भूविज्ञान का पता चलता है

चीन का अंतरिक्ष स्टेशन- तिआनगोंग

चीन का अंतरिक्ष स्टेशन लगभग पूरा हो चुका है - वैज्ञानिक इसका इस्तेमाल कैसे करेंगे? तिआनगोंग एक दशक में 1,000 से अधिक प्रयोगों की मेजबानी करेगा, जिसमें अंतर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन से प्राप्त परिणामों को पुन: प्राप्त करने का प्रयास भी शामिल है.

तिआनगोंग पर तीन व्यक्तियों का एक दल रहता है

चीन का स्पेस स्टेशन तिआनगोंग लगभग पूरा हो चुका है. तीसरे और अंतिम मॉड्यूल "मेंगटियन" (Mengtian) को 31 अक्टूबर को सफलतापूर्वक लॉन्च किया गया. स्टेशन पर, कम से कम 10 वर्षों के अपने जीवनकाल में, 1,000 से अधिक वैज्ञानिक प्रयोग करने की उम्मीद है. इनमें जीवित ऊतकों पर माइक्रो-ग्रैविटी के प्रभावों और आग के व्यवहार का अध्ययन शामिल है.

ऑस्ट्रेलिया के गोल्ड कोस्ट में ग्रिफ़िथ विश्वविद्यालय में अंतरिक्ष तकनीक विकसित करने वाले पाउलो डी सूज़ा कहते हैं, अंतरिक्ष स्टेशन का निर्माण एक बड़ी उपलब्धि है. अंतरिक्ष स्टेशन ने चीनी शोधकर्ताओं के लिए एक नये वैज्ञानिक खेल का मैदान खोल दिया है.

कैनबरा में ऑस्ट्रेलियन नेशनल यूनिवर्सिटी के एक खगोल भौतिकीविद ब्रैड टकर कहते हैं, अन्य देशों के शोधकर्ताओं की भी इस परिक्रमा कर रही प्रयोगशाला तक पहुंच होगी. चीन ने संयुक्त राष्ट्र के साथ एक सहयोगी परियोजना के माध्यम से उड़ान भरने के लिए नौ अंतरराष्ट्रीय प्रयोगों का चयन किया है, जिसे जापान, रूस, भारत और मैक्सिको के शोधकर्ताओं द्वारा विकसित किया गया है.
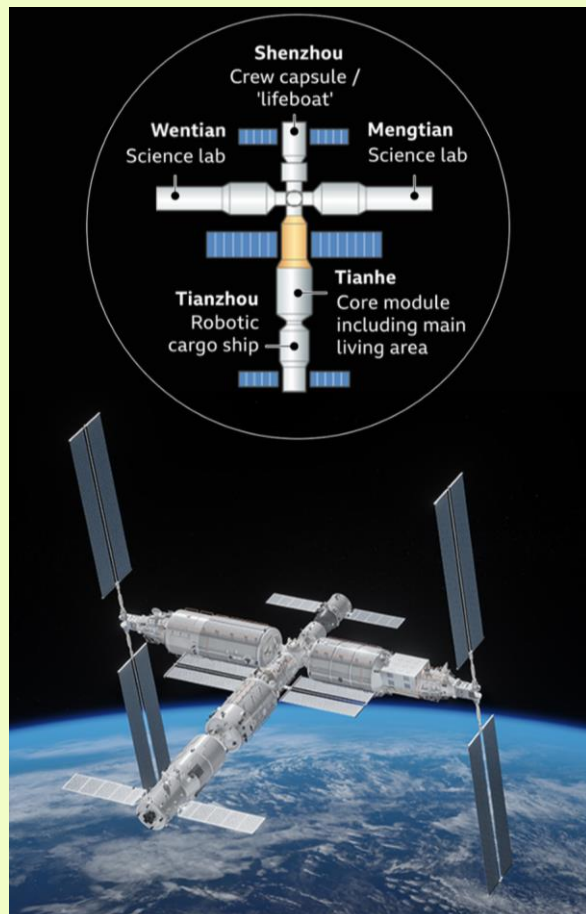
चीन का अंतरिक्ष स्टेशन - तिआनगोंग

मिनी-प्रयोगशालाएं

अंतिम मॉड्यूल, मेंगटियन, वैज्ञानिक प्रयोगों की मेजबानी के लिए डिज़ाइन किए गए दो में से एक है - दूसरा, वेंटियन, जुलाई में लॉन्च किया गया था. साथ में, मेंगटियन और वेंटियन कोर मॉड्यूल, तियानहे के साथ डॉकिंग करके अंतरिक्ष स्टेशन के हथियार बनाएंगे. यह अप्रैल 2021 से पृथ्वी की परिक्रमा कर रहा है. मेंगटियन मॉड्यूल स्टेशन पर समरूपता बहाल करने के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह वर्तमान में "एकतरफा उड़ान भर रहा था, जिसे उन्मुख रखने के लिए बहुत अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है", कैम्ब्रिज, मैसाचुसेट्स में हार्वर्ड-स्मिथसोनियन सेंटर फॉर एस्ट्रोफिजिक्स के एक खगोलशास्त्री जोनाथन मैकडॉवेल कहते हैं.

कई कार्गो मिशन और अंतरिक्ष यात्री इसका दौरा कर चुके हैं, और एक तीन-व्यक्ति दल अब वहां रहता है.

बोर्ड पर 20 से अधिक मिनी-प्रयोगशालाएं हैं, जो सेंट्रीफ्यूज से सुसज्जित हैं, ठंडे कक्ष -80 डिग्री सेल्सियस तक के तापमान तक पहुंचते हैं, एक उच्च तापमान वाली भट्टी, कई लेजर और एक ऑप्टिकल परमाणु घड़ी. इनका उपयोग अंतर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन (आईएसएस) पर किए गए प्रयोगों के समान करने के लिए किया जाएगा, जिसमें यह जांच शामिल है कि पृथ्वी की निचली कक्षा में लंबे समय तक रहने वाले अंतरिक्ष यात्रियों के स्वास्थ्य को कैसे प्रभावित करता है, विभिन्न पदार्थों पर आग को कैसे रोका जाए, और गैसों का क्वांटम गुण. स्टेशन के बाहर स्थित तीन सुविधाएं पौधों और सूक्ष्मजीवों पर ब्रह्मांडीय विकिरण के प्रभावों का अध्ययन करने में मदद करेंगी. चीन आईएसएस में भागीदार नहीं है और उसके अंतरिक्ष यात्री उस स्टेशन तक नहीं पहुंच पाए हैं. अमेरिकी नियम आईएसएस में भाग लेने वाली एजेंसी नासा को चीन के साथ द्विपक्षीय साझेदारी में शामिल होने से रोकते हैं.

एक नई अंतरिक्ष प्रयोगशाला का मतलब है कि शोधकर्ता आईएसएस पर किए गए प्रयोगों को दोहरा सकते हैं ताकि परीक्षण किया जा सके कि परिणाम पुनः उत्पन्न किए जा सकते हैं, डीसूज़ा कहते हैं, वो उम्मीद करते हैं कि निष्कर्ष सार्वजनिक किए जाएंगे.

प्रचुर मात्रा में प्रयोग

प्रौद्योगिकी के एक निदेशक झांग वेई कहते हैं, 25 से अधिक शोध परियोजनाएं पहले से ही चल रही हैं, जिनमें पौधों की कोशिकाओं, हड्डी और मांसपेशियों के साथ-साथ पिघले हुए पदार्थों पर प्रोटीन-क्रिस्टलीकरण प्रयोगों के साथ माइक्रो-ग्रैविटी के प्रभावों का अध्ययन करना शामिल है. बीजिंग में अंतरिक्ष उपयोग के लिए इंजीनियरिंग केंद्र, चीनी विज्ञान अकादमी, चीनी राज्य समाचार मीडिया ने यह भी बताया कि चालक दल ने अल्फाल्फा, जई और कवक के बीज सहित कुछ 12,000 बीजों को अंतरिक्ष स्टेशन पर ले जाया गया है, उन्हें छह महीने के लिए ब्रह्मांडीय विकिरण और माइक्रो-ग्रैविटी के लिए उजागर किया, और उन्हें पृथ्वी पर रोपित करने के लिए अप्रैल में वापस ले आये. चाइनीज एकेडमी ऑफ साइंसेज के शोधकर्ताओं ने यह भी बताया है कि जुलाई के अंत में वेंटियन में उगाए गए थेल क्रेस और चावल के पौधे अंकुरित होने लगे हैं.

अंतरर्राष्ट्रीय स्पेस स्टेशन से कुछ चित्र

सन्दर्भ: नासा से साभार
https://doi.org/10.1038/d41586-022-03462-5

प्रस्तुतिः डॉ. कुलवंत सिंह

इसरो का 36-उपग्रह प्रक्षेपण

इसरो ने जीएसएलवी एमके-III, 23 अक्टूबर 2022 को, 5,796 किलो वजन वाले 36 उपग्रहों को अंतरिक्ष में अपने सबसे भारी पेलोड के साथ स्थापित किया. इससे इसरो ने आगे मेगा मिशनों को शुरू करने में अंतरिक्ष एजेंसी की अपनी बढ़ती क्षमताओं को साबित किया, जो की भविष्य में एक गेम चेंजर के रूप में उभरेगा.

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) द्वारा उपयोग किए जाने वाले सबसे भारी रॉकेट जीएसएलवी एमके III (जियोसिंक्रोनस सैटेलाइट लॉन्च व्हीकल मार्क III) ने अपने सबसे भारी पेलोड को अंतरिक्ष में पहुंचाया. इसे अंतरिक्ष विभाग के तहत सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यम, न्यू स्पेस इंडिया लिमिटेड (NSIL) के वाणिज्यिक उपग्रह मिशन में इस रॉकेट को LVM3-M2 के नाम से भी जाना जाता है.

इससे पहले सन 2017 में अपनी पहली उड़ान के साथ भारत के संचार उपग्रहों और अन्य पेलोड को ले जाने के लिए जीएसएलवी एमके III का चार बार सफलतापूर्वक उपयोग किया गया था. इसरो के अध्यक्ष एस. सोमनाथ ने कहा, "LVM3 रॉकेट से भारत उपग्रहों के एक समूह को लॉन्च करने वाली कंपनियों की पूर्ति करके वैश्विक बाजार में खाली जगह को भर सकता है." 23 अक्टूबर का मिशन एनएसआईएल और यूके स्थित फर्म नेटवर्क एक्सेस एसोसिएट्स लिमिटेड (उर्फ वनवेब लिमिटेड) के बीच वाणिज्यिक व्यवस्था है, जिसके निवेशकों में भारती ग्लोबल शामिल है.

इसरो 2023 में 36 वनवेब उपग्रहों का एक और सेट लॉन्च करेगा. दोनों लॉन्च के लिए, वनवेब ने इसरो को 1,000 करोड़ रुपये से अधिक का भुगतान किया है. वनवेब का लक्ष्य दुनिया भर में उच्च गति, कम विलंबता से कनेक्टिविटी प्रदान करना है. 23 अक्टूबर को वनवेब का 14वां प्रक्षेपण था, जिसने 2023 में वैश्विक कवरेज को सक्रिय करने के लिए अपने नियोजित 648 उपग्रहों में से 462 को एक तारामंडल की तरह अंतरिक्ष में स्थापित किया है. प्रत्येक उपग्रह के सटीक इंजेक्शन की आवश्यकता अद्वितीय है. इसरो को सभी 36 उपग्रहों को 601 किलोमीटर की कक्षा में अलग अलग रखना सुनिश्चित करना था, पृथक्करण के साथ इस तरह से अनुक्रमित किया जाना था कि किसी भी पेलोड उपग्रह के बीच न्यूनतम 137 मीटर की दूरी, वनवेब की आवश्यकता अनुसार पूरी हो. ऑनबोर्ड थ्रस्टर्स का उपयोग करते हुए, क्रायो चरण को उन्मुख और पुनः उन्मुख करके यह उपलब्धि हासिल की गई थी.

इसरो को आगे मिलने वाले अनुबंध 2023 में एक और प्रक्षेपण पर निर्भर करेगा. इसरो बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए LVM3 रॉकेट के उत्पादन को बढ़ाने की योजना बना रहा है. "एक तारामंडल प्रकार के कई उपग्रहों को कक्षा में रखने के लिए वाणिज्यिक उपग्रह प्रक्षेपण वाहनों की कमी है." श्री सोमनाथ के अनुसार, रूसी रॉकेट अब विचार में नहीं हैं, जबकि "एरियनस्पेस" के "एरियन 6 रॉकेट" में देरी हुई है. चीनी रॉकेटों की व्यावसायिक क्षमता को पश्चिम स्वीकार नहीं करता है. इन सभी कारणों ने भारत के लिए अवसरों के द्वार खोल दिए हैं.

मिशन की सफलता से भारत के लिए वाणिज्यिक अंतरिक्ष क्षेत्र के एक बड़े हिस्से पर कब्जा करना संभव हो गया है, LVM3 की कल्पना मुख्य रूप से 4 टन तक वजन वाले भूस्थैतिक उपग्रहों को लॉन्च करने के लिए की गई थी. नवीनतम प्रक्षेपण के साथ, अंतरिक्ष यान 6 टन पेलोड को पृथ्वी की निचली कक्षा में लॉन्च करने में सक्षम है. हेवी-लिफ्ट रॉकेट की पृथ्वी की निचली कक्षा में 10 टन और भू-स्थानांतरण कक्षा में 4 टन की वहन क्षमता है. वनवेब के अध्यक्ष सुनील भारती मित्तल का कहना है कि उनकी कंपनी को आने वाले वर्षों में लगभग 12 से 16 लॉन्च की आवश्यकता हो सकती है और इसरो को और भी ऑर्डर मिलने की संभावना होगी.

LVM3-M2 लॉन्च वाहन वैश्विक वाणिज्यिक बाजार के लिए इसरो के रॉकेटों में से दूसरा है. पहला पोलर सैटेलाइट लॉन्च व्हीकल (PSLV) था. स्वदेशी तकनीक से निर्मित, इसके लगातार चार सफल मिशन हो चुके हैं, जिनमें चंद्रयान-2 भी शामिल है. इसे मानव अंतरिक्ष यान मिशन गगनयान के लिए मामूली बदलाव के साथ तैयार किया जा रहा है. लॉन्च व्हीकल सिस्टम को इसके हिस्से के रूप में कई महत्वपूर्ण परीक्षणों से गुजरना पड़ा है. यह अगले साल चंद्रयान-3 का प्रक्षेपण भी करेगा. सूर्य का अध्ययन करने वाले मिशन आदित्य एल-1 को भी 2023 में लॉन्च किया जाना है. इन सब से पहले नवंबर महीने में इसरो पीएसएलवी-54 को ओशनसैट-3, भूटानसैट और चार वाणिज्यिक उपग्रहों को लॉन्च करने के लिए अग्रसर है.

इंडियन स्पेस एसोसिएशन और अर्न्स्ट एंड यंग की एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत की अंतरिक्ष अर्थव्यवस्था को 2025 में लगभग 13 बिलियन डॉलर (1.07 लाख करोड़ रुपये) का राजस्व मिलने की उम्मीद है. उपग्रह सेवाओं का बाजार लगभग 5 बिलियन डॉलर तक बढ़ने का अनुमान है; और 2025 तक जमीनी सेवाओं को $4 बिलियन तक पहुंचाना. अगले तीन वर्षों में उपग्रह और प्रक्षेपण सेवाओं के लिए 13 प्रतिशत की चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर का अनुमान है. स्पष्ट रूप से भारत में वाणिज्यिक अंतरिक्ष सेवाएं एक बड़े बदलाव की ओर अग्रसर हैं.

ख़त्म होगा सिम और वाई-फाई

भारत में सरकार ख़ुद देने जा रही है सैटेलाइट इंटरनेट. जिसमें सिम लगाने की आवश्यकता नहीं है. भारत जल्द ही सैटेलाइट इंटरनेट सेवा की सुविधा शुरू करने जा रहा है. देश में उपग्रह संचार सेवा की तैयारी जोरों पर चल रही है और जल्द ही इसकी शुरुआत हो सकती है. दूरसंचार मंत्री अश्विनी वैष्णव ने बताया कि अगले सात से आठ महीनों में उपग्रह संचार सेवा की शुरुआत हो सकती है. इसका सबसे बड़ा फायदा यह होगा कि बड़े शहरों की तरह ही दूरदराज के छोटे गांवों में भी गुणवत्ता वाली डिजिटल सेवा पहुंचाई जा सकेगी.

सैटेलाइट इंटरनेट सेवा का एक फायदा यह होगा कि इंटरनेट के लिए सिर्फ दूरसंचार कंपनियों पर लोगों की निर्भरता खत्म होगी. उपग्रह के जरिये फोन पर सीधे इंटरनेट की सुविधा प्राप्त की जा सकेगी. इससे डिजिटल भारत के कार्यक्रम को सफल बनाने में भी काफी मदद मिलेगी. क्योंकि दूरसंचार कंपनियों की तरफ से मिलने वाली इंटरनेट सेवा में स्पीड से लेकर नेटवर्क ड्राप होने की कई प्रकार की दिक्कत रहती है. अब भी रक्षा और सीमावर्ती इलाके में उपग्रह संचार सेवा का इस्तेमाल हो रहा है.

एलॉन मस्क की कंपनी स्टार लिंक भी भारत में

उपग्रह संचार सेवा शुरू होने से कारोबार के भी बड़े अवसर खुलेंगे. ई एन्ड वाई (Ernst & Young) की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2025 तक भारत में उपग्रह संचार सेवा का कारोबार 13 अरब डालर तक होने का अनुमान है. तभी एलन मस्क की कंपनी स्टारलिंक ने भी उपग्रह संचार सेवा के लिए आवेदन किया है. मंत्रालय के मुताबिक, पांच टेलीकाम कंपनियों को दूरसंचार सेवाओं के लिए लाइसेंस दिया जा चुका है. स्टारलिंक मस्क द्वारा प्रवर्तित स्पेसएक्स की सब्सिडियरी है.

1.2 अरब मोबाइल फ़ोन पर मिलेगा इंटरनेट

इलेक्ट्रानिक्स और आइटी राज्यमंत्री राजीव चंद्रशेखर ने कहा है कि उपग्रह संचार सेवा से एक लाख करोड़ डालर की डिजिटल अर्थव्यवस्था के निर्माण में मदद मिलेगी. वर्ष 2025-26 तक 1.2 अरब भारतीय अपने हैंडसेट से सीधे तौर पर इंटरनेट से जुड़ सकेंगे. उन्होंने अपना अनुभव साझा करते हुए कहा कि नागालैंड के एक जिले में वहां के कलेक्टर के पास भी इंटरनेट की सुविधा नहीं है. उपग्रह संचार सेवा ऐसी जगहों के लिए वरदान साबित हो सकती है.

कहीं भी ले जा सकेंगे अपना वी-सैट (VSAT)

संचार मंत्रालय ने वीसैट (वेरी स्माल अपर्चर टर्मिनल) उपग्रह तकनीक के प्रसार के लिए भी कई बदलाव किए हैं. खदान से लेकर समुद्र, एटीएम, अस्पताल, बैंक जैसी कई जगहों पर वी-सैट उपग्रह तकनीक का इस्तेमाल किया जा रहा है. वी-सैट में एक गोलाकार एंटीना होता है तो डाटा को प्राप्त और ट्रांसमिट करने का काम करता है. सरकार के नए नियम के मुताबिक अब इस एंटीना को कहीं भी ले जाया जा सकता है. पहले इसके एक निर्धारित जगह पर ही रखना होता था. एंटीना के सर्टिफिकेशन की प्रक्रिया को भी सरल बना दिया गया है.

प्रस्तुति: नरेंद्र कुमार करनानी

विज्ञान पुस्तक समीक्षा
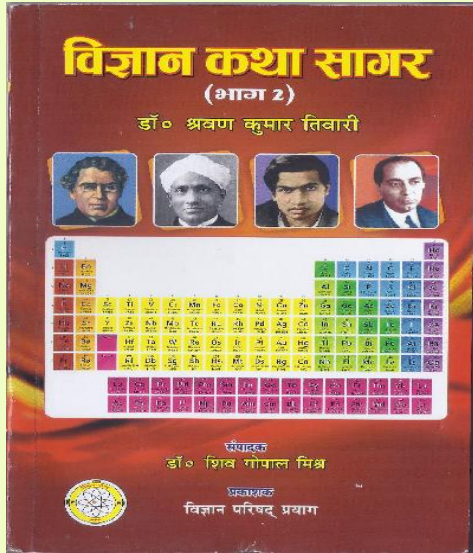
पुस्तक : विज्ञान कथा सागर
रचयिता : डॉ. श्रवण कुमार तिवारी
संपादक : डॉ. शिव गोपाल मिश्र
प्रकाशक : विज्ञान परिषद् प्रयाग, प्रयागराज–211002
संस्करण : प्रथम (2022)
मूल्य : 150 रुपये, पृष्ठ –112

भौतिक विज्ञान के विद्वान डॉ. श्रवण कुमार तिवारी की 28 कविताओं, एक परिशिष्ट और काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में विज्ञान परिषद् प्रयाग की शाखा के गठन संबंधी एक व्यावहारिक लेख से संघटित यह पुस्तक विज्ञान–लेखन की एक निधि जैसी है।

पुस्तक की भूमिका 'खंडित परमाणु' है जो इस शीर्षक के अनुरूप प्रारंभ में ही प्रत्येक कविता परमाणु के सामान्य गुण बताती है। चूँकि पुस्तक के नाम में 'कथा सागर' शब्द युग्म जुड़ा है अतः काव्य के सामान्य नियम का निर्वाह करते हुए कवि 'मंगलाचरण' देता है जिसमें कवि द्वारा संस्कृत भाषा में रचित पांच श्लोक हैं, प्रथम श्लोक की वैज्ञानिक दृष्टि देखें–

द्रव्यूर्जा–रूप–गुणः प्रभेदाः, अन्वेषिताय लोकहिताय येन।
आविष्कृता यन्त्र–उपस्कराश्च विज्ञानविद् ते अभिनन्दनीयाः।।

'जिन विज्ञानविदों ने द्रव्य और ऊर्जा के रूप एवं गुणों तथा प्रभेदों का लोकहित के लिए अन्वेषण किया है, तथा अनेक यंत्रों एवं उपकरणों का निर्माण किया है वे अभिनन्दनीय हैं।' यह कवि के 'भाषिक ज्ञान और कवित्व' की निपुणता और विविधता स्पष्ट करता है।

'विज्ञानं यज्ञं तनुते' इसमें दी गई पहली कविता है जो पुस्तक के 21 पृष्ठों में विस्तृत है। यद्यपि इसका शीर्षक संस्कृत में है किन्तु कविता हिन्दी भाषा में है। इसमें मानव के आदिम विकास से आरंभ करके लगभग 1940 ई. तक विस्तृत विज्ञान का संक्षिप्त इतिहास प्रस्तुत किया गया है। यह चौपाई, दोहा और कवित्त छंद में निबद्ध है। प्रयुक्त भाषा सरल, प्रवाहमय और विषयानुकूल है जिसके कारण वर्ण्यविषय स्पष्ट है। आरंभ की दो पंक्तियों में कवि अपना उद्देश्य स्पष्ट कहता है–

सुनहु कथा जिमि मनुज किय, भौतिक शक्ति स्ववस्य।
किमि जान्यौ विज्ञानविद्, बहुविध प्रकृति रहस्य।।

कविता के मध्य में न्यूटन के विषय में कवि कहता है–
पढ़ि लिखि न्यूटन भये सयाने। ख्यात भौतिकीविद् जग जाने।
एक बार निज उपवन गयऊ। फल टपकत लखि सोचत भयऊ।
नियम गुरुत्वाकर्षण हेरा। पुन व्यापक सिद्धान्त उकेरा।
......
गति के तीन नियम समुझावा। वेग त्वरण संवेग बतावा।
बल की दी निश्चित परिभाषा। कार्य ऊर्जा शक्ति प्रभासा।

और अंत में हाइड्रोजन की परमाणु संरचना भी देखें–
यदि न्यूट्रान एक तहं आवै। हाइड्रोजन 'ड्यूट्रान' कहावै।
दुइ न्यूट्रान केन्द्रगत होई। 'ट्रिटियम' नाम धरे बुध ओंहीं।

दोहा– हाइड्रोजन परमाणु में, बसत एक प्रोटान।
कक्षा में नर्तन करत, सदा एक इलेक्ट्रान।।

'परमाणुमाला' दूसरी लंबी कविता है। इसमें भी इन्हीं छन्दों का प्रयोग किया गया है। आधुनिक आवर्तसारिणी में तत्वों के निर्धारित क्रम में ही आरंभिक एक सौ ग्यारह तत्वों के परमाणु क्रमांक के साथ उनके प्रतीक और नाम इस कविता में वर्णित हैं। 45 दोहे और 94 चौपाई पंक्तियों में वर्णित यह 'परमाणुमाला' कहीं भी प्रवाह में टूटती नहीं लगती और न ही यह बोध होता है कि यह शुष्क आवर्तसारिणी है जिससे प्रायः लोग कतराते हैं। बच्चे और किशोर तो इन्हें सहजता से गाकर याद रख सकते हैं। कुछ पंक्तियाँ देखें–

Ca श्वेत कैल्सियम हेरा। जहँ बीस प्रोटान बसेरा।
Sc स्कैन्डियम इक्कइस। Ti टिटैनियम बाइस।
.....
Rn रेडान छियासी। Fr फ्रांसियम सत्तासी।
अट्ठासी Ra रेडियम। तत्व रेडियोधर्मी चमचम।

इसके बाद आगे छब्बीस कविताएँ लघु आकार की हैं। जिनमें, कुछ बाल–विज्ञान की कविताएँ हैं, जैसे–**आर्किमिडीज का सिद्धान्त, सूर्य केन्द्रित ग्रह निकाय, चांद पे खेलन जैहौं, चन्दामामा दूर के, कम सून! मानसून!, शरद ऋतु आ गई** आदि। आर्किमिडीज के सिद्धान्त से कुछ पंक्तियाँ –

ताल किनारे खेल रहे थे, चीजें जल में ठेल रहे थे।
कांच की गोली डूब गयी, क्यों डूबा नहीं कटोरा।।
.....
आर्किमिडीज ने पता लगाया, भरे हुए टब बीच समाया।
कुछ जल टब से बाहर आया, उसने निज को हल्का पाया।।
भार इसी विस्थापित द्रव का, उत्प्लावन कहलाता।
डूबे हुए ठोस का वह इतना ही भार घटाता।।

एक कविता कवि की स्थानीय बोलचाल की भोजपुरी भाषा में भी है– **'कौन ज्ञान–विज्ञान भौतिकी।'** बहुत सहज ढंग से इसका भी छंद बना है। एक अंश प्रस्तुत है–

विद्युत चुम्बकीय लहरन कै जब से पता लगाव भौतिकी।
तबै सूचना क्रांति आ गइल मोबाइल लटकाव भौतिकी।
गली–गली संगीत रेडियो, टी.वी.चित्र दिखाव भौतिकी।
कम्प्यूटर इण्टरनेट आइल द्रुत संदेश पाठाव भौतिकी।

सामान्य जीवन से भी जुड़ी तीन कविताएँ हैं और हिन्दी भाषा के प्रति कवि की संवेदना प्रदर्शित करती एक कविता है– **'हिन्दी दिवस मनाने वालो।'**

कवि को हिन्दी में लेखन के प्रति जहाँ से प्रेरणा मिली और जो उसे सदैव उद्दीप्त रखा उस संस्था **'विज्ञान परिषद् प्रयाग'** के प्रति भी वह एक कविता **'जयतु जय विज्ञान परिषद्'** के माध्यम से अपनी भावना समर्पित किया है। विवेचनाधीन पुस्तक के रचयिता की ही प्रेरणा से विज्ञान परिषद् प्रयाग की काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की शाखा का गठन हुआ था, इसका भी विवरण एक लघु संस्मरण के रूप में है। अंत में कवि अपने जीवन से जुड़े कुछ संस्मरणों को 'मेरी जीवन यात्रा के कुछ संस्मरण' के रूप में प्रस्तुत किया है।

सम्पूर्ण रूप से पुस्तक हिन्दी में विज्ञान लेखन की कविता विधा की एक अच्छी कृति है। यह विज्ञान संचार हेतु एक उत्कृष्ट साधन सिद्ध हो सकती है। बच्चों और किशोर वय के लोगों के लिये अति उपयोगी है। विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा कवि की यह रचना उसके इहलोक से अवसान के बाद प्रकाशित की गयी। इसके प्रकाशन के लिए परिषद् एवं परिषद् के प्रधानमंत्री डॉ. शिवगोपाल मिश्र को सादर नमन। आशा है पुस्तक का विज्ञान प्रसार के क्षेत्र में स्वागत होगा और वह सफल होगी।

डॉ. राजेंद्र प्रसाद मिश्र
सहायक सम्पादक, विज्ञान पत्रिका, विज्ञान परिषद प्रयाग
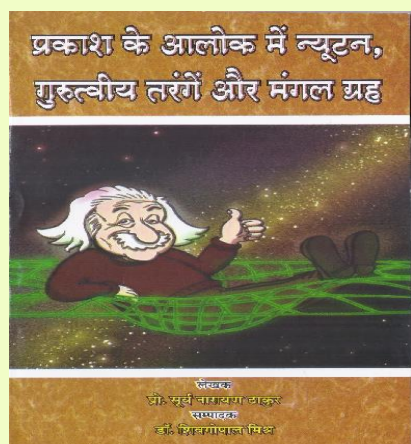
पुस्तक – **'प्रकाश के आलोक में न्यूटन, गुरुत्वीय तरंगें और मंगल ग्रह'**
लेखक – **प्रो. सूर्य नारायण ठाकुर**
सम्पादक – **डॉ. शिवगोपाल मिश्र**
प्रकाशक – **विज्ञान परिषद् प्रयाग, प्रयागराज–211002**
प्रकाशन – **2021 (प्रथम संस्करण)**
मूल्य – **200 रूपये, पृष्ठ–103**

आकार में लघु किंतु तथ्यात्मक वैज्ञानिक सूचनाओं के बड़े घनत्व वाली यह पुस्तक वास्तव में तीन बड़े विज्ञान–लेखों का समुच्चय है। पुस्तक के आरंभ में, तीनों लेखों से पहले, लेखक ने 'स्पेक्ट्रोस्कोपी के अद्‌भुत शिल्पी एवं विज्ञान के सुबोध लेखक डॉ. श्रवण कुमार तिवारी' शीर्षक से पुस्तक का समर्पण उस विशिष्ट हिन्दी–विज्ञानधर्मी के प्रति किया है जिसने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में 'विज्ञान परिषद् प्रयाग' की शाखा स्थापित की और भौतिकी की कई प्रसिद्ध पुस्तकों का अंग्रेजी से सरल हिन्दी में अनुवाद करने के अलावा 'लेजर की रचना एवं उपयोग' जैसे विषयों पर पुस्तकें लिखकर विश्वविद्यालय में हिन्दी भाषी क्षेत्र से पढ़ने वाले विद्यार्थियों के ज्ञानवर्द्धन में बहुत बड़ी भूमिका निभायी।

पुस्तक के 29 पृष्ठों में विस्तृत प्रथम निबंध **'जिज्ञासा और एकाग्रता के मूर्तरूप न्यूटन'** में न्यूटन के जीवन से जुड़ी आमजीवन की महत्वपूर्ण बातों के साथ–साथ उनकी वैज्ञानिक और गणितीय उपलब्धियों को सरल भाषा और रोचक शैली में प्रस्तुत किया गया है।

लेख के प्रारंभ में ही लेखक अपना मन्तव्य स्पष्ट रूप से कहता है–'हम न्यूटन के जीवन के एक ऐसे पक्ष का दिग्दर्शन कर रहे हैं जिसमें बचपन की कठिन परिस्थिति के प्रति असंतोष है, किशोरावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक जिज्ञासु जुनून है और समय समय पर देवदूत के रूप में आकर कुछ लोग जिज्ञासा के जुनून को सफलता के शीर्ष पर पहुँचाने में मददगार सिद्ध होते हैं।'

ऐकान्तिक स्वभाव, सहज जिज्ञासा और विशिष्ट एकाग्रता से सम्पन्न न्यूटन के जीवन से जुड़े लगभग सभी आयामों को स्पर्श करने वाले इस आलेख में उनकी अन्तर्मुखी बाल्यावस्था, स्कूली व छात्र जीवन, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी में प्रवेश आदि के विवरण के बाद समकालीन इंग्लैण्ड में बौद्धिक क्रांति तथा तत्कालीन अन्वेषणों से युवा न्यूटन पर पड़ने वाले प्रभाव को भी दर्शाया गया है।

गणित के क्षेत्र में द्विपद प्रमेय के प्रतिपादन के बाद सर्वकालिक महान उपलब्धि कैल्कुलस की स्थापना और उसका यांत्रिकी में उपयोग, स्पेक्ट्रम संबंधी अन्वेषण, परावर्तन का उपयोग करके बनाये गये टेलिस्कोप, गति के नियमों की स्थापना, गुरुत्वाकर्षण बल और व्युत्क्रम वर्ग के नियम की स्थापना, प्रिंसीपिया (Principia) तथा आप्टिक्स (Optiks) का लेखन आदि क्षेत्रों के विषय में संक्षिप्त किन्तु स्पष्ट जानकारी दी गई है। लेखक ने इन उपलब्धियों के साथ न्यूटन के मददगारों और उनके प्रतिद्वंदियों यथा– राबर्ट हुक, क्रिश्चियन हाइगेन और लेबनिज का समुचित जानकारियों और प्रतिस्पर्धा की विन्दुओं के साथ उल्लेख किया है।

लेखान्त में **'कीमियागीरी के प्रति न्यूटन की जिज्ञासा'** और **'न्यूटन का लंदन प्रवास'** पर चर्चा करते हुए इसका समापन किया गया है। समग्र रूप से यह लेख न्यूटन के विषय में जानकारियों का संक्षिप्त पुलिंदा है जो सहज, सरल, स्वाभाविक व रुचिकर भाषा व शैली में प्रस्तुत किया गया है जो इसको पठनीय बनाता है।

द्वितीय लेख **'गुरुत्वीय तरंगों की खोज एवं ब्रह्मांड की आवाज'** अपने शीर्षक की गुरुता के अनुरूप दीर्घाकार है जो 41 पृष्ठ का है। लेखक के अनुसार 'गुरुत्वीय तरंगों की उत्पत्ति की कहानी ब्रह्मांड में उपस्थित विभिन्न प्रकार के दृश्य एवं अदृश्य तारों से अभिन्न रूप से जुड़ी है।' 1915 में आइंसटीन की गुरुत्वीय तरंगों की परिकल्पना के उल्लेख के साथ गुरुत्वीय तरंगों के विषय में जानकारी की ऐतिहासिक यात्रा आरंभ की गयी है जिसमें 'तारों की विचित्र दुनिया' का परिचय देते हुए सूर्य और उसकी गतिविधियों के विषय में अभिज्ञता दी गयी है। फिर, श्वेत वामन (white dwarf), आकाशगंगा, दूधिया पथ (milky way), निहारिकाओं (Nebule), 'तारों की मृत्यु' के विषय में वार्ता करते हुए सुपरनोवा, न्यूट्रान तारा, श्याम विवर का उल्लेख है। लेख में आगे सुब्रह्मण्यम चन्द्रशेखर द्वारा इस क्षेत्र में स्थापित तथ्य पर वार्ता करते हुए उस सत्य पर एक वैज्ञानिक के विरोध का प्रभाव भी खेद के साथ दिया गया है– 'क्वांटम भौतिकी का उपयोग करते हुए चन्द्रशेखर ने यह निष्कर्ष निकाला कि गुरुत्वीय संकुचन के कारण सूर्य से डेढ़ गुना भार से कम भार वाले तारों का आकार इतना छोटा और गुरुत्वाकर्षण बल इतना अधिक होगा कि वे श्वेत वामन तारे बन जायेंगे।... खेद की बात है कि चन्द्रशेखर की यह महत्वपूर्ण व्याख्या चन्द्रशेखर सीमा (Chandra Shekhar Limit) एडिंगटन (ब्रिटिश खगोलविद्) के विरोध के कारण कई दशक तक खगोल वैज्ञानिकों द्वारा स्वीकार नहीं की गयी।' आगे यह विवरण आता है कि **–'न्यूट्रान तारे की खोज के बाद लोगों ने चन्द्रशेखर के सैद्धान्तिक अन्वेषण के महत्व को समझा और उन्हें 1983 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।'**

इस प्रकरण के बाद **'गुरुत्वाकर्षण क्या है'** पर विस्तृत रूप से अभिज्ञान देते हुए लेखक ने आइंसटीन द्वारा 1916 में सामान्य सापेक्षता के सिद्धान्त के आधार पर गुरुत्वीय बल की उत्पत्ति को ज्यामितीय रूप से प्रदर्शित करने की विधि को स्पष्ट करते हुए उनकी काल अंतराल चादर की विकृति (Distortion in space time fabric) के विषय में समझाया है। आगे 'श्याम विवर और गुरुत्वीय तरंगें' के विषय में अनेक श्वेत–श्याम चित्रों, आरेखों आदि के द्वारा स्पष्ट किया है। 'गुरुत्वीय तरंगों का मापन' के अन्तर्गत विस्तार देकर 'लेजर इंटरफेरोमीटर वेधशाला में ब्रह्मांड की आवाज' शीर्षक के जरिये पर्याप्त उदाहरणों, चित्रों और आरेखों की सहायता से अनेक तथ्यों का समावेश करते हुए विस्तार पूर्वक समझाया गया है। साथ ही सैद्धान्तिक रूप से अधिक कठिन **'युग्मक न्यूट्रान तारों के विलयन से उत्पन्न गुरुत्वीय एवं विद्युत चुंबकीय तरंगें'** समझाते हुए अति सघन चित्रों एवं सरल भाषा का सहारा लेकर प्रकरण को सुबोध बनाया है। लेख के अन्त में **'युग्मक ब्लैक होल एवं युग्मक न्यूट्रान तारों के विलयन से उभरते ज्ञान'** को बहुत ही सहज शब्दों में व्यक्त करने के साथ ही कुछ पठनीय साहित्यों का भी उल्लेख है।

पुस्तक का तीसरा लेख है **'मंगल ग्रह पर स्पेक्ट्रोस्कोपी की दिलचस्प कहानी'**। अन्य दोनों लेखों की तुलना में यह लेख छोटा है और 21 पृष्ठों में विस्तृत है किन्तु तमाम वैज्ञानिक ज्ञान के साथ रुचिकर और पठनीय है। लेख का आरंभ अमेरिका द्वारा 1966 में छोड़े गये मैरिनर 4 नामक अंतरिक्षयान और उससे प्राप्त जानकारियों के साथ शुरू होता है और खगोल शास्त्री टाइको ब्राहे का खगोलीय दूरियों का आकलन प्रस्तुत करते हुए आगे बढ़ता है जिसमें मंगल ग्रह के वायुमंडल संबंधी बातें भी दी गई हैं। **'मंगल ग्रह के वायुमंडल में स्थित प्राकृतिक लेजर'** की चर्चा करके **'अंतरिक्ष यान का मंगल ग्रह का पर्यवेक्षण'** और वाइकिंग लैंड द्वारा भेजी गयी सूचनाओं पर चर्चा करते हुए मंगलग्रह की विशेष जानकारी के लिए 1997 में प्रक्षेपित **मार्स फाइन्डर** और उससे मिली उपलब्धियों के बारे में **'मंगल की जमीन पर चलने वाले रोवर की तीन पीढ़ियाँ' सोजर्नर, स्पिरीट एवं अपार्चुनिटी** वर्णित हैं। इनमें अपार्चुनिटी रोवर 30 किमी से अधिक दूरी तय करके अभी तक सक्रिय है। लेखक के अनुसार 6 अगस्त 2012 को क्युरियासिटी रोवर को मंगलग्रह पर उतारने की सूचना अधिक उत्साहवर्द्धक थी क्योंकि इससे मंगल के अब तक कई अज्ञात पहलुओं का अध्ययन करना था जिसमें प्रयोग द्वारा जैविक संभावना, भूतत्व की विशेषता की जाँच, वहाँ की वायुमंडल के क्रमिक विकास का आकलन, सतह पर पड़ने वाले रेडियेशन की विशेषताओं को ज्ञात करना और वहाँ पाये जाने वाले तत्वों का पता लगाना शामिल था। तत्वों का स्पेक्ट्रम प्राप्त करने की यह विधा **'इन्डूस्ड ब्रेकडाउन स्पेक्ट्रोस्कोपी'** कही जाती है। लेखक इससे निकलने वाले लेजर के विषय में कहता है–'इस इन्फ्रारेड लेजर की किरण कुछ नैनोसेकन्ड के स्पन्द के रूप में निकलती है मगर इसका पावर 10 लाख वाट के प्रकाश स्रोत के बराबर होता है।' **क्यूरियासिटी** में लगे स्पेक्ट्रोमीटर की क्षमता के बारे में कथन है कि – 'स्पेक्ट्रोमीटर दृश्य प्रकाश के साथ ही साथ अल्ट्रावायोलेट एवं इन्फ्रारेड के अदृश्य प्रकाश का भी स्पेक्ट्रम रिकार्ड करने में सक्षम है तथा कुल मिलाकर यह 6144 स्पेक्ट्रमी रेखाएँ एक साथ रिकार्ड कर सकता है।... लिब्स की स्पेक्ट्रमी रेखाओं के अध्ययन से स्पष्ट है कि सिलिकान, मैग्नीसियम, सोडियम, कैल्सियम, आयरन, अल्यूमिनियम आदि तत्व पृथ्वी की ही भांति मंगल पर भी मौजूद हैं।'

पुस्तक के आवरण मुखपृष्ठ पर आइंसटीन की काल–अंतराल जाल की विकृति को प्रदर्शित करने वाले क्रोड में स्वयं पांव फैलाकर अधलेटे आइंसटीन का रंगीन व्यंग्य चित्र है जिसमें वे मूँछ के नीचे मुस्कराते हुए, विजयी मुद्रा में बंद मुट्ठी से अंगूठा दिखाते हुए प्रदर्शित हैं, मानों वे कह रहे हैं ''मैंने इसे कर लिया'। वास्तव में यह पृष्ठ ही पुस्तक में निहित लेखों में वैज्ञानिक गुरुत्व और लेखन की सफलता का प्रतीक जैसा है। पुस्तक छात्रों, अनुसंधान–कर्ताओं और सभी विज्ञान प्रेमियों द्वारा प्रयोज्य है। पुस्तक के लेखक, सम्पादक एवं प्रकाशक को ऐसे उपयोगी प्रकाशन के लिए बधाई।

डॉ. राजेंद्र प्रसाद मिश्र

सहायक सम्पादक, विज्ञान पत्रिका, विज्ञान परिषद प्रयाग
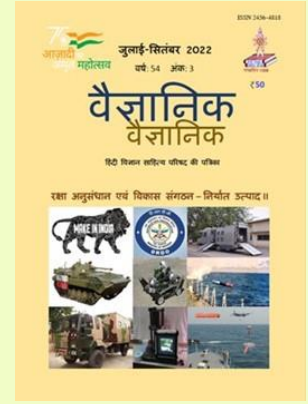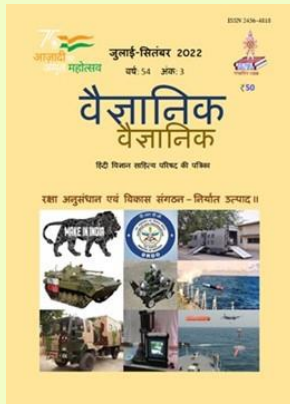
मनोगत

बहुत अच्छी लगी आपकी पत्रिका, बहुत बहुत बधाई.

पद्मा मिश्रा, जमशेदपुर

अति सुन्दर

डॉ. टी वी वेंकटेश्वरन, वैज्ञानिक एफ, विज्ञान प्रसार, विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, नई दिल्ली

उत्कृष्ट पत्रिका के लिए आपको हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएं.

सभी विज्ञान पत्रिकाएं लेखकों को उचित मानदेय प्रदान करती हैं. कृपया आप अपनी पत्रिका में भी लेखों के लिए कुछ मानदेय निर्धारित करें तो पत्रिका का मान और प्रतिष्ठा बढ़ेगी और लेखकों को भी उनकी मेहनत का कुछ फल प्राप्त होगा, जिससे वे लेखन के लिए और अधिक प्रोत्साहित हो सकेंगे.

रंजना मिश्रा, कानपुर, उत्तर प्रदेश

प्रिय संपादक जी

वैज्ञानिक पत्रिका का ताज़ा अंक बेहद आकर्षक कलेवर में मुझे प्राप्त हुआ. सादर अभिनन्दन.

सभी लेख सारगर्भित और महत्वपूर्ण जानकारी से भरपूर है.

निश्चय ही, अपनी यह पत्रिका मैं अपने सभी संपर्कों को प्रेषित कर रहा हूं. आपको अवगत करना था कि प्रो. रमेश सोमवंशी बरेली से ही मेरे 40 वर्ष पुराने मित्र और शुभचिंतक है.

पुनः आपके इस अथक प्रयास के लिए साधुवाद.

प्रो. डॉ. सुबोध भटनागर, सदस्य, संपादक मंडल.

अत्यन्त सार्थक प्रयास. धन्यवाद.

मुकेश लाल शाह

उत्कृष्ट. आपने एक सराहनीय कार्य किया है. बधाई हो.

डॉ. डेज़ी जोसेफ

बधाई. अच्छा प्रकाशन. शुभकामनाएँ.

डॉ. जी.पी. कोठियाल,
पूर्व मुख्य सम्पादक, वैज्ञानिक.

श्रीमान,

साझा करने के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद. वैज्ञानिक के इस संस्करण के सभी लेख बहुत जानकारीपूर्ण और उपयोगी हैं. विशेष रूप से उल्लेख करना चाहूँगा - डीआरडीओ पर आपके लेख का और डॉ. कोहली द्वारा ब्लॉक-चेन पर. स्वास्थ्य और कृषि सहित करंट अफेयर्स पर लेखों का चयन करने के लिए आपको बधाई.

सादर

मधुसूदन, वै.अ. एफ, एसएमएफ, भा.प.अ.के., मैसूरु

प्रिय डॉ. सिंह,

पत्रिका के जुलाई-सितंबर अंक को साझा करने के लिए आपका बहुत-बहुत धन्यवाद।

मुझे यह बेहद पसंद आया। साभार,

प्रो. डॉ. दीपक प्रसाद सुबेदी

विज्ञान विद्यालय, काठमांडू विश्वविद्यालय, नेपाल

बहुत सुंदर और प्रभावी अंक. शुभकामनाएं.

ज्योति खरे

प्रिय कुलवंत जी
वैज्ञानिक जुलाई-सितंबर 2022 अंक भेजने के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद. वैज्ञानिक के अत्यंत ज्ञानवर्धक और सामयिक प्रकाशन के लिए आपको बधाई.
मुझे परामर्शदाता में शामिल करने के लिए मैं आपका आभारी हूं. धन्यवाद,
प्रो. आर. सोमवंशी, पशु रोग विशेषज्ञ,
पूर्व इमेरिटस प्रोफेसर, भाकृअप-भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, बरेली.

प्रिय डॉ. कुलवंत
वैज्ञानिक पत्रिका के लिए धन्यवाद.
आपको और वैज्ञानिक टीम को शानदार काम के लिए बधाई.
वैसे तो सभी लेख अच्छे हैं फिर भी आपका लेख बहुत अच्छा लिखा गया है.
कविताएँ भी बहुत अच्छी हैं.
इसे जारी रखो. शुभकामनाएँ और सादर,
डॉ. प्रमोद भागवत,
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद

महोदय,
"वैज्ञानिक" का जुलाई-सितंबर 2022 अंक मिला। सचमुच अत्यंत उपयोगी, ज्ञानवर्द्धक एवं सामयिक सामग्री का प्रकाशन इस अंक में हुआ है. इसके लिए पूरी संपादकीय टीम बधाई की पात्र है. पत्रिका के प्रकाशन में जो परिश्रम लगा है वह स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर हो रहा है. और भी ज्ञानवर्द्धक एवं रुचिकर विज्ञान-विषयक आलेखों/रचनाओं के साथ "वैज्ञानिक" के आगामी अंक निकलेंगे, इस आशा एवं शुभकामना के साथ.-
सादर,
डॉ. प्रदीप कुमार मुखर्जी

उपयोगी जानकारियों से परिपूर्ण महत्वपूर्ण अंक. बधाई, डॉ कुलवंत सिंह जी.
डॉ. के.एन. पांडे

जी हार्दिक आभार आदरणीय! सुप्रतिष्ठित त्रैमासिक "वैज्ञानिक" पत्रिका के जुलाई-सितंबर 2022 अंक में प्रकाशित लेख अत्यन्त ज्ञानवर्धक एवं रोचक हैं. लाल पांडा के महत्व एवं संरक्षण, बाघों का प्रकृति में योगदान, कॉस्मिक किरणों की जानकारी जैसे विविध विषयों पर बेहद ज्ञानप्रद लेख पढ़ने को मिले. जेम्स वेब टेलीस्कोप द्वारा लिये गये ब्रह्मांड के अद्भुत चित्रों को देखकर वैज्ञानिक आनंद प्राप्त हुआ. "विज्ञानकु" विधा जनमानस में वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास हेतु एक सरल, सहज व रोचक विधा है. सचमुच हिन्दी भाषा में वैज्ञानिक ज्ञान के प्रचार-प्रसार हेतु संकल्पबद्ध ये पत्रिका लेखकों, पाठकों, शिक्षकों, विद्यार्थियों हेतु अत्यन्त उम्दा अध्ययन स्रोत है।
हरेन्द्र श्रीवास्तव (पर्यावरण शोधकर्ता एवं विज्ञान लेखक), प्रयागराज, उत्तर प्रदेश

अति सुन्दर एवं नवीनतम जानकारी से परिपूर्ण अकन के लिए डॉ. कुलवंत सिंह और हमारे संपादन मंडल के सदस्यों को बधाई.
दीनानाथ सिंह

वैज्ञानिक पत्रिका का नवीनतम अंक प्राप्त हुआ. आपके प्रयास सराहनीय एवं सार्थक हैं. विज्ञान लेख जानकारी से परिपूर्ण. मेरा अभिवादन.
वर्णा श्रीवास्तव

बहुत-बहुत धन्यवाद.
पत्रिका के प्रकाशन से जुड़े सभी लोगों को हार्दिक बधाई.
राजू पांडे, भाविनी

पत्रिका का जुलाई -सितंबर अंक मिला. कई लेख अच्छे और रुचिपूर्ण हैं. बच्चों के लिए विज्ञान स्तंभ अच्छा था. इसे आपने बंद क्यों कर दिया? सारगर्भित अंक के लिए आपका हार्दिक अभिनन्दन. सादर,
अंजुरी श्रीवास्तव.

इस अंक में गुणवत्ता और सुंदर लेखन का समायोजन है. सभी सहभागियों को मंगलकानायें! संग्रहणीय अंक. आभार और धन्यवाद.
सुभाष चंद्र लखेड़ा

'वैज्ञानिक' का जुलाई-सितम्बर, 2022 अंक का पीडीएफ मिला. सामग्री काफी अच्छी लगी. संपादक को बहुत-बहुत बधाई एवं शुभकामनाएँ.
अंकुश्री

श्रीमान,
वैज्ञानिक पत्रिका की इलेक्ट्रॉनिक कॉपी उपलब्ध कराने के लिए आपका बहुत-बहुत धन्यवाद. क्या 1922 में पैदा हुए प्रो. जी.एस. लड्डा, केमिकल इंजीनियर पर कोई लेख है? वह 2022 में जन्म-शताब्दी वाले वैज्ञानिकों में से एक हैं. सादर.
श्रीमती अनघा शिरालकर

वैज्ञानिक पत्रिका में चाय के बारे में पढ़ा. मैं करीब करीब चाय छोड़ चुका था, फिर शुरू कर दी. दरअसल चाय की बनाने की विधि आम लोगों को ठीक तरह से मालूम नहीं है.
नरेन्द्र करनानी जी का कोलेस्ट्राल के बारे मे लिखा लेख भी पढा, सरल भाषा में विस्तृत जानकारी दी गई है.
पाठक को ध्यान से पढ़ कर लाभ उठाना चाहिए. कुलवंत जी धन्यवाद और आभार, शुभकामनाएं.
सत्य बाबू सेट्टी

मान्यवर,
वैज्ञानिक जुलाई-सितंबर 2022 अंक की ई-प्रति मिल गई है. पत्रिका की तरफ लोगों का रूझान बढ रहा है. यह बड़ा ही सुखद संकेत है. पत्रिका की प्रति भेजने के लिए आभार ज्ञापित करता हूँ.
सादर, **अरुण कुमार झा 'विनोद'**, बेंगलुरू

श्रीमान, शुभकामनाएँ!
इस बहुत उपयोगी पत्रिका को साझा करने के लिए धन्यवाद और मैं जल्द ही एक लेख प्रस्तुत करने की योजना बना रहा हूं.
सम्मान के साथ,
डॉ. जितेंद्र सिंह बुटोला

प्रिय डॉ कुलवंत,
नया अंक मिला. मैंने संपादकीय और कई लेख पढ़े हैं. लेख श्रेष्ठ और उत्तम हैं. चिकित्सा विशेषज्ञ के लेख और डॉ. विजन कुमार पांडे का लेख विशेष रुचि का था. लोगों ने लेख तैयार करने में काफी मेहनत की है. विषय विशेषज्ञ अत्यंत जानकारीपूर्ण योगदान दे रहे हैं और सर्वोत्तम गुणवत्ता वाली सामग्री अब वैज्ञानिक में वास्तविकता है. विज्ञान/प्रौद्योगिकी द्वारा बनाई गई अद्भुत चीजों के रंगीन फोटो पाठकों को आकर्षित करते हैं. हंगुल, चिरू, शाहतोष और पश्मीना पर यदि लेख प्रकाशित कर सकें तो लेख दिलचस्प होंगे. सादर, **सलाहुद्दीन अहमद, मुंबई**

प्रिय कुलवंत जी,
वैज्ञानिक के जुलाई-सितंबर 2022 अंक के लिए आभार. विविध विषयों पर जानकारीपरक आलेखों के कारण यह अंक बहुत उपयोगी है. ज्ञान के विविध क्षेत्रों से संबंधित आलेखों का सुंदर आयोजन किया गया है। रंगीन चित्रों से आलेखों का आकर्षण भी बढ़ गया है. आशा है भविष्य में लेखकीय अवदान भी कर सकूंगा. सादर,
अरविंद मिश्र

प्रिय डॉ. सिंह,
धन्यवाद वैज्ञानिक जुलाई -सितम्बर, 2022अंक साझा करने के लिए. विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हुई ताज़ा उपलब्धियों पर आधारित संपादकीय प्रेरक है. बाघ संरक्षण, मस्तिष्क का दौरा, पर्यावरण प्रदूषण, मंकीपॉक्स का खतरा, डीआरडीओ निर्यात उत्पाद, उच्च कोलेस्ट्रॉल के लक्षण, आदि जैसे सभी विषयों के लेख सूचनाप्रद हैं. सम्पूर्ण अंक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक जानकारियों से परिपूर्ण एक आकर्षक प्रस्तुति है. आपके कुशल सम्पादन को साधुवाद आपकी टीम को भी बधाई और साधुवाद. सादर. आपका शुभेच्छु,
कृष्णा नन्द पाण्डेय, नोएडा

बड़ी अच्छी पत्रिका है. विषय सामयिक, रोचक, अद्यतन, भाषा अनुकूल है. बधाई. **बरुन कुमार**

बहुत अच्छी पत्रिका. मौलिक लेख.
अमलशेखर करणसेठ

ग्रहों की घूर्णन गति

डॉ. रश्मि वार्ष्णेय

ब्रह्मांड में सभी ग्रह अपनी-अपनी कक्षा के साथ-साथ अपनी-अपनी धुरी पर भी घूमते हैं और उनके घूमने का समय उनकी स्थितियों के अनुसार भिन्न-भिन्न होता है. इसीलिए हमारे सौर मंडल के ग्रहों पर भी एक दिन की अवधि में पर्याप्त अंतर दिखाई देता है, जैसे : बुध पर 1,408 घंटों का, शुक्र पर 5,832 घंटों का, पृथ्वी पर 24 घंटों का, मंगल पर 25 घंटों का, बृहस्पति पर 10 घंटों का, शनि पर 11 घंटों का, यूरेनस पर 17 घंटों का और नेप्च्यून पर 16 घंटों का दिन होता है.
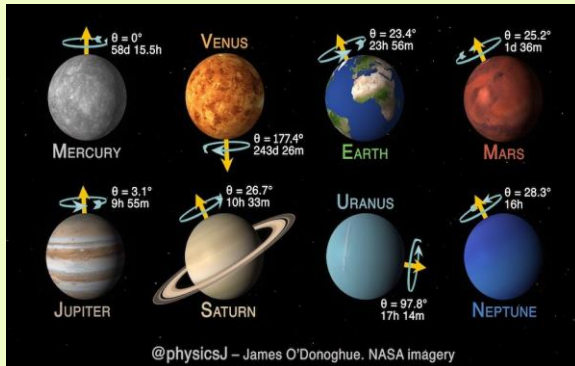
ग्रहों के घूर्णन की गति में कभी-कभी विचलन दिखाई देता है. उदाहरण के लिए वर्ष 2022 में 29 जुलाई को पृथ्वी ने अपनी सामान्य गति बढ़ा दी थी और अपनी धुरी पर परिक्रमा 1.59 मिली सेकेन्ड से कम समय में पूरी की थी, जिसकी वजह से वह दिन सर्वाधिक छोटा दिन हो गया. समय से पहले ही अपनी धुरी पर घूमने वाली इस परिघटना का पता पहले भी चलता रहा है. वर्ष 1960 के बाद वर्ष 2020 की जुलाई में ही 19 तारीख को पृथ्वी ने 24 घंटे से 1.47 मिली सेकेन्ड पहले अपनी परिक्रमा पूरी की थी. उसका यह क्रम अगले वर्ष भी जारी रहा था, लेकिन तब इसकी गति अधिक होते हुए भी इतनी अधिक नहीं थी कि कोई कीर्तिमान बना पाती. लेकिन अब तीन वर्षों की हैट्रिक जरूर बन गई है.

इस नैसर्गिक पिंड की गति की तेजी का प्रत्यक्षत: अभी पृथ्वी पर कोई विशेष परिवर्तन दिखाई नहीं दिया है. लेकिन यही स्थिति बनी रहती है, तो पृथ्वी संबंधी जानकारी को अद्यतन करने की आवश्यकता पड़ेगी. इन्टरेस्टिंग इंजीनियरिन्ग (आई ई) इसे लघुतर दिवसों के 50 वर्षीय युग का आरंभ मानता है.

यह अंतर मिलीसेकेन्ड में होने के कारण आम लोगों को इसका पता नहीं चलता है, लेकिन विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में इसका यथेष्ट महत्व होता है. दीर्घकाल में इसका प्रभाव दृष्टिगोचर होने लगता है क्योंकि ये मिलीसेकेन्ड प्रतिवर्ष इकट्ठा होते हुए पूरा एक सेकेन्ड बन जाते हैं और 24 घंटों की गणना पद्धति में एक सेकेन्ड का कम होना विसंगति उत्पन्न कर देता है. यदि विश्व की घड़ियों के बीच का तुल्यकालन अर्थात् तालमेल गड़बड़ा जाये, तो समूची संचार व्यवस्था चरमरा जायेगी.

पृथ्वी के घूर्णन की गति में अंतर का कारण स्पष्ट नहीं है. लेकिन भिन्न-भिन्न अनुमान लगाये गये हैं. संभवत: यह इसके क्रोड के अभ्यंतर या बाहरी परतों में होने वाली क्रिया-अभिक्रिया के कारण हुआ हो, समुद्र या इसके ज्वार-भाटों के कारण हुआ हो, जलवायु परिवर्तन के कारण हुआ हो, आदि-इत्यादि. अमेरिका के जियोफिजिकल रिसर्च लैटर के अनुसार, वैश्विक तापन के चलते हिमनद (ग्लेशियर) इतने अधिक पिघले हैं कि पृथ्वी की धुरी के घूर्णन की

गति वर्ष 1990 से लगातार बढ़ती चली गयी है. जलवायु परिवर्तन के कारण जलमंडल में परिवर्तन से उत्तरी ध्रुव पूर्व की तरफ सरकता रहा है और पिछले चार दशकों में लगभग 4 मीटर तक खिसक चुका है.

अपनी धुरी पर पृथ्वी के घूर्णन दर में मामूली-सा विचलन भी पृथ्वी की घूर्णन गति बढ़ाने और दिन की अवधि घटाने का कारक घटक हो सकता है, जिसे शैन्डलर प्रचक्रण (वाब्बल) कहा जाता है. ऐसे शैन्डलर प्रचक्रण मंगल ग्रह में भी देखे गये हैं. यह प्रचक्रण घूर्णन की कक्षा के झुके हुए होने के कारण भी होता है. इसीलिए झुकाव के कोण में परिवर्तन होने पर घूर्णन समय में भी परिवर्तन होता है.

इस वर्धित घूर्णन-गति के फलस्वरूप सूर्य की परिक्रमा करने के लिए पृथ्वी की कक्षीय गति को परमाण्विक घड़ी के अनुसार बनाये रखने के लिये इसकी क्षतिपूर्ति करनी पड़ेगी और इसके लिए नकारात्मक अधिक्षण (लीप सेकेन्ड) या पात-क्षण (ड्रॉप सेकेन्ड) जोड़ना पड़ेगा. सार्व निर्देशांकित काल (यूटीसी) ने पहले भी 27 बार अधिक्षण का अद्यतन किया है. पूरी दुनिया में इसी से समय और घड़ी का विनियमन किया जाता है. लेकिन इसके प्रभाव का व्यापक परीक्षण अभी तक नहीं किया गया है.
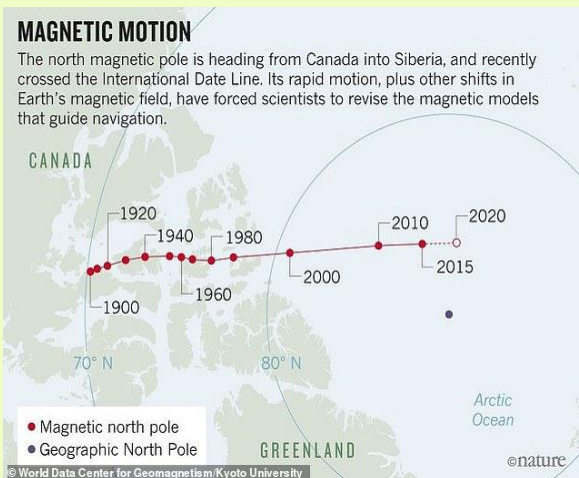
डिजीटल घड़ियों और इससे संबद्ध सभी गतिविधियों पर भी इसका प्रभाव पड़ेगा क्योंकि यह 23:59:59 के बाद 23:29:60 होता है और उसके बाद 00:00:00 होता है. समय की ऐसी छलाँग से आँकड़ों के भंडारण पर समय-मुद्रांक होने पर, सॉफ्टवेयर प्रोग्राम क्रैश हो सकते हैं, आँकड़े करप्ट हो सकते हैं, इंटरनेट ठप्प हो सकता है और उपग्रह प्रभावित हो सकते हैं.
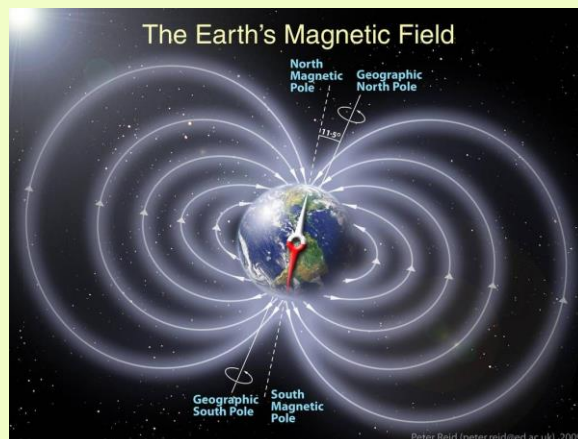
वैसे दीर्घ काल में तरंग सदृश परिवर्तन के रूप में इसके पुनः धीमे हो जाने की भी संभावना है, क्योंकि दोलन शून्य के दोनों तरफ होता है. वर्ष 1910, 1970 तथा 1980 में भी घूर्णन गति में ऐसी तेजी देखी गई थी, लेकिन इसके बाद यह गति मंद हो गई थी. यदि दोलन केवल एक ही दिशा में होता, तो यह चिंता का विषय हो सकता था. इसी तरह यदि हिमनद (ग्लेशियर) पृथ्वी के केवल एक ही तरफ पिघलता रहे, तो पृथ्वी का संतुलन बिगाड़ सकता है, जिससे उसकी घूर्णन गति प्रभावित हो सकती है.
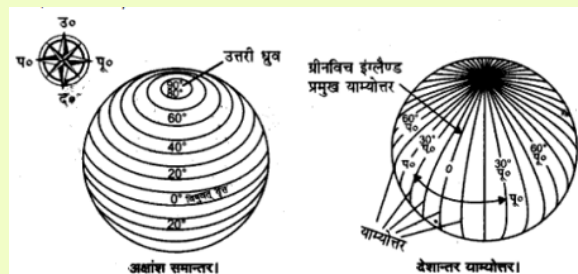
पृथ्वी की घूर्णन गति की तीव्रता के साथ ही पृथ्वी के समय संबंधी विसंगतियों का निराकरण भी तीव्रतापूर्वक अग्रिम रूप से करने की आवश्यकता है. लेकिन इसके माध्यम से अन्य ग्रहों में भी इसी तरह के विचलनों की गणना करने तथा उन्हें समझने का मार्ग प्रशस्त हो सकता है, जिससे ब्रह्मांड को बेहतर ढंग से समझा जा सकता है.

संदर्भ :

https://en.wikipedia.org/wiki/Chandler_wobble
https://spaceplace.nasa.gov/days/en/

सोलर रूफ़टॉप योजना

अपने ग्रुप हाउसिंग में सौर ऊर्जा को अपनाना है
प्रदूषण को कम करने के साथ पैसा बचाना है

- अपने ग्रुप हाउसिंग में सोलर पैनल लगाएं और बिजली पर होने वाले खर्च को 30 से 50 प्रतिशत तक कम करें।
- सोलर पैनल से बिजली 25 साल तक मिलेगी और इसको लगाने के खर्च का भुगतान 5–6 वर्षों में हो जाएगा। इसके बाद अगले 19–20 वर्षों तक सोलर से बिजली का लाभ मुफ़्त मिलेगा।
- 500 **kW** तक के सोलर प्लांट को लगवाने पर 20 प्रतिशत की सब्सिडी केंद्र सरकार द्वारा मिलेगी।
- सोलर प्लांट स्वयं लगाएं या **RESCO** मॉडल (जिसमें निवेश आपकी जगह **Developer** करेगा) पर लगवाएं।
- 1 **kW** सौर ऊर्जा के लिए 10 वर्ग मीटर जगह की ज़रूरत होती है।

इसके लिए आप विद्युत वितरण कंपनी के निकटतम कार्यालय से संपर्क करें।

अधिक जानकारी के लिए **https://mnre.gov.in** विज़िट करें

सोलर रूफ़टॉप योजना

अपने घर में सोलर पैनल लगाएं
पर्यावरण और पैसे बचाएं

- अपने घर की छत पर सोलर पैनल लगाएं और बिजली पर होने वाले खर्च को 30 से 50 प्रतिशत तक कम करें।
- सोलर पैनल से बिजली 25 साल तक मिलेगी और इसको लगाने के खर्च का भुगतान 5–6 वर्षों में हो जाएगा। इसके बाद अगले 19–20 वर्षों तक सोलर से बिजली का लाभ मुफ्त मिलेगा।
- 1 **kW** सौर ऊर्जा के लिए 10 वर्ग मीटर जगह की ज़रूरत होती है।
- 3 **kW** तक के सोलर प्लांट पर 40 प्रतिशत की सब्सिडी और 3 **kW** के बाद 10 **kW** तक 20 प्रतिशत की सब्सिडी केंद्र सरकार द्वारा मिलेगी।

इसके लिए आप विद्युत वितरण कंपनी के निकटतम कार्यालय से संपर्क करें।

अधिक जानकारी के लिए **https://mnre.gov.in** विज़िट करें

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद, 2601, विंग-3, लोढ़ा अमारा, कोलशेट रोड, ठाणे-400607 के लिए डॉ. कुलवंत सिंह द्वारा संपादित एवं प्रकाशित. मुख्य व्यवस्थापक: श्री धर्मराज मौर्य. मुद्रण: ऑनलाइन.